BACHELOR OF ARTS

(B.A.)

PUBA 102

(Public Administration)

(Semester –II)

Directorate of Distance Education

Guru Jambheshwar University of Science & Technology

HISAR-125001

PUBA 102

CONTENTS

No.	Title	Author	Editor	Page/s
1.	**(Classical Theories of Organization)** Scientific Management (F. W Taylor) and Administrative Management (Fayol, Gullick, Urwick and Others)	Dr. Parveen Sharma	Dr. Shakuntla Devi	2-33
2.	Ideal-Type Bureaucracy (Max Weber)	Dr. Parveen Sharma	-do-	34-59
3.	**(Neo-Classical & Motivational Theories)** Human Relations Theory (Elton Mayo) and Rational Decision-Making (Herbert Simon)	Dr. Parveen Sharma	-do-	60-85
4.	Maslow's Hierarchy of Needs (Abraham Maslow) and Two-Factor Theory (Herzberg)	Dr. Parveen Sharma	-do-	86-112
5.	**(Contemporary Theories)** Ecological Approach (Fred Riggs), Innovation and Entrepreneurship (Peter Drucker)	Dr. Parveen Sharma	-do-	113-150
6.	Models of Decision-Making (March & Olsen and Richard Thaler)	Dr. Parveen Sharma	-do-	151-172
7.	**Emerging Perspectives** Feminist Perspectives	Dr. Parveen Sharma	-do-	173-197
8.	**New Public Management** (NPM), New Public Service (NPS)	Dr. Parveen Sharma	-do-	198-218
9.	**Public Policy:** Concept, relevance and Approaches ,Formulation, Implementation and Evaluation (Special reference to India)	Dr. Parveen Sharma	-do-	219-244

Edited by: Dr. Shakuntla Devi,

Programme Coordinator (BA)

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 1	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
वैज्ञानिक प्रबंधन (एफ. डब्ल्यू टेलर) और प्रशासनिक प्रबंधन (फेयोल, गुलिक, उर्विक और अन्य) (Scientific Management (F.W Taylor) and Administrative Management (Fayol, Gullick, Urwick and Others)	

अध्याय की संरचना--

1-3-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

1-2-परिचय (Introduction)

1-3- अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

1-3-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Scientific Management)

1-3-2-वैज्ञानिक प्रबन्ध की विशेषताएँ (Characteristics of Scientific Management)

1-3-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives of Scientific Management)

1-3-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त (Principles of Scientific Management)

1-3-5-वैज्ञानिक प्रबन्ध के लाभ (Advantages of Scientific Management)

1-3-6-वैज्ञानिक प्रबन्ध की आलोचना (Criticism of Scientific Management)

1-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

1-4-3-संगठन की परम्परावादी विचारधारा का अर्थ और परिभाषाएं(Meaning and Definitions of Classical Theory of Organization)

1-4-2-संगठन की परम्परागत विचारधारा के मुख्य बिंदु (Major points of classical theory of Organisation)

1-4-3-हेनरी फेयोल के विचार (Henry Fayol's views)

1-4-4-लूथर गुलिक के विचार (Luther Gullick's views)

1-4-5-लिंडोल उर्विक के विचार (Lyndol Urwick views)

1-4-6-मूने तथा रैले के विचार(Views of Money and Railey)

1-4-7-संगठन की परम्परावादी विचारधारा की आलोचना (Criticism of the Classical Theory of Organisation)

1-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

1-6-सारांश (Summary)

1-7-सूचक शब्द (Key Words)

1-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

1-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

1-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

1-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

(i) विद्यार्थियों को वैज्ञानिक प्रबन्ध संगठन सम्बन्धी विचारधारा से अवगत करवाना।

(ii) विद्यार्थियों को वैज्ञानिक प्रबंधन (एफ. डब्ल्यू टेलर) से अवगत करवाना।

(iii) विद्यार्थियों को प्रशासनिक प्रबंधन संगठन सम्बन्धी विचारधारा से अवगत करवाना।

(iv) विद्यार्थियों को प्रशासनिक प्रबंधन (फेयोल, गुलिक, उर्विक और अन्य) से अवगत करवाना।

(v) विद्यार्थियों को वैज्ञानिक प्रबंधन व प्रशासनिक प्रबंधन के सकारात्मक व नकारात्मक पक्ष से अवगत करवाना।

(vi) विद्यार्थियों को संगठन के सिद्धांतों से अवगत करवाना।

1-2-परिचय (Introduction)

वैज्ञानिक प्रबन्ध संगठन सम्बन्धी प्रथम व्यवस्थित विचारधारा है। वैज्ञानिक प्रबन्ध की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग 1910 ई० में लुई ब्रेडी (Louis Bradeis) ने किया था। जर्मन विद्वान फ्रेडरिक विंस्लो टेलर (Fredrick Winslow Taylor) को वैज्ञानिक प्रबन्ध का जनक माना जाता है। टेलर द्वारा 1911 में प्रकाशित पुस्तक 'वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त' का वैज्ञानिक प्रबन्ध में महत्त्वपूर्ण योगदान है। वैज्ञानिक प्रबन्ध औद्योगिक युग की उत्पत्ति है और इसका विकास 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ था। प्रारम्भ में कारखानों और उत्पादन केन्द्रों में नियोजन का विकास नहीं हुआ था। श्रमिक अपने कार्य करने के लिए पद्धति के चयन में पूर्ण स्वतन्त्र थे और ये काम करने के लिए अपने उपकरण स्वयं लाते थे। प्रबन्धक इस बात की चिंता नहीं करते थे कि श्रमिकों के काम करने की पद्धति और काम करने के उपकरण उचित है या नहीं। टेलर ने इस व्यवस्था की आलोचना की और उसने औद्योगिक क्षमता में वृद्धि करने के लिए व्यवस्थित पद्धति के प्रयोग का सुझाव दिया। टेलर का कथन है कि "प्रबन्ध सच्चा विज्ञान है जो सुनिश्चित विधियों, नियमों, सिद्धान्तों पर आधारित है।"

टेलर ने कार्य को परम्परागत व्यवस्था के स्थान पर आधुनिक एवं वैज्ञानिक विचारधारा का प्रतिपादन किया। उन्होंने वैज्ञानिक प्रबन्ध, उत्पादकता तथा श्रमिक आदि अनेक विषयों पर अध्ययन किए। टेलर ने इस बात का भी अध्ययन किया कि उद्योगों में कार्यकुशलता किस प्रकार बढ़ाई जा सकती है। उन्होंने समय अध्ययन ,गति अध्ययन ,तथा थकान अध्ययन ,आदि पर भी कई अध्ययन । टेलर ने इस इस बात पर प्रकाश डाला है कि संगठन के अन्तर्गत कार्यों को नियोजन तथा कार्यात्मक (Planning and Functional) के रूप में दो भागों में बांटा जा सकता है। नियोजन के अन्तर्गत उच्च प्रबन्धक वर्ग विभिन्न विषयों पर सोच-विचार का कार्य करता है। जबकि कार्यात्मक वर्ग में श्रमिक वर्ग सम्मिलित होता है जो मशीनों के साथ काम करता है। टेलर पूर्णतया एक औपचारिक संगठन का पक्षधर था। वह एक अच्छे प्रबन्धक में उन सब गुणों को रखने की बात करता है जो उत्पादन को अधिक-से-अधिक करे तथा वैज्ञानिक रीति से कार्य करवाए। संगठन की वैज्ञानिक विचारधारा पर अत्यधिक बल देने के कारण हो टेलर को वैज्ञानिक प्रबन्ध का जन्मदाता तथा कार्यकुशलता को बढ़ाने वाला कहा जाता है।

1-3- अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

1-3-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध का अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Scientific Management)

वैज्ञानिक प्रबंध दो शब्दों से मिलकर बना है वैज्ञानिक+प्रबंध। “वैज्ञानिक” से तात्पर्य है विज्ञान संबंधित तथा “प्रबंधन” से तात्पर्य किसी कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने की विधि। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रबंध का अर्थ है की विशिष्ट ज्ञान से किसी कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से चलाना । वैज्ञानिक प्रबन्ध ,प्रबन्ध की पुरानी एवं परम्परागत पद्धतियों के स्थान पर वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करना वैज्ञानिक प्रबन्ध एक विचारधारा एवं दर्शन है जो कि परम्परागत कार्य करने व करने के 'अंगूठा के नियम' (Rule of Thumb) का विरोधी है।

इसके अन्तर्गत किसी भी औद्योगिक संस्थान में काम करने तथा श्रमिकों से काम लेने के वैज्ञानिक ढंग को शामिल किया जाता है ताकि सम्बन्धित औद्योगिक संस्थान की सभी समस्याएं दूर हो जाएं। इसमें अनुसन्धान एवं प्रयोग, आंकड़ों को एकत्रित व आंकड़ों का विश्लेषण तथा उनके आधार पर सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है। वैज्ञानिक प्रबन्ध की विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न परिभाषाएं दो हैं, जिनमें मुख्य हैं:-

(i) **टेलर (Taylor)** के अनुसार**,** "वैज्ञानिक प्रबन्ध यह जानने की कला है कि आप व्यक्तियों से क्या करवाना चाहते हो तथा यह देखना कि वे सबसे उचित व सस्ते ढंग से कार्य करते हैं।

(ii) **हार्लो पर्सन (Harlo Person)** के अनुसार, "वैज्ञानिक प्रबन्ध उद्देश्यपूर्ण एवं संयुक्त की प्रक्रिया है जो कि वैज्ञानिक अध्ययन द्वारा बनाए गए नियमों एवं सिद्धान्तों पर आधारित होती है न कि तीर तुक्के पर।

(iii) **लॉरेन्स ए० एप्पली (Lawrence A. Apply)** के विचारानुसार, "वैज्ञानिक प्रबन्ध जिसे नियोजित प्रबन्ध कहा जाता है, प्रतिदिन के अंगूठे के नियम एवं तीर नहीं तो तुक्का ही सही के विपरीत प्रबन्ध के उत्तरदायित्वों के निष्पादन का एक चेतनापूर्ण एवं व्यवस्थित मानवीय दृष्टिकोण है।

(iv) **जोन्स (Jones)** के शब्दों में, "वैज्ञानिक प्रबन्ध उत्पादन के नियन्त्रण एवं विधियों में एक नवीन अनुशासन प्राप्त करने के लिए नियमों का एक समूह है।"

(v) **पीटर एफ० ड्रकर (Peter F. Drucker)** के विचारानुसार, "वैज्ञानिक प्रबन्ध का अभिप्राय है कि कार्य का अध्ययन व्यवस्थित ढंग से किया जाए, कार्य का छोटे-छोटे भागों में विश्लेषण किया जाए और आवश्यक सुधार किए जाएं जिससे श्रमिक अपने कार्य को कुशलता पूर्वक कर सकें।

(vi) **प्रो० मार्शल (Marshall)** के अनुसार, "वैज्ञानिक प्रबन्ध मुख्य रूप से एक बड़े व्यवसाय की कर्मचारी व्यवस्था की एक विधि है, जिसका उद्देश्य अपने अधिकांश

कर्मचारियों के दायित्वों की सीमा को घटा कर उनकी कार्यकुशलता बढ़ाना है तथा साधारण शारीरिक क्रियाओं के सम्बन्ध में दिए गए आदेश पर विवेकपूर्ण अध्ययन करना है।

(vii) **लॉयल डॉड एवं लिंच (Lloyd Dodd and Lynch)** के अनुसार, "व्यापक अर्थ में वैज्ञानिक प्रबन्ध की कार्य- प्रणाली श्रमिकों, कच्चे मालों, मशीनों तथा पूंजी के प्रयोग से अधिकतम लाभ प्राप्त करना है और इसके द्वारा उत्पादन की समस्त क्रियाओं पर कारखाने के स्थानीयकरण एवं संरचना से लेकर वस्तुओं के अन्तिम वितरण तक नियन्त्रण करती है।

विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि वैज्ञानिक प्रबन्ध, प्रबन्ध समस्याओं के हल का मानवीय दृष्टिकोण है जो कि वैज्ञानिक अनुसन्धान, विश्लेषण, नियम, सिद्धान्तों एवं परिणामों पर आधारित है।

1-3-2-वैज्ञानिक प्रबन्ध की विशेषताएँ ((Characteristics of Scientific Management)

वैज्ञानिक प्रबन्ध की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं: -

i. **नियोजित व्यवस्था -** वैज्ञानिक प्रबन्ध की महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें नियोजित एवं निश्चित योजना पाई जाती है। निश्चित योजना के द्वारा ही विभिन्न कार्यों को निश्चित तरीकों से पूरा किया जाता है।

ii. **वैज्ञानिक विश्लेषण तथा प्रयोग -** वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत परिस्थितियों, घटनाओं आदि से सम्बन्धित तथ्य एकत्रित किए जाते हैं, तथ्यों का विश्लेषण किया जाता है और तथ्यों का प्रयोग किया जाता है।

iii. **साधनों का अधिकतम प्रयोग-** वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत कच्चे माल, भौतिक साधनों तथा मानवीय साधनों का प्रयोग इस ढंग से किया जाता है कि कार्यकुशलता में वृद्धि हो, अधिक उत्पादन हो तथा लागत कम हो।

iv. **उद्देश्यों की पूर्ति -**वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समस्त शक्ति लगा दी जाती है।

v. **प्रेरणात्मक मजदूरी-** वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत श्रमिकों को उनकी योग्यता के अनुसार कार्य दिया जाता है और मजदूरी इतनी दी जाती है कि श्रमिकों में कार्य करने का उत्साह बढ़े।

vi. **मानवीय दृष्टिकोण -**वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत मानवीय सम्बन्धीं पर विशेष बल दिया जाता है क्योंकि यह समझा जाता है कि बिना अच्छे मानवीय सम्बन्धों के कोई भी संस्था या औद्योगिक संस्थान कुशलता से कार्य नहीं कर सकता।

vii. **शोध में निरन्तरता** -वैज्ञानिक प्रबन्ध से अभिप्राय सुधरी हुई क्रियाओं का प्रबन्ध में प्रयोग करना है। इसके लिए निरन्तर शोध करना जरूरी है।

viii. **परिवर्तनशील प्रकृति-** वैज्ञानिक प्रबन्ध एक शोधोन्मुखी धारणा है। इसलिए इसमें गतिशीलता एवं परिवर्तनशीलता का होना स्वाभाविक है।

ix. **सहकारिता -**वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रबन्ध की सफलता के लिए पूंजी व श्रम में सहयोग व पारस्परिक स्नेह की भावना उत्पन्न की जाती है। व्यक्तिगत हित की अपेक्षा सामूहिक हित को महत्त्व दिया जाता है और सामूहिक हितों की पूर्ति सामूहिक प्रयासों से की जाती है।

x. **श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण-** वैज्ञानिक प्रबन्ध की एक अन्य विशेषता श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण। श्रमिक की कार्यकुशलता और विशिष्टीकरण के लिए श्रम विभाजन आवश्यक है।

xi. **प्रमाणीकरण-**वैज्ञानिक प्रबन्ध में प्रत्येक कार्य का प्रमाप निश्चित कर दिया जाता है।

xii. **अधिकार तथा उत्तरदायित्व**- वैज्ञानिक प्रबन्ध की एक विशेषता यह है कि इसके अन्तर्गत काम करने वाले कर्मचारियों के अधिकार तथा उत्तरदायित्व निश्चित कर दिए जाते हैं।

1-3-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives of Scientific Management)

वैज्ञानिक प्रबन्ध के मुख्य लक्ष्य तथा उद्देश्य निम्नलिखित हैं: -

i. वैज्ञानिक प्रबन्ध का अन्तिम लक्ष्य उच्च औद्योगिक क्षमता का विकास करना है।

ii. वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य कार्यकुशलता में वृद्धि करना है। इसके लिए कर्मचारियों की शिक्षा व प्रशिक्षण को उचित व्यवस्था की जाती है तथा कर्मचारियों की भर्ती वैज्ञानिक ढंग से की जाती है।

iii. टेलर के अनुसार वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य मानसिक क्रान्ति को उत्पन्न करना है।

iv. समन्वय वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य भौतिक तथा मानवीय साधनों के बीच समन्वय एवं सहयोग उत्पन्न करके उत्पादन में वृद्धि करना है।

v. वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य नेतृत्व में प्रभावशालीनता उत्पन्न करना है।

vi. वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य अनुमानों के स्थान पर निश्चित नियमों की स्थापना करना है।

vii. वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य प्रबन्ध के क्षेत्र में परम्परागत प्रबन्धकीय दृष्टिकोण को त्याग कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना है। इसमें 'अंगूठा नियम को त्याग कर वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाना है।

viii. वैज्ञानिक प्रबन्ध का लक्ष्य न्यूनतम लागत पर अधिकतम उत्पादन पैदा करना है।

ix. वैज्ञानिक प्रबन्ध का लक्ष्य लेखांकन, खरीद, भण्डार तथा योजना के सम्बन्ध में मानवीकरण करना है।

x. वैज्ञानिक प्रबन्ध का उद्देश्य श्रमिकों के लिए अभिप्रेरणाओं, सतह निर्देशों तथा आदेशों की व्यवस्था करना है।

1-3-4-वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त (Principles of Scientific Management)

टेलर तथा अन्य प्रबन्ध विशेषज्ञों द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक प्रबन्ध के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित है: -

- **मानसिक क्रान्ति (Mental Revolution)-** व्यक्ति सामग्री, मशीन तथा उत्पादन प्रक्रिया उस समय तक व्यर्थ है जिस समय तक प्रबन्धकों तथा श्रमिकों के परस्पर दृष्टिकोणों में परिवर्तन नहीं होता। प्रबन्धकों तथा श्रमिकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन करने को ही मानसिक क्रान्ति कहा जाता है। परम्परागत प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रबन्धक श्रमिकों को कामचोर तथा बेईमान समझते थे और जबकि श्रमिक प्रबन्धकों को श्रमिकों का शोषण करने वाला समझते थे। अतः दोनों का दृष्टिक एक दूसरे के विरुद्ध था। परन्तु वैज्ञानिक प्रबन्ध का सिद्धान्त यह है कि प्रबन्धकों की मजदूरों की उचित मजदूरी देनी चाहिए और उन्हें अच्छी कार्य दशाएं प्रदान करनी चाहिए और दूसरी और श्रमिकों को दिल लगा कर कार्य करना चाहिए ताकि अधिक उत्पादन हो।
- **वैज्ञानिक चयन, पदस्थापन तथा कर्मचारियों का प्रशिक्षण (Scientific Selection, Placement and Training of Workers)-** पहले उद्योगों में भर्ती का तरीका बहुत सरल था परन्तु वैज्ञानिक प्रबन्ध कर्मचारियों की भर्ती में भी वैज्ञानिक पद्धति पर बल देता है और इसके लिए उद्योगों में कर्मचारी विभाग (Personnel Dept.) की स्थापना की जाती है। कर्मचारी भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के पश्चात् भर्ती किए जाते हैं, टेलर ने वैज्ञानिक चयन पर बल देते हुए लिखा है कि, प्रत्येक श्रमिक की अपनी विशेष योग्यताएं एवं समस्याएं होती है अतः हमारा पहला कदम उचित श्रमिक का पता लगाना है ताकि श्रमिक को उसकी योग्यता के अनुसार कार्य देना चाहिए ताकि श्रमिक उत्साह से कार्य करे।

- **कार्य का वैज्ञानिक आवण्टन (Scientific Allocation of Works)-** वैज्ञानिक प्रबन्ध का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त कर्मचारियों में कार्य का वैज्ञानिक आवण्टन करना है। कर्मचारियों को कार्य सौंपते समय उनकी योग्यता, कुशलता तथा कार्य करने की इच्छा को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए।
- **प्रमाणीकरण (Standardisation)-**प्रमाणीकरण का वैज्ञानिक प्रबन्ध में विशेष महत्व है। इसमें वैज्ञानिक ,कार्य अध्ययन के आधार पर प्रमापित कार्य निर्धारित करता है है और यह देखता है कि यह दिया हुआ कार्य व्यक्तियों द्वारा पूरा किया जाता है अथवा नहीं।
- **कार्‍य अनुमान (Task Idea)-** श्रमिक अपनी योग्यता के अनुसार कार्य कर रहे हैं या नहीं यह जानने के लिए वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसका भी अनुमान लगाया जाता है। अतः प्रमाणित कार्य निर्धारित किया जाता है। प्रमापित कार्य वह है जिसे एक औसत श्रमिक अपने स्वास्थ्य को हानि पहुंचाये बिना निर्धारित समय में पूरा करक लेता है।
- **कार्यात्मकता (Functionalization)-** टेलर ने वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत कार्यात्मक संगठन के सिद्धान्त को अपनाने पर बल दिया। इससे कार्य विभाजन हो जाता है। कार्यात्मक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम कार्य देकर श्रम विभाजन व विशिष्टीकरण के सिद्धान्त का पालन किया जाता है। इस संगठन में श्रमिकों का विशेषज्ञों से सीधा सम्बन्ध होता है। इसमें प्रशासन विशेषज्ञ जैसे कि उत्पादन प्रबन्धक, वित्त प्रबन्धक, विक्रय प्रबन्धक आदि नियुक्त किए जाते हैं। टेलर ने एक कारखाने में कार्य करने वाले श्रमिकों पर आठ नायकों (Bosses) को नियुक्त करने का सुझाव दिया है। टेलर के मतानुसार कारखाना स्तर में श्रमिकों के ऊपर निम्न चार नायक नियुक्त किए जाने चाहिए:-

(i) टोली नायक (Gang Boss) टोली नायक श्रमिकों से योजनानुसार काम लेता है।

(ii) गति नायक (Mechanical Boss) - यह देखता है कि कि मशीन ठीक ढंग से चल रही है या नहीं।

(iii) मरम्मत नायक (Repair Boss) श्रमिकों को मशीनों की सफाई, मरम्मत आदि के बारे में बताता है।

(iv) निरीक्षक (Inspector) निरीक्षक इस बात की जांच करता है कि उत्पादन की गई वस्तु अच्छी है या नहीं।निरीक्षकों को अच्छी वस्तुएं बनाने के लिए निर्देश भी देता है।

टेलर के अनुसार कार्यालय या योजना विभाग में निम्नलिखित चार नायक होने चाहिए-

(i) **मार्ग निर्धारण लिपिक (Routine Clerk)** यह संस्थान में दिन-प्रतिदिन के कार्य की योजना तैयार करता है और श्रमिकों तथा नायकों को निर्देश देता है।

(ii) **आदेश कार्ड बनाने वाला लिपिक (Instruction Card Clerk)–**यह प्रत्येक कार्य के लिए निर्देश पत्र तैयार करके विभिन्न नायकों के पास इन्हें भेजने का कार्य करता है।

(iii) **समय एवं लागत लिपिक (Time and Cost Clerk)–**यह श्रमिकों द्वारा किए गए कार्य के समय के रिकार्ड प्राप्त करता है तथा उसके आधार पर श्रमिकों के वेतन तथा बोनस आदि का निर्धारण करता है।

(iv) **अनुशासक (Disciplinarian)-** अनुशासक एक रोजगार प्रबन्धक के रूप में कार्य करता है। वह कारखाने में अनुशासन बनाए रखने, शान्ति स्थापित करने, श्रमिकों के विचारों को निपटाने आदि का कार्य करता है।

- **प्रयोग (Experimentaion)-** वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत परीक्षणों अथवा प्रयोगों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। कार्यकुशलता में वृद्धि करने के लिए तथा उत्पादन की वृद्धि करने के लिए प्रयोग किए जाते हैं। ये निम्नलिखित है:-

(i) समय अध्ययन (Time Study) प्रत्येक कार्य को करने में समय लगता है और लगना चाहिए इसके रिकार्डिंग तथा अध्ययन को समय अध्ययन कहा जाता है।

(ii) गति अध्ययन (Motion Study)- वैज्ञानिक प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य कार्य करने की सब से अच्छी विधि की खोज करना है, ताकि श्रम को व्यर्थ होने से बचाया जा सके।

(iii) थकान अध्ययन (Fatigue Study) श्रमिक कार्य करते हुए थक जाता है, जिसका कार्यकुशलता व उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। टेलर ने यह पता लाने का प्रयास किया है और इसमें किस प्रकार का सुधार किया जाए कि श्रमिक कम से कम धके और अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

- **कार्य का नियोजन (Planning in the Task)**-कार्य का नियोजन वैज्ञानिक प्रबन्ध का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत प्रत्येक कार्य तथा उसकी क्रियाओं के निष्पादन हेतु योजनाएं तैयार की जाती हैं। श्रमिक इन्हीं योजनाओं के अनुसार काम करते हैं। कार्य नियोजन के अन्तर्गत चार बातों का समावेश किया जाता है (1) कार्य क्या करना है? (2) कार्य कैसे किया जाएगा? (3) कार्य कहां किया जाएगा? कार्य कब किया जाएगा? नियोजन विभाग यह कार्य करता है।
- **प्रणात्मक मजदूरी प्रणाली (Incentive Wage System)-** टेलर के मतानुसार श्रमिकों को प्रोत्साहनवर्द्धक मजदूरी देनी चाहिए ताकि श्रमिक अधिक उत्साह, लगन तथा प्रेरणा से कार्य करें। श्रमिकों को कार्यकुशलता के अनुसार वेतन देना चाहिए।
- **अच्छी कार्य की दशाएं (Good Working Conditions)-** वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अनुसार जहाँ श्रमिक काम करते हैं, वहां को काम करने की दशाएं श्रमिक को कार्यकुशलता को प्रभावित करती हैं। कार्य की दशाओं से काम करने के घण्टे कारखाने की सफाई, रोशनी पीने के पानी की व्यवस्था, कैण्टीन, विश्राम स्थल आदि शामिल हैं। अच्छे कार्य की दशाओं के कारण श्रमिकों का स्वास्थ्य ठीक रहता है तथा उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि होती है जिससे उत्पादन अधिक होता है।

- **आधुनिक मशीनों तथा उपकरणों का प्रयोग(Use of Modern Machinery and Equipments)-** वैज्ञानिक प्रबन्ध का सिद्धान्त आधुनिक मशीनों तथा उपकरणों के प्रयोग पर जोर देता है। आधुनिक मशीनों तथा उपकरणों के प्रयोग से श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है, जिससे उत्पादन अधिक होता है और अच्छी किस्म की वस्तुएं बनती हैं।
- **कुशल लागत लेखा पद्धति (Efficient Cost Accounting System)-** किसी भी उद्योग अथवा संस्थान में कुशल लागत लेखा पद्धति का होना आवश्यक है। इसके द्वारा लागत को कम करने, उत्पादन की लागत को जानने तथा वस्तुओं की कीमतें निर्धारित करने का काम किया जाता है।

1-3-5-वैज्ञानिक प्रबन्ध के लाभ (Advantages of Scientific Management)

टेलर के अनुसार वैज्ञानिक प्रबन्ध उत्पादकों, कर्मचारियों, समाज एवं राष्ट्र सभी के लिए वरदान सिद्ध होता है। वैज्ञानिक प्रबन्ध के कारण निम्नलिखित लाभ होते हैं-

- उत्पादकों को लाभ(Advantages to Producers)

(i) वैज्ञानिक प्रबन्ध में कई प्रकार के अध्ययन किए जाते हैं, जैसे-कार्य अध्ययन, गति अध्ययन, थकान अध्ययनआदि । इससे कम श्रमिक अधिक मेहनत कर सकते हैं। इस प्रकार श्रम लागत में कमी की जा सकती है।

(ii) वैज्ञानिक प्रबन्ध के कारण उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है जिस कारण श्रम विभाजन व विशिष्टीकरण अपनाया जाता है।

(iii) वैज्ञानिक प्रबन्ध में प्रत्येक कार्य वैज्ञानिक पद्धति से किया जाता है जिससे उत्पादन अधिक होता है।

(iv) वैज्ञानिक प्रबन्ध से वस्तुओं का समाजीकरण होने से वस्तुओं की अच्छी किस्म प्राप्त होती है।

(v) वैज्ञानिक प्रबन्ध से श्रम विवादों को समाप्त किया जाता है।

(vi) वैज्ञानिक प्रबन्ध से उत्पादन लागत में कमी आती है।

- श्रमिकों को लाभ (Advantages to Workers): -

(i) वैज्ञानिक प्रबन्ध में कार्य करने की दशाएं संतोषजनक होती हैं। काम करने के घण्टे निश्चित किए जाते हैं और अमिकों को आराम का समय भी दिया जाता है। श्रमिकों के भौतिक एवं मानसिक कल्याण की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(ii) श्रमिकों को काम उनकी योग्यता के अनुभव के आधार पर दिया जाता है जिस कारण अमिक कार्य को रुचि से करते हैं।

(iii) इस व्यवस्था में श्रमिक को उसके कार्य के अनुसार मजदूरी मिलती है जिस कारण वह अधिक परिश्रम करता है और इससे उसे अधिक मज़दूरी मिलती है।

(iv) वैज्ञानिक प्रबन्ध से कर्मचारियों व श्रमिकों को स्थायी रोजगार मिलता है।

(v) वैज्ञानिक प्रबन्ध से औद्योगिक दुर्घटनाओं में कमी आती है। कर्मचारियों को अपने कार्य का पूर्ण ज्ञानहोता है औरवह उन्नत तकनीक का प्रयोग करके दुर्घटनाओं की संभावनाओं को पनपने नहीं देते।

- **समाज तथा राष्ट्र को लाभ (Advantages to Society and the Nation)–**

(i) वैज्ञानिक प्रबन्ध से औद्योगिक शान्ति तथा देश का आर्थिक विकास होता है। श्रमिकों और मालिकों के मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन होने से दोनों एक-दूसरे को विरोधी न मान कर एक दूसरे से सहयोग करते हैं जिससे औद्योगिक शान्ति की स्थापना होती है। औद्योगिक शान्ति से देश का आर्थिक विकास तेजी से होता है।

(ii) वैज्ञानिक प्रबन्ध से कम लागत पर अधिकतम उत्पादन सम्भव होता है। इससे न केवल राष्ट्रीय उत्पादन में ही वृद्धिहोती है बल्कि राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि होती है।

(iii) वैज्ञानिक प्रबन्ध से देशवासियों को अच्छी किस्म की वस्तुएं कम लागत पर प्राप्त होती है जिससे उनके जीवन स्तरमें वृद्धि होती है।

1-3-वैज्ञानिक प्रबन्ध की आलोचना (Criticism of Scientific Management)

वैज्ञानिक प्रबन्ध की निम्नलिखित आधारों पर आलोचना की गई है-

i. यह धारणा स्थानी नहीं है। यह तभी तक संगत है जब तक नई खोजें होती रहे और नवीनतम उपकरणों का प्रयोग किया जाता रहे।

ii. ज्ञानिक प्रबन्ध से श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है और श्रम बचत उपायों से श्रमिकों की मांग कम हो जाती है जिससे बेरोजगारी में वृद्धि होती है।

iii. वैज्ञानिक प्रबन्ध से श्रमिकों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है परन्तु श्रमिकों को उत्पादन को वृद्धि के अनुपात में अधिक मजदूरी नहीं दी जाती। श्रमिकों का शोषण किया जाता है।

iv. वैज्ञानिक प्रबन्ध अलोकतान्त्रिक है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत क्रियात्मक नायकों के द्वारा श्रमिकों पर नियन्त्रण किया जाता है। श्रमिकों को नायकों पर निर्भर रहना है और श्रमिकों का प्रबन्धकों के साथ -सीधा सम्बन्ध नहीं होता।

v. वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत योजनाओं को तैयार करने, समय, गति एवं थकान का अध्ययन करने, मशीनीकरण, श्रम विभाजन, विशिष्टीकरण, प्रमाणीकरण, निरीक्षण आदि पर बहुत अधिक धन खर्च करना है।

vi. लघु संस्थानों के लिए उपयुक्त नहीं वैज्ञानिक प्रबन्ध का पालन बड़े उद्योगों में ही किया जा सकता है।

vii. वैज्ञानिक प्रबन्ध के अन्तर्गत श्रमिकों की कार्य दशाएं, आदि का निर्धारण वैज्ञानिक अध्ययनों के आधार पर किया जाता है जिस कारण श्रमिक संघों का महत्व कम हो जाता है। श्रमिक संघ कमजोर हो जाते हैं।

viii. वैज्ञानिक प्रबन्ध सन्तुलित दृष्टिकोण नहीं है क्योंकि यह केवल उत्पादन प्रबन्ध को महत्त्व देता है जबकि प्रबन्ध में धार्मिक प्रबन्ध, वित्तीय प्रबन्ध, विक्रय प्रबन्ध आदि का भी महत्त्व है।

ix. वैज्ञानिक प्रबन्ध यह मानकर चलता है श्रमिक आलसी तथा कामचोर है, उत्तरदायित्व से बचते हैं तथा परिवर्तन का विरोध करते हैं। इस विचारधारा को निराशावादी धारणा बताया है।

x. सता एवं उत्तरदायित्व का विभाजन उचित न होने के कारण श्रमिकों व कर्मचारियों के कार्य में शिथिलता आती है जोकि संस्थान की प्रगति में बाधक है।

वैज्ञानिक प्रबन्ध की आलोचनाओं के बावजूद भी इस विचारधारा के महत्त्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। व्यावहारिक वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए सुझावों को वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्तों में शामिल करके वैज्ञानिक प्रबन्ध के दोषों को दूर करने के उपाय किए गए हैं। सामूहिक सौदेबाजी द्वारा श्रमिकों के शोषण को समाप्त किया जा सकता है। वैज्ञानिक प्रबन्ध एक सिद्धान्त के रूप में उचित है परन्तु इसे सफलतापूर्वक लागू करने के लिए कर्मचारियों में सहयोग होना आवश्यक है। प्रो० अर्नेस्ट डेल (Ernest Dale) का कहना है, "टेलर ने प्रबन्ध के एक विज्ञान को विकसित नहीं किया था। इसके विपरीत उसने प्रबन्ध के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया था उसने ये विधियां बताई थी जो कम्पनी के उत्पादन क्षेत्र में प्रयोग की जा सकती थीं। वास्तव में टेलर औद्योगिक इन्जीनियरिंग का पिता था, न कि वैज्ञानिक का।"

1-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

1-4-3-संगठन की परम्परावादी विचारधारा का अर्थ और परिभाषाएं(Meaning and Definitions of Classical Theory of Organization)-

संगठन की परम्परागत विचारधारा को यान्त्रिक विचारधारा, औपचारिक विचारधारा या संरचनात्मक विचारधारा आदि नामों से जाना जाता है। संगठन की परम्परावादी विचारधारा को मुख्य रूप से अमेरिकी विद्वानों का समर्थन प्राप्त हुआ है। इसके प्रमुख समर्थकों में हेनरी फेयोल, लूथर गुलिक, लिंडल उर्विक, मेरी पार्कर फालेट, ० डी० मूने, एल० सी० रेले,

आर० शैलटन आदि विद्वानों के नाम प्रमुख हैं। इस विचारधारा के अनुसार संगठन का अर्थ है, एक औपचारिक ढांचा जिसका निर्माण विशेषज्ञों द्वारा स्पष्ट सिद्धान्तों, नियमों तथा उप-नियमों द्वारा किया जाता है। इस विचारधारा के समर्थक संगठन के लिए सिद्धान्त निश्चित सिद्धान्तों का विकास करना चाहते हैं । परम्परावादी विचारकों ने गम्भीरतापूर्वक ऐसे आधारों की खोज का प्रयास किया है जिनके अनुसार संगठन में कार्य विभाजन किया जा सके तथा उनमें समन्वय की प्रभावकारी रीतियों का विकास किया जा सके। यही कारण है कि परम्परावादी विचारक संगठन की रूप रेखा तैयार करने में उसकी योजना को महत्त्व देते हैं।

उर्विक के अनुसार, "जिस प्रकार किसी ढांचे को रचना से पूर्व उसकी योजना बनाई जाती है, यह योजना अथवा रूपरेखा वास्तविक संगठन से अधिक महत्त्वपूर्ण है।" ये दृष्टिकोण दो मान्यताओं पर आधारित है। प्रथम मान्यता यह है कि कुछ ऐसे सिद्धान्त हैं जिनके आधार पर संगठन की योजना को इस प्रकार निर्मित किया जा सकता है जिससे वह पूर्व निर्धारित उद्देश्य अथवा क्रिया को पूरा कर सके। द्वितीय, संगठन में काम करने वाले कर्मचारियों को इस पूर्व निर्धारित योजना की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है:-

फिफनर तथा शेरवुड (Pfiffner and Sherwood) के अनुसार, "परम्परावादी सिद्धान्त निरंकुशता, अर्थशास्त्र में अहस्तक्षेप सिद्धान्त, वैज्ञानिकता के सम्मिश्रण से उद्भूत है। इसमें स्वचालित मशीन पर आधारित मानवीय आचार को भी दृष्टिगत रखा गया है।"

हाइट (White) ने कहा है, "यह कानून द्वारा तथा उच्च प्रबन्ध द्वारा सरकार में स्थापित सम्बन्धों का औपचारिक घोषित पैटर्न है। यह किए जाने वाले कार्य की प्रकृति तथा मात्रा पर निर्भर है तथा कार्यकुशलता इसका मुख्य उद्देश्य है अर्थात् उत्तरदायित्व के साथ-साथ कर्मचारियों तथा सामग्री का अत्यन्त प्रभावकारी प्रयोग हो सके संगठन सत्ता द्वार स्थापित

तथा समर्पित है तथा इसे पूरी तरह न सही, फिर भी एक तालिका अथवा मानचित्र पर दर्शाया जा सकता है। यह सामान्यतः कार्य सम्बन्धी का मुख्य परिचायक है।"

डिमाक, डिमाक और कोईंग (Dimock, Dimock and Koeing) के विचारानुसार संगठन के इस विचार पर "उस यात्री की छाप है जो वैज्ञानिक शुद्धता, तर्कसंगत संरचना तथा प्रत्येक चरण सम्पन्न करने में सर्वोत्तम मार्ग अपनाने और विभिन्न भागों को एकीकृत सम्पूर्णना से सम्बद्ध करने का विशेष ध्यान रखता है।

संगठन को परम्परागत विचारधारा के समर्थकों की मान्यता है कि संगठन मौलिक रूप से एक औपचारिक ढांचा (Formal Structure) है। जिस प्रकार कोई वास्तुकार (Architect) वास्तुकला के निश्चित सिद्धान्तों के आधार पर भवन की योजना बनाता है उसी प्रकार कुछ निश्चित सिद्धान्तों के आधार पर संगठन का निर्माण किया जा सकता है।

1-4-2-संगठन की परम्परागत विचारधारा के मुख्य बिंदु (Major points of classical theory of Organisation)

इस विचारधारा के प्रमुख बिन्दु इस प्रकार हैं-

(i) अव्यक्तिकता

(ii) लचीलापन

(iii) कार्य विभाजन

(iv) पदसोपानात्मक व्यवस्था

(v) विशेषीकरण

(vi) इस विचारधारा के अनुसार संगठन के सिद्धान्त स्पष्ट होते हैं जिनके आधार पर संगठन का ढांचा तैयार किया जा सकता है।

(vii) यह आण्विक है अर्थात् अपने उत्तरदायित्वों से अलग रहता है।

(viii) व्यक्तियों को कार्य पर नियुक्त करने से पहले संगठन का ढांचा तैयार करना चाहिए।

(ix) संगठन का ढाँचा प्रमुख है, व्यक्ति नहीं।

(x) संगठन की जरूरतों के अनुसार ही व्यक्तियों का चयन किया जाए।

(xi) संगठन में व्यक्ति को स्थिति एक बड़ी मशीन में पुर्जे की तरह है। जिस प्रकार एक मशीन में दांते होते हैं, उसी प्रकार संगठन में कर्मचारी होते हैं। मशीन खराब हो जाने पर पुर्जे को बदल दिया जाता है।"

(xii) यह विचारधारा पूर्णतया यान्त्रिक है। इसमें मानव व्यवहार को कोई महत्व नहीं दिया जाता। संगठन एक मशीन की भांति है जिसमें व्यक्ति के योगदान को महत्त्व नहीं दिया जाता।

(xiii) यह विचारधारा इस गलत मान्यता पर आधारित है, कि व्यक्ति समूह या सामाजिक नियन्त्रण से हमेशा स्वतन्त्र हता है।

(xiv) संगठन पर बाहरी वातावरण का प्रभाव नहीं पड़ता।

(xv) यह विचारधारा रूढ़िवादी है और प्रगतिशील विचारों के विरुद्ध है।

(xvi) यह सिद्धान्त बौद्धिक है। यहां बौद्धिक आचरण से अभिप्राय वैज्ञानिक कार्य-पद्धति के अनुसार कार्य करने से है।

1-4-3-हेनरी फेयोल के विचार (Henry Fayol's views)

संगठन की परम्परावादी या यान्त्रिक विचारधारा में हैनरी फेयोल (Henary Fayol) का महत्त्वपूर्ण योगदान है। फेयोल ने अपने सभी अनुभवों के आधार पर 1916 में 'साधारण एवं औद्योगिक प्रशासन' (General and Industrial Administration) नामक पुस्तक फ्रांसीसी भाषा में प्रकाशित की हैनरी फेयोल एक व्यावहारिक और अनुभवी उद्यमी थे। उनके विचार प्रबन्धकीय क्षेत्र तथा संगठनात्मक विचारधारा की दृष्टि से बहुत महत्त्व रखते हैं।

- प्रबन्ध के तत्त्व (Elements of Management)- फेयोल ने संगठन के प्रबन्ध के तत्त्वों को निम्न प्रकार से बांटा है: -

(i) नियोजन (Plamming)

(ii) संगठन (Organisation)

(III) आदेश (Command)

(iv) समन्वय (Co-ordination)

(v) नियन्त्रण (Control)

- **संगठन के प्रमुख सिद्धान्त (Main Principles of Organisation)**

हैनरी फेयोल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक साधारण एवं औद्योगिक प्रशासन (General and Industrial Administration) में संगठन या प्रबन्ध के 14 प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन किया है। ये सिद्धान्त इस प्रकार हैं-

I. **कार्य विभाजन (Division of Work)-**फेयोल का कहना है कि संगठन में कार्यों का विभाजन, श्रमिकों के विभाजन के आधार पर होना चाहिए। इससे कार्य विशेषीकरण आएगा और न्यूनतम लागत पर श्रेष्ठतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकेगा। इससे मानवीय तथा भौतिक साधनों की कार्यकुशलता में वृद्धि करने में सहायता मिलेगी।

II. **सत्ता तथा उत्तरदायित्व (Authority and Responsibility)-**फेयोल का मत है कि प्रत्येक संगठन में सत्ता तथा उत्तरदायित्व का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। सत्ता के बिना उत्तरदायित्व और उत्तरदायित्व के बिना सत्ता बेकार है। किसी भी व्यक्ति को कार्य करने की जिम्मेदारी के साथ-साथ सत्ता भी दी जानी चाहिए। सत्ता के अभाव में वह अपना दायित्व ठीक से नहीं निभा पाएगा।

III. **पदसोपान क्रम (Scaler Chain)–**यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें उच्च स्तर से लेकर निम्न स्तर तक सभी कर्मचारी एक दूसरे के साथ वरिष्ठ अधीनस्थ (Senior-

Subordinate) सम्बन्धों से जुड़े हुए होते हैं। यह व्यवस्था सन्देश वाहक का काम करती है। इसमें आदेश के सूत्र ऊपर से नीचे आते हैं जबकि उत्तरदायित्व नीचे से ऊपर की ओर जाता है। प्रत्येक स्तर के कर्मचारी उचित प्रक्रिया द्वारा (Through Proper Channel) कार्य करते हैं। निम्न अधिकारी उच्च अधिकारियों के आदेश से कार्य पूरा कर लेते हैं।

IV. **आदेश की एकता (Unity of Command)-**कर्मचारी अपने एकदम उच्चाधिकारी से आदेश प्राप्त करके कार्य करते हैं। यदि वह एक ही व्यक्ति से आदेश प्राप्त नहीं करेगा तो वह इस भ्रम में रहेगा कि वह किसके आदेश का पालन करे।

V. **निर्देशन की एकता (Unity of Direction)-**फेयोल का विचार है कि जिन कार्यों का उद्देश्य एक समान हो; उनके लिए एक जैसी योजना हो जो एक ही अधिकारी के दिशा निर्देशों के अनुसार काम करे। इस अधिकारी द्वारा दिए गए दिशा-निर्देशों में एकरूपता होनी चाहिए। इससे विभिन्न कार्यों तथा प्रवासों में समन्वय लाया जा सकेगा तथा किसी प्रकार का सन्देह भी उत्पन्न नहीं होगा है।

VI. **अनुशासन (Discipline)-**हैनरी फेयोल का मत है कि संगठन में निर्देशन की व्यवस्था इसलिए की जाती है आज्ञाकारिता, व्यावहारिकता, व्यवस्था तथा शक्ति बनी रहे। यह संगठन में अनुशासन बनाए रखने के लिए जरूरी है। एक अच्छे नेतृत्व द्वारा ही अच्छा अनुशासन स्थापित किया जा सकता है। संगठन में अच्छे अनुशासन के लिए प्रत्येक स्तर पर अच्छा और सुनियोजित निरीक्षण होना चाहिए। समझौते स्पष्ट तथा न्यायपूर्ण हों और दण्ड की व्यवस्था की दृढ़ता तथा तर्फ संगतता से लागू करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

VII. **कर्मचारियों के पदों की स्थिरता (Stability of Tenure of Personnel)-**फेयोल के अनुसार संगठन में कर्मचारियों के पद की सुरक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। यदि कर्मचारियों के पद की सुरक्षा की व्यवस्था की जाती है तो इससे कर्मचारी का संगठन से अधिक लगाव होगा और वह अधिक रुचिपूर्ण ढंग से कार्य करेगा। इसके विपरीत यदि

कर्मचारी को यह भय रहेगा कि उसे कभी भी हटाया जा सकता है तो वह मन लगाकर काम नहीं करेगा।

VIII. **पारिश्रमिक(Remuneration)-**पारिश्रम वह भुगतान है जो उत्पादन के साधनों को उनकी सेवाओं के परिणामस्वरूप दिया जाता है। फेयोल का विचार है कि संगठन में कार्य करने वाले कर्मचारियों को दिया जाने वाला पारिश्रमिक तथा उसके भुगतान की व्यवस्था न्याय संगत तथा विवेकपूर्ण होनी चाहिए। कर्मचारी को यह न लगे कि उसे कम पारिश्रमिक दिया गया है और नियोक्ता को भी यह न लगे कि उसने जरूरत से ज्यादा भुगतान किया है।

IX. **समानता (Equality)-**संगठन और पदों में समानता के सिद्धान्त को लागू किया जाना चाहिए सामानता से अभिप्राय है कि अधिकारियों में अधीनस्थ कर्मचारियों के प्रति दया, सदभावना, प्रेम तथा न्याय भावना होना। उच्च अधिकारियों को अपने अधीन कर्मचारियों के प्रति समानता का भाव रखना चाहिए। इससे अधीनस्थ कर्मचारियों में उच्चाधिकारियों के प्रति आज्ञाकारिता तथा स्वामी-भक्ति की भावना विकसित होगी 10. सहयोग की भावना (Esprit de corps) फेयोल का मानना है कि सहयोग की भावना इस उक्ति पर आधारित है कि 'एकता में बल है'। (Union is strength) इससे मिल-जुल कर कार्य करने की भावना का विकास होता है जो संगठन की सफलता के लिए जरूरी है। संगठन के उच्चाधिकारियों को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए और इसके लिए संचार व्यवस्था को महत्व दिया जाना चाहिए। संगठन में सहयोग की भावना जितनी सुदढ होगी आदेश की एकता उतनी ही अच्छी प्रकार स्थापित होगी।

X. **पहल (Initiative)-**यह सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति विवेकशील होता है। फैयोल का मत है कि किसी योजना को तैयार करने और लागू करने में कर्मचारियों को छूट दी जानी चाहिए। उनकी यह पहल करने की साथ्र्य उनमें शक्ति और उत्साह का संचार करेगी। जब कर्मचारी यह महसुस करेगा कि वह संगठन में केवल

एक पर्जा मात्र ही नहीं है बलि्क उसका भी महत्त्व है तो वह पुरा मन लगा कर काम करेगा।, उच्चाधिकारियों को इस विषय में कर्मचारियों को प्रेरणा देनी चाहिए।

XI. **व्यवस्था (Order)-**यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि संगठन में प्रत्येक वस्तु और व्यकि्त के लिए एक उचित स्थान होता है और प्रत्येक स्थान के लिए उचित वस्तु और एक योग्य व्यकि्त होता है।संगठन में कर्मचारियों और वस्तुओं की व्यवस्था इस प्रकार की जाए जिससे कुशलतापूर्वक अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

XII. **केन्द्रीयकरण (Centralisation)–**फेयोल ने संगठन में केन्द्रीयकरण के सिद्धान्त पर भी बल दिया है। उनकामानना है कि किसी भी संगठन में केन्द्रीयकरण को किस सीमा तक अपनाया जाए, यह अलग-अलग संगठनों की प्रकृति और आकार पर निर्भर करता है। इस लिए उचित अनुपात की दृषि्ट से यह एक प्रमुख प्रश्न बन जाता है। छोटे संगठनों में केन्द्रीयकरण की प्रकृति मिलती है जबकि बड़े संगठनों के लिए विकेन्द्रीकरण ठीक रहता है।

XIII. **व्यकि्तगत हित की अपेक्षा सामान्य हित को महत्त्व (Subordination of Individual Interest to General Interest)-**किसी भी प्रकार के संगठन में व्यकि्तगत या समूह विशेष के हितों को सामान्य हितों की तुलना में अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। व्यकि्तगत और सामान्य हित के बीच पैदा होने वाले टकराव को समाप्त करने के प्रयास किए जाने चाहिए। इसके लिए कर्मचारियों को व्यकि्तगत हित को छोडकर सामान्य हित की ओर प्रेरित करना चाहिए।

1-4-4-लूथर गुलिक के विचार (Luther Gullick's views)

संगठन की परम्परावादी विचारधारा में लूथर गुलिक का विशेष महत्व है। गुलिक नें संगठन के सिद्धान्तों को अंग्रेजी भाषा के एक शब्द ' पोस्डकॉर्ब' (POSDCORB) में समाहित किया

है। POSDCORB के प्रत्येक शब्द का एक विशेष अर्थ है। गुलिक के शब्दों में POSDCORB शब्द उन अक्षरों से बना है जो निम्नलिखित कार्य करते हैं:-

P.Planning (नियोजन)-नियोजन का अभिप्राय उन कामों की रूपरेखा तैयार करने से है जिनको सम्पादित करने की आवश्यकता है। इसके अन्तर्गत लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए साधनों को निर्धारित करना भी शामिल है।

O-Organisation (संगठन)-संगठन से अभिप्राय सत्ता के ढांचे को इस प्रकार स्थापित करने से है जिससे प्रशासकीय कार्यों का बंटवारा, प्रबन्ध तथा समन्वयं किया जा सके। इससे संगठन के आकार का वर्णन, कार्यों का विभाजन तथा उप-विभाजन के सम्बन्ध में अध्ययन यिा जाता है।

S-Staffing (कर्मचारियों की व्यवस्था)-इसका प्रबन्ध लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कर्मचारियों की नियक्ति, उनका प्रशिक्षण तथा कुशल कार्य करने के लिए उचित वातावरण की व्यवस्था करना है।

D-Direction (निर्देशन)-इसके अन्तर्गत कर्मचारियों के कार्यों के सम्बन्ध में जो निर्देश निर्णायकों द्वारा दिए जाते हैं, हम उनका अध्ययन करते हैं।

CO-Co-ordination (समन्वय)-समन्वय से अभिप्राय लक्ष्य की पूर्ति के लिए विभिन्न विभागों में समन्वय उत्पन्न करने से है।

R-Reporting (रिपोर्ट तैयार करना)-इसका अभिप्राय है उच्चतर तथा अधीनस्थ कर्मचारियों को प्रशासकीय सूचना देना ताकि उच्चतर अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्यों के बारे में जांच कर सकें तथा अपने अधीनस्थ को उचित निर्देशन दे सकें। संसदीय शासन प्रणाली में रिपोर्ट तैयार करने का अर्थ होता है प्रशासकीय कार्यों की प्रगति के बारे में उन लोगों को सुचनाएं देना जिनके प्रति कार्यपालिका उत्तरदायी है।

B-Budgeting (बजट तैयार करना)- इसके अन्तर्गत वित्त व्यवस्था का अध्ययन करते हैं। बजट तैयार करना वित्तीय योजना तैयार करना, वित्त के वितरण द्वारा प्रशासकीय विभागों पर नियंन्त्रण आदि इसमें शामिल हैं।

पोस्डकार्ब के समर्थक लोक प्रशासन को एक विशेष प्रकार का तकनीकी ज्ञान मानते हैं और इस आधार पर पब्लिक तथा प्राइवेट में क्षेत्रीय अन्तर न मान कर मौलिक अन्तर मानते हैं। लूथर गुलिक के मतानुसार लोक प्रशासन एक विशेष प्रकार का ज्ञान है जिसका विज्ञान की तरह ही अध्ययन किया जाना चाहिए। आज इसी ज्ञान के आधार पर प्रबन्ध विज्ञान (Management Science) बडी तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। अमेरिका में पोस्टकार्ब विचारधारा का बहुत अधिक प्रभाव रहा है।

1-4-5-लिंडोल उर्विक के विचार (Lyndol Urwick views)

ब्रिटिश विद्वान लिंडोल उर्विक की प्रसिद्ध पुस्तक "प्रशासन के तत्व' (The Elements of Administration) में संगठन की परम्परावादी विचारधारा पर व्यापक विचार प्रकट किए गए हैं। उर्विक भी गुलिक की तरह यह मानता है कि मानव सभ्यता के लिए संगठन के ढांचे पर ध्यान केन्द्रित किए बिना तथा ढांचे के कारकों का अध्ययन किए बिना संगठन के महत्त्व को नहीं समझा जा सकता। इसके लिए संगठन के ढांचे को अन्य तत्त्वों से अलग करके देखना होगा । उर्विक ने संगठन के निम्नलिखित सिद्धान्त बताए हैं-

1. उद्देश्यों का सिद्धान्त (Principle of Objectives)

2. परिभाषा या निर्धारण का सिद्धान्त (Principles of Definition)

3. पदसोपान का सिद्धान्त (Principle of Hierarchy)

4. उत्तरदायित्व का सिद्धान्त (Principle of Responsibility)

5. नियन्त्रण क्षेत्र का सिद्धान्त (Principle of Control)

6. विशेषीकरण का सिद्धान्त (Principle of Specialistion)

8. अनुरूपता का सिद्धान्त (Principle of Correspondence)

1-4-6-मूने तथा रैले के विचार(Views of Money and Railey)

जेम्स डी० मूने तथा एलेन सी० रैले ने संगठन की परम्परावादी विचारधारा का समर्थन किया है। इन विद्वानों ने संगठन की औपचारिक या यांत्रिक धारणा को महत्व दिया है। उन्होंने संगठन के पदसोपान के सिद्धान्त को "क्रमिक प्रक्रिया" का नाम दिया है। मुने तथा रैले के अनुसार प्रत्येक संगठन में सर्वोच्च समन्वयकारी सत्ता किसी भी रूप में कहीं रहनी चाहिए। संगठन के विचार और सिद्धान्त के लिए यह भी आवश्यक है कि उसमें एक प्रक्रिया होनी चाहिए यह स्वाभाविक रूप से औपचारिक हो जिसके माध्यम से यह समन्वयकारी सत्ता संगठित निकाय के गठन में ऊपर से लेकर नीचे तक क्रियाशील रहती है। मने व रैले के विचारों को अग्रलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है

1. समन्वय का सिद्धान्त (The Co-ordinative Principle)–यह सिद्धान्त समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यों की एकता स्थापित करता है। यह सिद्धान्त सतत तथा नेतृत्व (Authority and Leadership) पर बल देता है।

2. पदसोपान का सिद्धान्त (The Scalar Principle) इस सिद्धान्त के अनुसार संगठन की इकाइयों में कार्यों का विभाजन कर दिया जाता है और प्रत्येक इकाई का उत्तरदायित्व निश्चित कर दिया जाता है। इस व्यवस्था में सभी कार्य 'उचित प्रक्रिया द्वारा' (Through Proper Channel) सम्पन्न किए जाते हैं।

3. कार्यात्मक सिद्धान्त (The Functional Principle) – यह विशेषीकरण का सिद्धान्त है।
4. स्टाफ तथा लाइन (Staff and Line)-लाइन अभिकरण सत्ता का नेतृत्व करता है जबकि

स्टाफ से अभिप्राय सलाह एवं विचार से है, लेकिन इन दोनों में अन्तर इतना कठोर नहीं है कि इनको संगठन के विभाजन का आधार मान लिया. जाए।

मूने एवं रैले ने इतिहास में ज्ञात संगठनों का अध्ययन किया। उन्होंने राज्य, चर्च, सेना, उद्योग आदि संस्थाओं में प्राप्त संगठन के सिद्धान्तों का अध्ययन किया और यह स्पष्ट किया कि इन संगठनों में नौकरशाही का विशेष महत्त्व है।

1-4-7-संगठन की परम्परावादी विचारधारा की आलोचना (Criticism of the Classical Theory of Organisation)

इस विचारधारा की निम्नलिखित आधारों पर आलोचना की जाती है

(i) आलोचकों के अनुसार संगठन की परम्परागत विचारधारा द्वारा जिन सिद्धान्तों की चर्चा की गई है, वे कहावतों(Proverbs) जैसे लगते हैं और विद्वानों लोक प्रशासकों आदि की दृष्टि में इनका कोई महत्त्व नहीं है।

(ii) यह विचारधारा यान्त्रिक है। इसमें मानव तत्त्व की अपेक्षा संगठन की योजना व रूप-रेखा को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया गया है। उर्विक का यह मत कि, "संगठन में मनुष्य की स्थिति एक बड़ी मशीन में पुर्जे की तरह है " स्वीकार नहीं किया जा सकता। मनुष्य एक विचारशील एवं चिन्तनशील प्राणी है। वह मशीनी पूर्जे की भांति जड़ वस्तु नहीं है।व्यक्ति के साथ मशीन के पुर्जे की तरह व्यवहार करना उसे मानवीय गुणों से नीचे गिराना है।

(iii) मूल रूप से संगठन का निर्माण मानवीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है। संगठन मनुष्य के लिए होता है, मनुष्य संगठन के लिए नहीं। संगठन की मौलिक मान्यता उसकी गतिशीलता है जिसके लिए वह कार्य भी करता है और सहयोग भी अर्जित करता है। मशीनी आधार पर खड़े संगठन में दोनों तत्व नहीं पाए जाते। इस दृष्टिकोण के अनुसार मनुष्य को संगठन की आवश्यकता के अनुरूप माना गया है, परन्तु

यह विचार ठीक नहीं है क्योंकि चेतन विश्व में सभी वस्तुएं मनुष्य के लिए है न कि वस्तुओं के लिए मनुष्य का निर्माण हुआ है। संगठन का जन्म भी इसी आधार पर हुआ है। संगठन तो मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला एक साधन है, साध्य नहीं।

(iv) संगठन मूलतः मानवीय होता है। हम यान्त्रिक तकनीकों व विधियों द्वारा जटिल मानवीय समस्याओं का समुचित हल नहीं निकाल सकते। मानवीय समस्या के मानवीय हल के लिए यह परमावश्यक है कि उसके लिए मानवीय तथ्यों तथा मानवीय यन्त्रों को प्रयोग में लाया जाए।

1-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(i) वैज्ञानिक प्रबन्ध की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग कब और किसने किया था।

(ii) किस को वैज्ञानिक को वैज्ञानिक प्रबन्ध का जनक माना जाता है।

(iii) टेलर द्वारा 1911 में प्रकाशित पुस्तक का क्या नाम है ,जिसका वैज्ञानिक प्रबन्ध में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

(iv) टेलर ने संगठन के अन्तर्गत कार्यों को कौनसे दो रूप में बांटा है।

(v) उर्विक ने संगठन के कितने सिद्धान्त बताए हैं।

1-6-सारांश (Summary)

वैज्ञानिक प्रबन्ध संगठन सम्बन्धी प्रथम व्यवस्थित विचारधारा है। वैज्ञानिक प्रबन्ध की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग 1910 ई० में लुई ब्रेडी (Louis Bradeis) ने किया था। जर्मन विद्वान फ्रेडरिक विंस्लो टेलर (Fredrick Winslow Taylor) को वैज्ञानिक प्रबन्ध का जनक माना जाता है। टेलर का कथन है कि "प्रबन्ध सच्चा विज्ञान है जो सुनिश्चित विधियों, नियमों, सिद्धान्तों पर आधारित है।"हैनरी फेयोल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक साधारण एवं औद्योगिक प्रशासन (General and Industrial Administration) में संगठन या प्रबन्ध के 14 प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन किया जेम्स डी० मूने तथा एलेन सी० रैले ने संगठन की

परम्परावादी विचारधारा का समर्थन किया है। इन विद्वानों ने संगठन की औपचारिक या यांत्रिक धारणा को महत्व दिया है। उन्होंने संगठन के पदसोपान के सिद्धान्त को "क्रमिक प्रक्रिया" का नाम दिया है। संगठन की परम्परावादी विचारधारा में लूथर गुलिक का विशेष महत्व है। गुलिक नें संगठन के सिद्धान्तों को अंग्रेजी भाषा के एक शब्द ' पोस्डकॉर्ब' (POSDCORB) में समाहित किया है। POSDCORB के प्रत्येक शब्द का एक विशेष अर्थ है। उर्विक भी गुलिक की तरह यह मानता है कि मानव सभ्यता के लिए संगठन के ढांचे पर ध्यान केन्द्रित किए बिना तथा ढांचे के कारकों का अध्ययन किए बिना संगठन के महत्त्व को नहीं समझा जा सकता। इसके लिए संगठन के ढांचे को अन्य तत्वों से अलग करके देखना होगा । उर्विक ने संगठन के उद्देश्यों का सिद्धान्त ,परिभाषा या निर्धारण का सिद्धान्त,पदसोपान का सिद्धान्त,उत्तरदायित्व का सिद्धान्त ,नियन्त्रण क्षेत्र का सिद्धान्त.विशेषीकरण का सिद्धान्त ,अनुरूपता का सिद्धान्त ,सिद्धान्त बताए हैं

1-7-सूचक शब्द (Key Words)

(i) **संगठन- वह सामाजिक व्यवस्था या युक्ति है जिसका लक्ष्य एक होता है, जो अपने कार्यों की समीक्षा करते हुए स्वयं का नियन्त्रण करती है, तथा अपने पर्यावरण से जिसकी अलग सीमा होती है। संगठन तरह-तरह के हो सकते हैं - सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सैनिक, व्यावसायिक, वैज्ञानिक आदि।**

(ii) **वैज्ञानिक प्रबंध-** दो शब्दों से मिलकर बना है वैज्ञानिक+प्रबंध। “वैज्ञानिक” से तात्पर्य है विज्ञान संबंधित तथा “प्रबंधन” से तात्पर्य किसी कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने की विधि। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रबंध का अर्थ है की विशिष्ट ज्ञान से किसी कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से चलाना ।

(iii) **प्रबन्धन (Management)-** व्यवसाय एवं संगठन के सन्दर्भ में प्रबन्धन (Management) का अर्थ है - उपलब्ध संसाधनों का दक्षतापूर्वक तथा प्रभावपूर्ण तरीके से उपयोग करते हुए लोगों के कार्यों में समन्वय करना ताकि लक्ष्यों की प्राप्ति सुनिश्चित

की जा सके। प्रबन्धन के अन्तर्गत आयोजन (planning), संगठन-निर्माण (organizing), स्टाफिंग (staffing), नेतृत्व करना (leading या directing), तथा संगठन अथवा पहल का नियंत्रण करना आदि आते हैं।

(iv) **पदसोपान-** पदसोपान को शाब्दिक अर्थ मे ' श्रेणीबद्ध-प्रशासन ' कहते है। अंग्रेजी मे इसे ' हायराकी ' कहते है जिसका मतलब है ' निम्नतर पर उच्चतर का शासन अथवा नियंत्रण।' पद सोपान एक ऐसे संगठन का परिचायक होता है, जो पदों के एक उत्तरोत्तर क्रम के अनुसार सोपान अथवा सीढ़ी की भांति संगठित किया जाए। इसमे निम्मस्तरीय व्यक्ति उच्चस्तरीय व्यक्ति अथवा पदाधिकारी के प्रति उत्तरदायी रहते है। पदासोपानीय संगठन मे जैसे-- जैसे संगठन का ढांचा ऊपर पहुँचता है इसका आकार छोटा होता रहता है और इसका रूप ' पिरामिड ' के समान होता जाता है।

1-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

(i) वैज्ञानिक प्रबन्ध से आपका क्या अभिप्राय है? संगठन के वैज्ञानिक प्रबन्ध सिद्धान्त का वर्णन करें।

(ii) वैज्ञानिक प्रबन्ध सिद्धान्त के लाभ तथा हानियों का वर्णन कीजिए।

(iii) वैज्ञानिक प्रबन्ध सिद्धान्त की विशेषताएं एवं सिद्धान्त लिखिए।

(iv) संगठन की परिभाषा दें और शास्त्रीय विचारधारा का आलोचनात्मक वर्णन करें।

(v) संगठन के शास्त्रीय सिद्धान्त का वर्णन करें।

1-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

(i) 1910 ई० में लुई ब्रेडी (Louis Bradeis)

(ii) जर्मन विद्वान फ्रेडरिक विंस्लो टेलर (Fredrick Winslow Taylor)

(iii) 'वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त'

(iv) नियोजन तथा कार्यात्मक (Planning and Functional) के रूप में

(v) 8

1-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

(iii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा, डॉ हरी चंद्र शर्मा, त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iv) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(v) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(vi) लोक के प्रशाशन सिद्धांत विष्णु भगवान, विद्याभूषण एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 2	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
संगठन का नौकरशाही सिद्धान्त-मेक्सवेबर (Bureaucratic Theory of Organization- Max Weber)	

अध्याय की संरचना-

2-1-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

2-2-परिचय (Introduction)

2-3- अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

2-3-1-नौकरशाही का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of bureaucracy)

2-3-2-नौकरकशाही के उदय के कारण (Factors for the Rise of Bureaucracy

2-3-3-नौकरकशाही के उदय पर मैक्स वैबर के विचार (Max Weber on the Rise of Bureaucracy)

2-3-4-नौकरशाही के प्रकार (Types of Bureacuracy)

2-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

2-4-3-मैक्स वेबर का नौकरशाही का सिद्धान्त (Bureaucratic Theory of Max Weber)

2-4-2-नौकरशाही की विशेषताएं (Characteristics of Bureaucracy)

2-4-3-मैक्स वेबर के नौकरशाही सिद्धांत के सकारात्मक पक्ष (Positive Sides of Max Weber’s Bureaucratic Theory)

2-4-4-मैक्स वेबर के नौकरशाही सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Max Weber's Theory of Bureaucracy)

2-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

2-6-सारांश (Summary)

2-7-सूचक शब्द (Key Words)

2-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

2-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

3-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

2-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

(i) विद्यार्थियों को संगठन के सिद्धांतों से अवगत करवाना।

(ii) विद्यार्थियों को नौकरशाही से अवगत करवाना।

(iii) विद्यार्थियों को नौकरशाही विचारधारा की मुख्य विशेषताओं से अवगत करवाना।

(iv) विद्यार्थियों को संगठन के नौकरशाही सिद्धान्त से अवगत करवाना।

2-2-परिचय (Introduction)

नौकरशाही किसी भी संगठन का एक ज़रूरी हिस्सा है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह छोटा हो या बड़ा किसी न किसी रूप में नौकरशाही संरचना से जुड़ा हुआ है। बीते कई सालों से नौकरशाही की कड़ी आलोचना हो रही है। कई व्यक्ति इसे नकारात्मक संदर्भ में देखते हैं। स्पष्ट कमियों और उजागर बुराइयों के बावजूद कोई भी सरकारी, सार्वजनिक या निजी संगठन नौकरशाही ढाँचे के बिना नहीं चल पाया है। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में नौकरशाही के बारे में विस्तार से बताया गया है, लेकिन आज हम जिस रूप में नौकरशाही को देखते हैं उसका विकास औद्योगीकरण के साथ-साथ हुआ है। प्राचीन मिस्र और रोम में भी नौकरशाही की मौजूदगी के प्रमाण मिलते हैं, लेकिन यह प्राचीन नौकरशाही पैतृक प्रशासन पर आधारित थी, जहाँ शासक के निजी विचार व भावनाओं पर शासन होता था। किंतु आज की नौकरशाही पूरी तरह से एक अवैयक्तिक व्यवस्था है। मैक्स वैचर (1864-1920) एक जर्मन समाज शास्त्री या जिसने सर्वप्रथम नौकरशाही पर व्यवस्थित विचार दिए। मैक्स वेबर के नौकरशाही के सिद्धान्त को ही संगठन का नौकरशाही सिद्धान्त कहा जाता है। उसने 1920 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'सामाजिक और आर्थिक संगठन का सिद्धान्त' में नौकरशाही के 'आदर्श रूप' (Ideal Type) का वर्णन किया है। बैबर ने नौकरशाही को प्रशासन को तर्कपूर्ण (Rational)

व्यवस्था माना है। उन्होंने नौकरशाही पर इतना स्टीक और तर्कपूर्ण विश्लेषण किया है कि मैक्स वेबर और नौकरशाही एक-दूसरे के परिचायक बन गए हैं।

2-3- अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

2-3-1-नौकरशाही का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of bureaucracy)

नौकरशाही किसी भी संगठन का एक ज़रूरी हिस्सा है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह छोटा हो या बड़ा किसी न किसी रूप में नौकरशाही संरचना से जुड़ा हुआ है। कई व्यक्ति इसे नकारात्मक संदर्भ में देखते हैं। स्पष्ट कमियों और उजागर बुराइयों के बावजूद कोई भी सरकारी, सार्वजनिक या निजी संगठन नौकरशाही ढाँचे के बिना नहीं चल पाया है।आज हम जिस रूप में नौकरशाही को देखते हैं उसका विकास औद्योगीकरण के साथ-साथ हुआ है। नौकरशाही शब्द का आविष्कार 1745 में फ्राँसीसी अर्थशास्त्री विन्सेट डी गोर्नी (Vincent de Gournay) ने किया था। नौकरशाही को अंग्रेज़ी में 'ब्यूरोक्रेसी' कहते हैं, जो लैटिन भाषा के 'ब्यूरो' जिसका अर्थ होता है 'मेज' और ग्रीक भाषा के 'क्रेसी' जिसका अर्थ होता है 'शासन' से मिलकर बना है। इस प्रकार 'ब्यूरोक्रेसी' का तात्पर्य 'मेज का शासन' या 'मेज सरकार' से है। नौकरशाही को कर्मचारीतंत्र, अधिकारीतंत्र या लाल फीताशाही भी कहते हैं। विशाल साम्राज्य में प्रशासन की सभी क्षेत्रों पर पकड़ बनाए रखने के लिये अधिकारियों की औपचारिक नियुक्तियों, उनकी पदोन्नति, उनके दायित्वों और अधिकारों के स्पष्ट विभाजन आदि के निर्धारण की संगठित पद्धति का विकास हुआ, जो कि नौकरशाही का ही एक रूप था। पूँजीवाद और प्रजातंत्र के विस्तार ने आधुनिक नौकरशाही को संगठन का अनिवार्य रूप बना दिया है। नौकरशाही की विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न परिभाषाएं दी है: -

- **जॉन स्टुअर्ट मिल के अनुसार-** नौकरशाही का अर्थ समाज में सरकार के व्यावसायिक रूप से दक्ष प्रशासकों से है।

- **हैरोल्ड जोसेफ लॉस्की के अनुसार**, एक सरकारी व्यवस्था में अधिकारियों का शासन ही नौकरशाही है।
- **हर्मन फाईनर के अनुसार-** ने बताया कि, प्रशासकों या अधिकारियों द्वारा किया गया शासन ही नौकरशाही है।
- **मार्शल ई. डिमॉक के अनुसार-**नौकरशाही एक वृहत रूप में केवल संस्थावाद का नाम है। यह किसी संस्था के खून में मिलाया हुआ कोई बाहरी पदार्थ नहीं है। यह केवल सभी में पाई जाने वाली विशेषताओं का एक बढ़ा हुआ रूप है।
- **आररेल्ड के अनुसार,** "नौकरशाही का मतलब है अफसरों द्वारा शासन।
- **पिफरन के शब्दों में** "अधिकारी तंत्र व्यक्तियों और कार्यों का ऐसा व्यवस्थित संगठन है जो सामूहिक प्रयास के द्वारा निश्चित लक्ष्य की सहज प्राप्ति कर सकता हैं।"
- **जार्ज वर्नाड के अनुसार,**" सत्ता के उपासक उच्च पदाधिकारियों की समंतशाही का दूसरा नाम ही अधिकारी राज्य है।"
- **विलोवी के अनुसार,**" अपने व्यापक अर्थ मे नौकरशाही एक ऐसी प्रणाली है जहां कर्मचारियों को विभिन्न वर्गीय सोपानों, जैसे- सेक्शन, डिवीजन, ब्यूरो, डिपार्टमेंट मे बाँटा जाता है।"
- **एच. एपेलवी के अनुसार,**" नौकरशाही तकनीकी दृष्टि से कुशल कर्मचारियों का एक व्यावसायिक वर्ग है जिसका संगठन पदसोपान के आधार पर किया जाता है और जो निष्पक्ष होकर राज्य का कार्य करते है।
- **ग्लेडन के अनुसार,**" नौकरशाही वेतनभोगी कर्मचारियों का ऐसा संगठन है जो प्रशासन मे दक्षता लाते है।
- **मेक्सवेबर के अनुसार,**" नौकरशाही प्रशासन का वह तंत्र है जिसकी और मानवता का अभाव है।

नौकरशाही की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि कुछ विद्वान मानते हैं कि यह वह व्यवस्था है जहां सरकारी कार्यों का संचालन ऐसे व्यक्तियों के हाथो मे होता है जो विशेष प्रशिक्षण प्राप्त, कानूनों का अक्षरशः पालन करने वाले, विधानमंडल द्वारा पारित नियमों को श्रेष्ठ समझने वाले तथा जो जनहित से परे रहते है। यह ऐसी व्यवस्था है जहां एक अधिकारी जनता के प्रति अपने को उत्तरदायी न समझकर स्वयं को अपने से बड़े अधिकारी के प्रति उत्तरदायी मानता है। जहां प्रशासन एक निर्जीव मशीन की भांति पदसोपान पद्धति द्वारा चलता है। कुछ विद्वान इसका व्यापक अर्थ मानते है और मानते हैं कि नौकरशाही अनुभव, ज्ञान तथा उत्तरदायित्व का प्रतीक है।

2-3-2-नौकरकशाही के उदय के कारण (Factors for the Rise of Bureaucracy)- नौकरशाही का विकास 18वीं शताब्दी में सबसे पहले पश्चिमी यूरोप के देशों में और उसके उपरान्त विश्व के अन्य देशों में हुआ। 20वीं शताब्दी में यह अपनी पराकाष्ठा पर पहुंची, हालांकि कई राज्यों में मार्क्सवादी सिद्धान्त की विजय हुई जो इसको समाप्त कर देना चाहता है। लॉस्की नौकरशाही के उदय को कई तत्वों के योगदान का परिणाम मानते हैं। प्रथम, यह कुलीनतंत्र की उपज के रूप में विकसित हुआ। इसके अपने इतिहास में कुलीनतंत्र में सक्रिय सरकार के लिए रूचि का अभाव देखा गया जिससे कई परिस्थितियों में सत्ता स्थायी अधिकारियों के हाथों में चली गई। द्वितीय, नौकरशाही का उदय सम्राट की इस इच्छा से भी माना जा सकता है, जबकि वे अपने व्यक्तिगत अधीनस्थ कर्मचारियों को रखना चाहता था जिनका प्रयोग कुलीन वर्ग में शक्ति के लिए बढ़ती हुई लालसा के विपरीत किया जा सके। त तीय, लोकतंत्र के उदय ने इसके विकास में दो तरीके से सहयोग दिया-

(क) उन्नीसवीं शताब्दी में पश्चिमी संसार में लोकतांत्रिक सरकार के उदय हो जाने से ऐसी व्यवस्था को बनाए रखने का संयोग समाप्त हो गया जिसमें अधिकारी पैत क तथा स्थायी जाति बन सकते।

(ख) लोकतंत्र के साथ-साथ जो अन्य परिस्थितियां उत्पन्न हुईं, उनके कारण यह अनिवार्य हो गया कि विशिष्ट सेवा का कार्य करने के लिए विशेषज्ञों का समूह होना चाहिए। चतुर्थ, आधुनिक राज्य का विशाल आकार और इसके उपलब्ध की जाने वाली सेवा का विस्तार इस बात को अनिवार्य बना देता है कि विशेषज्ञों का प्रशासन अवश्यम्भावी हो ।

1-3-3-नौकरकशाही के उदय पर मैक्स वैबर के विचार (Max Weber on the Rise of Bureaucracy)

अतीत में भी नौकरशाही थी, जैसे कि प्राचीन मिस्र में, प्राचीन रोम और चीन के प्रशासनों में और तेरहवीं शताब्दी के अन्त से रोमन कैथोलिक चर्च में। किन्तु वे इतनी नौकरशाही नहीं थी, उनकी संख्या भी सीमित थी और वे केवल राज्य और चर्च के दायरे तक सीमित थीं। योरोप में निरंकुशवाद के उदय और आधुनिकीकरण के साथ-साथ नौकरशाहियां विशद रूप में अधिक नौकरशाह बन गई, अधिक फैल गईं और सामाजिक जीवन के विस्त त क्षेत्रों में घुस गई। राज्य प्रशासनों के अतिरिक्त सेनाएं, चर्च, विश्वविद्यालय, आर्थिक संस्थान और राजनीतिक दल भी नौकरशाही रूप धारण कर गये। वैबर का विचार है कि नौकरशाही का उदय उनके कारणों से हुआ-

- **मुद्रा-अर्थव्यवस्था की स्थापना (The Creation of Money Economy):** यह प्रक्रिया तब शुरू हुई जब यूरोप मध्ययुग से निकला। वैबर मुद्रा व्यवस्था को नौकरशाही के उदय की अनिवार्य शर्त नहीं मानता, क्योंकि मिस्र, रोम तथा चीन जैसे देशों ने नौकरशाहियां उस समय भी थीं जब जब मुआवजा पैसे के रूप में दिया जाता था । किन्तु इससे नौकरशाहों को पक्की भरोसे योग्य आदमनी का विश्वास नहीं था। नौकरशाहों को भूमि का अनुदान देने की व्यवस्था थी तथा/अथवा निश्चित प्रदेशों में से कर, राजस्व इकट्ठा करने

के परिणामस्वरूप नौकरशाहियां विघटित होकर सामन्ती तथा अर्ध-सामन्ती जागीरों का रूप धारण कर गई।

- **पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का उदय (The Emergency of Capitalist Economy):** मुक्त व्यापार की व्यवस्था जो पूंजीवाद का सार है, ने नौकरशाही को बढ़ावा दिया। इस कारण ऐसी आवश्यकताओं ने जन्म लिया जो केवल नौकरशाही संगठल ही पूरा कर सकते थे। पूंजीवाद को अपने ही हितों के लिए शक्तिशाली और सुव्यवस्थित सरकारों की आवश्यकता होती है और वह इनका प्रोत्साहन करता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि पूंजीवाद को ऐसी सरकार की आवश्यकता होती है और वह ऐसी सरकार को प्रोत्साहन देता है जो नौकरशाही संगठनों पर आधारित हो । केवल सरकारें ही नहीं, अपितु स्वंय पूंजीवादी उपक्रम भी संगठन के नौकरशाही सिद्धान्तों का अनुकरण करने लगे, क्योंकि इनमें विवेकशीलता और पूर्व विचारशीलता की आवश्यकताएं होती हैं जो पूंजीवाद की प्रमुख विशेषताएं हैं।
- **पश्चिमी समाज में तर्कशक्ति की ओर अधिक परिवेष्ठित प्रवत्ति (More Encompassing Trend Towards Rationality in Western Society):** आधुनिक पश्चिम समाज ने कई क्षेत्रों में बुद्धिवाद के विकास का अनुभव किया। उदाहरण के तौर पर इस प्रवत्ति को प्रोटेस्टेन्ट नैतिक नियमों में स्पष्ट देखा जा सकता था जिसने कठिन परिश्रम और स्वअनुशासन को प्रोत्साहित किया। यही नैतिक नियम पूंजीवाद की भावना का आधार था जिसमें समय और प्रयत्नों का विवेकपूर्ण ढंग से लगाने के लिए कहा जाता था, ताकि अधिक-से-अधिक उपलब्धियां और मुनाफा हो। इसके उपरान्त यही भावना बुद्धिवादी पूंजीवाद के विकास के लिए एक पूर्व शर्त बन गई। दूसरे क्षेत्रों जैसे विज्ञान के विकास और शासन में भी तर्कशक्ति की ओर यही सामान्य प्रवत्ति स्पष्ट तौर पर देखी गयी।

- **यूरोप की जनसंख्या में वद्धि (Growth of European Population) :** जनसंख्या के विकास से प्रशासनिक कार्य बढ़ जाते हैं जिनका सामना केवल बड़े-बड़े संगठनों द्वारा किया जाता सकता है। दूसरी ओर बड़े-बड़े संगठनों में नौकरशाही आकार प्राप्त कर लेने की प्रवत्ति होती है।
- **लोकतंत्र (Democracy):** लोकतांत्रिक संस्थानों के विकास का दूसरा पक्ष तथा सामन्तों और कुलीन तत्वों के परम्परागत शासन का विरोध करना था उसको समाप्त करने में सहायता देना और साथ ही शिक्षा को प्रोत्साहन देना तथा ज्ञान और शिक्षा के आधार पर पदों पर नियुक्तियों का समर्थ करना।
- **जटिल प्रशासनिक समस्याओं की उत्पत्ति (Emergence of Complex Administrative Problems):** सरकारों के द्वारा किय जाने वाले कार्यों की जटिलता बड़े पैमाने पर नौकरशाही संगठनों को पैदा करती है। यही प्राचीन मिस्र में हुआ। वह देश जिसमें इतिहास में पहली बार नौकरशाही का बड़े पैमाने पर संगठन हुआ जब इसको नहरों का निर्माण करने और नियंत्रित करने जैसे जटिल कार्य करने का सामना करना पड़ा। आधुनिक समय में यूरोप में केन्द्रीयकरण पर आधारित नए राज्यों को कई ऐसे प्रशासनिक कार्यों से जूझना पड़ा जिनको अतीत में कोई भी नहीं जानता था। ने केवल उनको पहले से अधिक बड़े प्रदेशों और जनसमूहों पर नियंत्रण करना पड़ा, अपितु उनको इस प्रकार की सामाजिक सेवाएं प्रदान करनी पड़ीं जो पहले कोई राज्य नहीं करता था ।
- **संचार के आधुनिक रूप (Modern Forms of Communication):** संचार के आधुनिक साधनों के कारण अधिक जटिल और प्रभावी प्रकार के प्रशासन अर्थात् नौकरशाही की आवश्यकता हुई और इसके विकास में आसानी भी हुई। वैबर (Weber) का कथन है कि नौकरशाही का विकास इसलिए हुआ कि यह अपनी विवेकशीलता और तकनीकी उच्चता के कारण आधुनिक जटिल समाज की समस्याओं और कार्यों का सामना करने के लिए ये

सबसे अधिक उचित यंत्र सिद्ध हुआ है। इसी उच्चता के कारण नौकरशाही अधिक व्यापक बन गई है।

1-3-4-नौकरशाही के प्रकार (Types of Bureacuracy)

नौकरशाही का स्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक तत्वों से प्रभावित होता है। इतिहास के विभिन्न चरणों में नौकरशाही ने तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक प्रभाव में आकर अपना रूप तथा आकर बदला मॉर्सटिन मार्क्स (Morstein Marx) मोटे तौर पर नौकरशाही को चार श्रेणियों में बाँटा है- अभिभावक नौकरशाही, जातीय नौकरशाही, प्रश्रय या संरक्षण नौकरशाही तथा योग्यता पर आधारित नौकरशाही ।

(i) **अभिभावक नौकरशाही:** प्लेटो द्वारा वर्णित अभिभावकों ने अपने कार्यों में जनहित को सर्वोपरि रखा है। उन्हें समुदाय के न्याय तथा जनहित का संरक्षक माना जाता था। इन अभिभावकों को उनकी शिक्षा के आधार पर चुना जाता था। इस प्रकार की नौकरशाही चीन में 960 ईसवीं से पहले तथा रूप में 640 से 1740 ईसवीं के बीच विद्यमान थी। चीन की सरकार की सभी गतिविधियाँ प्लेटो के सिद्धांतों के अनुरूप थी, यद्यपि उन पर चीनी विचारक कन्फ्यूशियस के न्याय युक्ति संबंधी विचारों का प्रभाव था। अधिकारियों का मुख्य कर्तव्य लोगों के सामने एक आदर्श जीवन का उदाहरण पेश करना था। अधिकारियों का मुख्य कर्तव्य लोगों के सामने एक आदर्श जीवन का उदाहरण पेश करना था। उनका चुनाव उनकी विद्वत्ता के आधार पर होता था तथा उनको सही आचरण के लिये शास्त्रीय पद्धति के आधार पर प्रशिक्षण दिया जात था। उन अभिभावकों से आशा की जाती थी कि वे अपने में नैतिक सहनशीलता विकसित करें जिससे वे न्याय युक्ति के आधार पर अपनी सत्ता का प्रयोग कर सकें।अभिभावक नौकरशाही निरंकुशता को आदर्श मानती हैं इसीलिए यह परम्परावादी एवं रूढ़िवादी बन गयी है। यह भी सम्भव होता है

कि यह जनता के मामलों तथा तत्कालीन राजनैतिक समस्याओं में अपने को अलग रखे, इसीलिए यह जनमत की अवहेलना करती है, और निरंकुश बन जाती है।

(ii) **जातीय नौकरशाहीः** यह नौकरशाही सत्तारत व्यक्तियों के वर्गीय संबंधों से पैदा होती है। इसके अन्तर्गत पदाधिकारियों की नियुक्ति केवल एक ही वर्ग से होती है इसका अर्थ यह हुआ कि केवल उच्च अथवा जाति से संबंधित लोग की लोक सेवाओं की ओर आकृष्ट होते हैं। उदाहरण के लिए प्राचीन भारत में केवल ब्राह्मण या क्षत्रिय ही उच्चाधिकारी बन सकते थे। एफ. एम. मार्क्स का विचार है कि जातीय नौकरशाही एक अन्य रूप में प्रस्फुटित होती है, अर्थात् उच्च पदों के लिये योग्यता को जातिगत प्राथमिकताओं से जोड़ दिया जाता है। उदाहरण के लिए इंगलैंड में लोक सेवाओं के पदों के लिये कुलीन वर्ग के लोगों को प्राथमिकता दी जाती थी। भारतीय प्रशासनिक सेवा के बारे में टिप्पणी करते हुए एप्पलवी (Appleby) ने कहा है कि इस सेवा के पदाधिकारी विभिन्न विशेष वर्गों में बाँटे जाते हैं और उनको विशेष सेवाएँ विशेष रूपों में उपलब्ध कराई जाती है। यह अधिकारी पद, वर्ग, पदवी एवं सेवाओं के वर्गीकरण के आधार पर व्यवस्थित किये जाते हैं। चूंकि नौकरशाही में उच्च बौद्धिक स्तर की आवश्यकता होती है। इस बात की सम्भावना बढ़ जाती है कि उच्च वर्ग एवं जाति के लोग ही उसमें आ सकते हैं। विभिन्न सेवाओं के लिये अलग-अलग सामाजिक स्तर बनाए जाते हैं। यह देखा गया है कि लोक सेवक अपनी गतिविधियों द्वारा अपनी जातियों के लिये अधिक कार्य करने की कोशिश करते हैं। जातीय नौकरशाही के कुछ उदाहरण इस प्रकार है- प्रारम्भिक रोमन साम्राज्य के अंतर्गत लोक सेवाएँ: मेज़ी (Meiji) संविधान के अंतर्गत जापानी लोक सेवाएँ, 1950 के दशक में फ्रांसीसी लोक सेवाएँ।

(iii) **प्रश्रय अथवा संरक्षण नौकरशाही:** इस प्रकार की नौकरशाही को पद पुरुस्का व्यवस्था (Spoil-system) भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत संरक्षण या प्रश्रय को राजनैतिक नियंत्रण के एक साधन के रूप में देखा जाता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत मन्त्रियों या

चुने हुए प्रतिनिधियों के रक्षितों को लोक सेवाओं के लिये नामजद किया जाता है। सार्वजनिक पदों को उनके समर्थकों में व्यक्तिगत या राजनैतिक इनामों की तरह बाँटा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी से पहले ब्रिटेन में इस व्यवस्था ने कुलीन वर्ग को लोक सेवाओं में प्रवेश करने में मदद दी। अमरीका को संरक्षण नौकरशाही का जनक माना जाता है। वहाँ पर यह माना जाता था कि किसी को भी लोकसेवाओं में नियुक्ति का दूसरे से अधिक अधिकार नहीं है। इसलिये अपने व्यक्तियों को नियुक्त करके संरक्षण प्रदान किया जा सकता था, लेकिन कालांतर में संरक्षण नौकरशाही की निंदा होने लगी क्योंकि इसमें निम्न दोष आ गए थे:(i) योग्यता का अभाव,(ii) अनुशासनहीनता,(iii) अधिकारियों का लालचीपन,(iv) दोषपूर्ण पद्धतियाँ,(v) पक्षपात,(vi) सेवा भवन का अभाव

(iv) **योग्यता पर आधारित नौकरशाही:** हमने अब तक नौकरशाही के जितने प्रकारों का विवरण दिया है, उनके दोषों की प्रतिक्रिया से ही योग्यता पर आधारित नौकरशाही का जन्म हुआ। इस प्रकार नौकरशाही में नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है और उसमें निष्पक्ष मापदंडों को प्रयोग किया जाता है। एक बार प्रवेश के बाद पदवी तथा स्थायित्व सुनिश्चित रहते हैं। आधुनिक युग में नौकरशाही के अन्य प्रकारों की तुलना में योग्यता पर आधारित नौकरशाही प्रशासनिक व्यवस्था के ऊपर राजनैतिक नियंत्रण पर जोर देती है। इस नौकरशाही को अन्य प्रकार की नौकरशाही से अधिक प्रभावी माना जाता है, क्योंकि यह प्रशासनिक मामलों में तार्किकता को महत्त्व देती है।

2-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

2-4-1-मैक्स वेबर का नौकरशाही का सिद्धान्त (Bureaucratic Theory of Max Weber)

मैक्स वेबर ने औद्योगिक क्रान्ति के प्रारम्भिक दिनों में प्रबन्ध प्रणाली में व्याप्त व्यक्तिगत अधीनता, व्यक्तिपरक निर्णयों, निर्दयता, भाई-भतीजावाद आदि के विरुद्ध आदर्श नौकरशाही का मॉडल प्रस्तुत किया था। उसके अनुसार नौकरशाही एक सर्वव्यापी सामाजिक घटना है जो

'सामुदायिक क्रिया' को विवेकपूर्ण रूप में 'सामाजिक क्रिया' में बदलने का साधन है। मैक्स वेबर ने इस बात पर बल दिया है कि एक साधन अथवा यन्त्र के रूप में आधुनिक नौकरशाही संगठन का आकार स्वाभाविक तथा स्वयं विकसित है। वेबर कहता है कि वैधिक सत्ता द्वारा समर्पित नौकरशाही संगठन का सबसे प्रभावशाली स्वरूप है। उसके अनुसार, "विशुद्ध नौकरशाही के रूप का प्रशासकीय संगठन, तकनीकी दृष्टि से श्रेष्ठतम क्षमता प्राप्त करने की योग्यता रखता है और इसी कारण व्यक्तियों पर सुनिश्चित नियन्त्रण स्थापित करने का सबसे अधिक विवेकयुक्त साधन है। यह अन्य सभी संगठनों के स्वरूपों से निश्चितता, स्थायोपन तथा दृढ अनुशासन के विश्वास के लिए प्रसिद्ध है। इस प्रकार संगठनों के अध्यक्षों तथा उसके साथ कार्य करने वालों को इसके कारण सही अनुमान लगाना सम्भव होता है। अन्ततः यह गम्भीर दक्षता तथा व्यापक कार्यक्षेत्र दोनों की दृष्टि से श्रेष्ठ एवं समस्त प्रशासकीय कार्य करने की योग्यता रखता है।"

साल 1920 में वेबर की किताब ''विर्टशॉफ्ट एंड गेसलशॉफ्ट'' (Wirtschaft und Gesellschaft) प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने सत्ता के सिद्धांत के बारे में बताया है। वेबर के अनुसार सत्ता के तीन रूप हैं और वे हैं- परंपरावादी सत्ता, चमत्कारिक सत्ता एवं कानूनी सत्ता।

- **परंपरावादी सत्ता**-परंपरावादी सत्ता का इस्तेमाल करने वाले लोगों को आमतौर पर 'मालिक' कहा जाता है। उन्हें यह सत्ता 'वंश विरासत' की सामाजिक परंपरा के कारण हासिल होती है जिसमें उनका कोई निजी प्रयास शामिल नहीं होता है, लेकिन इस ओहदे का आनंद वे निजी रूप से ही उठाते हैं। ऐसे प्रभुत्वसंपन्न मालिकों का निर्णय उनकी व्यक्तिगत इच्छाओं पर निर्भर होता है। उन्हें इसके लिये किसी तार्किक आधार की ज़रूरत नहीं होती है। उनकी आज्ञाएँ रिवाजों की आड़ में निजी संतुष्टि का एक जरिया होती हैं। इस तरह के मालिकों के आदेश का पालन करने वाले लोगों को 'अनुचर' कहते

हैं। ये अनुचर अपने मालिकों के आदेशों का पालन पूरी ईमानदारी व आदर भाव के साथ करते हैं। इस पुश्तैनी सत्ता में जो व्यक्ति आदेशों का पालन करते हैं, वे निजी सेवक, घरेलू कर्मचारी और मालिक के चहेते होते हैं। यही कारण है कि ये लोग अपनी तमाम गतिविधियों और व्यवहार के लिये अपनी बुद्धि के बजाय मालिक की इच्छा पर निर्भर होते हैं। मालिक की इच्छा के अनुसार इन्हें अपने तौर-तरीकों में बदलाव लाना पड़ता है। ऐसे में किसी मामले को लेकर उनकी राय बनती-बदलती रहती है। फिर भी इनकी तमाम गतिविधियों को रिवाजों और परंपरा के नाम पर वैधता हासिल होती है।

- **चमत्कारी सत्ता**-'चमत्कार' शब्द ईसाई धर्म की प्राचीन शब्दावली से लिया गया है। इस व्यवस्था के तहत किसी नेता, जादूगर, पैगंबर या कुशल वक्ता के द्वारा अपनी शक्ति का प्रयोग अलौकिक दैवीय या असाधारण गुणों के बल पर किया जाता है। इसमें लोग सत्ता प्राप्त व्यक्ति की आज्ञा का पालन उसकी असाधारण क्षमताओं के चलते करते हैं, न कि वे किसी नियम या पद मर्यादा के बंधन में बंधकर करते हैं। चमत्कारिक नेता अपने शासन को चलाने के लिये जो व्यवस्था बनाता है, उसमें वह अधिकारों, पदोन्नति आदि का विभाजन अनुचरों की योग्यता व क्षमता के आधार पर नहीं करता, बल्कि उनके निजी समर्पण को देखकर करता है। और इस प्रकार सभी अनुचर पूरी तरह से अपने मालिक की इच्छा और अनिच्छा के अधीन काम करते हैं।
- **वैधानिक सत्ता**-वेबर, नौकरशाही व्यवस्था को वैधानिक सत्ता का सबसे प्रमुख उदाहरण मानते हैं। वैधानिक सत्ता का स्रोत व्यक्ति की निजी प्रतिष्ठा में निहित नहीं होता, बल्कि उन नियमों में निहित होता है जिनके तहत वह एक विशिष्ट पद पर आसीन होता है। इस सत्ता का स्रोत स्वयं राज्य के कानून होते हैं और इनका अधिकार क्षेत्र सीमित होता है। उस अधिकार क्षेत्र से बाहर कोई भी शासक अपनी सत्ता का प्रयोग नहीं कर सकता है।

सत्ता के इन तीन प्रकारों में से वेबर कानूनी सत्ता प्रणाली को उसमें निहित तार्किकता के कारण ज़्यादा पसंद करते हैं। इतना ही नहीं, वेबर ज़ोर देकर कहते हैं कि, सिर्फ कानूनी सत्ता प्रणाली ही है, जो आधुनिक सरकारों के लिये उपयुक्त है।

तो इस प्रकार वेबर ने सत्ता के तीन प्रकारों को विस्तृत ढंग से समझाया है। वेबर यह भी मानते हैं कि, तीनों प्रकार की सत्ताएँ अलग-अलग होने के बावजूद आपस में एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं और इनकी वैधता तभी तक बनी रहती है जब तक शासित लोग इन्हें स्वीकृति प्रदान करते हैं। चमत्कारिक सत्ता की कुर्सी तब हिलती है जब करिश्माई व्यक्ति निरंकुशता की सभी हदें पार कर जाता है और परंपराओं का खुलेआम उल्लंघन करता है।

2-4-2-नौकरशाही की विशेषताएं (Characteristics of Bureaucracy)

वैबर (Weber) का कहना है कि नौकरशाही का विकास इसलिए हुआ है कि यह अपनी विवेकशीलता और तकनीकी उच्चता के कारण आधुनिक जटिल समाज की समस्याओं और कार्यों का सामना करने के लिए सबसे उचित यन्त्र साबित हुआ है। इसी उच्चता के कारण नौकरशाही अधिक व्यापक बन गई और भविष्य में इसका और भी अधिक व्यापक बन जाना स्वाभाविक है। मैक्स वैबर ने नौकरशाही के आदर्श रूप को कुछ विशेषताएं बताई हैं जिनके अध्ययन के बिना नौकरशाही का पूर्ण ज्ञान नहीं हो सकता। ये विशेषताएँ इस प्रकार है-

(i) **पदसोपान पद्धति (Hierarchical Structure)-** नौकरशाही प्रणाली पदसोपान पद्धति पर आधारित है अर्थात् इसमें विभिन्न स्तर (Levels) होते हैं। इस व्यवस्था में कर्मचारियों के मध्य उच्च अधीनस्थ सम्बन्ध (Superior Subordinate relationship) पाया जाता है। इसमें आदेश के सूत्र ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होते हैं। इस तरह संगठन का ढांचा एक "पिरामिड' (Pyramid) की तरह बन जाता है जिसमें हर काम उचित मार्ग (Through proper channel) होता है।

(ii) **योग्यता के आधार पर चयन (Selection on the Basis of Qualification)-** नौकरशाही की एक प्रमुख शेषता यह है कि इसमें प्रत्येक पद के लिए योग्यताएँ निर्धारित की जाती हैं। केवल उन्हीं व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता जो कार्यकुशल हो और सरकारी कार्यों का पूर्ण क्षमता से संचालन कर सके। इतना ही नहीं कर्मचारियों की पदोन्नति भी योग्यता के आधार पर होती है।

(iii) **स्पष्ट श्रम विभाजन (Cleareut Division of Labour)-** नौकरशाही में अंगन के सभी कर्मचारियों के बां स्पष्ट तथा सुनिश्चित रूप से कार्यों का विभाजन किया जाता है। प्रत्येक कर्मचारी अपने निर्धारित कार्यक्षेत्र में रहते हुए अपनेकार्य के प्रति उत्तरदायी ठहराया जाता है।

(iv) **निश्चित कार्यविधियों (Set Procedures)–**करशाही व्यवस्था में संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जी भी क्रियाएँ अपनाएँ उनकी रोशियों पूर्व निर्धारित और निश्चित होती है। समस्त कार्य पूर्व-निश्चित नियमों के अनुसार किए जाते है। इन निश्चित कार्यविधियों से प्रशासन में निष्पक्षता और दक्षता उत्पन्न होती है।

(v) **कठोर एवं व्यवस्थित अनुशासन तथा नियन्त्रण (Strict and Systematic Discipline and Control)-** नौकरशाही व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यरत कर्मचारी पदसोपान पद्धति के अनुसार अनुशासित एवं निमन्त्रित होते हैं। स्वच्छता से अथवा अनिरिहकर अपना कार्य नहीं कर सकते। निम्न स्तर के कर्मचारी अपने उच्च स्तर के पदाधिकारियों के आदेशों का पालन करते हैं। प्रत्येक स्तर पर कार्य करने वाला कर्मचारी अपने वरिष्ठ स्तरीय अधिकारी के प्रति जमाव होता है। इस तरह एक कठोर और व्यवस्थित अनुशासन तथा नियन्त्रणको व्यवस्था की जाती है।

(vi) **अधिकारिक रिकॉर्ड (Official Record)-** नौकरशाही संगठन में सभी प्रकार के निर्णयों और गतिविधियों को औपचारिक रूप से रिकॉर्ड कर लिया जाता है। इस रिकॉर्ड को

भविष्य की आवश्यकताओं के लिए सुरक्षित रख लिया जाता है। रिकॉर्ड रखने का कार्य संगठन में फाइलिंग प्रणाली का व्यापक प्रयोग करके किया जाता है।

(vii) **पृथक् वर्ग (A Class in itself)-** नौकरशाही व्यवस्था में अधिकारियों को अपने पद के अनुरूप अधिकार एवं शक्ति मिली होती है जो समाज के अन्य लोगों को नहीं मिली होती मे अधिकारी न तो जन साधारण के प्रति अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं और न ही स्वीकार करते हैं। यह सामान्य समाज से अलग एक वर्ग बन जाता है।

(viii) **अहं भाव (The spirit of Pride)-** नौकरशाही एक पृथक् वर्ग बन कर अहंवादी भावना से परिपूर्ण हो जाती है। नौकरशाही का प्रशिक्षण तकनीकी आधार पर होता है। ये मात्र कुशल प्रशासक बनकर रह जाते हैं और यन्त्र की भान्ति कार्य करते हैं। ये अपने विशेषाधिकारों से तथा पद की शक्ति व सत्ता से स्वयं को आम लोगों से ऊँचा समझने लगते हैं। इनमें अहंभावना भर जाती है जिससे ये जनता के सेवक नहीं अपितु उसके स्वामी बन जाते हैं।

(ix) **अवैयक्तिक सम्बन्ध (Impersonal Relations)-** नौकरशाही संगठन में जो भी कार्यविधियों अथवा निर्णय लिए जाते हैं वे अवैयक्तिक आधार पर लिए जाते हैं अर्थात् संगठन के निर्णय लेते समय पूर्णतया औपचारिक तथा वैधानिक दृष्टिकोण अपनाया जाता है। मानवीय भावनाएं अथवा सम्बन्धों को महत्त्व नहीं दिया जाता। जो भी निर्णय लिए जाते हैं. उनके लिए पूर्व निर्धारित नियम होते हैं। कोई भी निर्णय किसी व्यक्ति अथवा अधिकारी विशेष का निर्णय नहीं अपितु संगठन का निर्णय माना जाता है।

(x) **विधिपूर्वक व्यवस्था (Consistent System of Abstract Rules)**- नौकरशाही व्यवस्था में कार्यों को नियमित रूप से पूरा करने के लिए विधिपूर्वक व्यवस्था की जाती है। इसलिए संगठन में उन्हीं व्यक्तियों को नियुक्ति को जाती है जो निर्धारित योग्यताएँ रखते हैं।

(xi)**विशेषज्ञता (Specialization)-** नौकरशाही में कर्मचारियों का चयन उनकी योग्यताओं के आधार पर किया जाता है। कर्मचारी अथवा अधिकारी अपने-अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ होते हैं।

(xii) **एकाधिकार का अभाव (Absence of Monopoly)-** नौकरशाही के सदस्य नियमों द्वारा संचालित होते हैं। उसका किसी पद पर विशेषाधिकार अथवा एकाधिकार नहीं होता संगठन जब चाहे किसी कार्यरत अधिकारी का तबादला (Transfer) कर सकता है।

(xiii) **वैतनिक अधिकारी (Paid Officials)-** नौकरशाही संगठन के सदस्यों की आय का साधन उनका वेतन होता है। विभिन्न स्तरों पर नियुक्त अधिकारियों का वेतन स्तर भी विभिन्न होता है। इनके लिए न सिर्फ वेतन बल्कि पेन्शन की भी व्यवस्था की जाती है।

(xiv) **लालफीताशाही (Red Tapism)**- नौकरशाही की प्रमुख विशेषताओं में से लाल फीताशाही भी एक है। साल वह है जिसमें विनियमों (Regulations) के पालन पर आवश्यकता से अधिक ध्यान दिया जाता है और प्रत्येक कार्यवाही उचित मार्ग (Through proper channel) से ही सम्पन्न की जाती है। प्रशासकीय अधिकारी कठोर नियमों पालन करते हैं जिससे निर्णय लेने से विलम्ब होता है। नौकरशाही को विशेषताओं का वर्णन मैक्स वैबर इस प्रकार करता है कानूनी शक्ति के प्रयोग की सबसे उत्तम आय नौकरशाही है। संगठन का अध्यक्ष ही केवल धन, निर्वाचन और विरासत के कानूनों के कारण अपनी स्थिति बनाता है। फिर भी उसकी शक्ति कानूनी क्षेत्र में योग्यता की होती है। प्रशासन का सम्पूर्ण ढांचा उस बड़ी शक्ति के अधीन, शुद्ध रीति से व्यक्तिगत कर्मचारियों से बना होता है जिसमें कर्मचारियों की नियुक्ति अग्रलिखित तथ्यों के आधार पर होती है-

- कर्मचारियों को निश्चित पदसोपानों में संगठित किया गया होता है।
- कार्यालय में व्यक्ति की नियुक्ति के लिए 'स्वतन्त्र चयन' का सिद्धान्त लागू किया जाता है।

- कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है उनका चुनाव नहीं किया जाता। कर्मचारियों का चयन उनकी तकनीकी परीक्षा अथवा प्रमाण पत्र दोनों के आधार पर किया जाता है।
- कानूनी दृष्टि से प्रत्येक कार्यालय की शक्तियां निश्चित होती है।
- कर्मचारियों का प्रमुख कार्य उनका कार्यालय समझा जाता है।
- कर्मचारियों को अपना कार्य करते समय क्रमबद्ध अनुशासन तथा कठोर नियन्त्रणाधीन रहना पड़ता है।
- कर्मचारी व्यक्तिगत दृष्टि से स्वतन्त्र होते हैं। वे केवल सरकारी कार्यों के लिए नियन्त्रित होते हैं।
- कर्मचारियों को निश्चित वेतन दिया जाता है। इनका वेतनमान पदसोपान के आधार पर निश्चित किया जाता है, किन्तु कर्मचारियों के पद और सामाजिक स्तर एवं उत्तरदायित्व को भी ध्यान में रखा जाता है।
- नौकरशाही एक व्यवसाय है तथा इसमें पदोन्नति की प्रणाली विशिष्टता या सफलताओं अथवा दोनों के आधार पर होती है तथा पदोन्नति विशिष्ट अधिकारी पर निर्भर करती है।
- कर्मचारी को विशेष परिस्थिति में ही नियुक्तिकर्त्ता प्रशासन से निकाल सकता है और वह भी निजी प्रशासन में। इसके अलावा कर्मचारी सदैव त्यागपत्र देने के लिए स्वतन्त्र रहते हैं।

2-4-3- मैक्स वेबर के नौकरशाही सिद्धांत के सकारात्मक पक्ष (Positive Sides of Max Weber's Bureaucratic Theory)-मैक्स वेबर ने नौकरशाही को एक यन्त्र के रूप में स्वीकार किया है। इसलिए उनका मानना है कि एक यन्त्र के रूप मैं नौकरशाही को नियन्त्रित करना आसान है। मार्टिन एल्बरो (Martin Albrow) नौकरशाही को नियन्त्रित करने के लिए निम्नलिखित उपाय बताता है-

(i) **विश्वास बनाए रखने में**-नौकरशाही अवैयक्तिक नियमों द्वारा संचालित होती है, जिसके चलते लोगों का प्रशासन पर विश्वास बना रहता है। इस प्रणाली के अंतर्गत कार्य अधिक सूक्ष्मता, तेजी, मितव्ययिता और बिना किसी विवाद के संपन्न होता है।

(ii) **प्रजातंत्र के लिये अनिवार्य**-मैक्स वेबर कहते हैं कि, जैसे-जैसे प्रजातंत्र का विस्तार होता है वैसे-वैसे नौकरशाही पर आधारित प्रशासन व्यवस्था की ज़रूरत भी बढ़ती जाती है। वेबर की इन भावनाओं के लिये जूलियन फ्रायड ने लिखा है, ''यह सामान्यत: स्वीकार कर लिया गया है कि प्रजातंत्रीकरण और नौकरशाही साथ-साथ चलते हैं।''

(iii) **शिक्षा के स्वरूप में बदलाव**-नौकरशाही की ज़रूरतों ने शिक्षा के स्वरूप को भी प्रभावित किया है। विभिन्न क्षेत्रों में कर्मचारियों की माँगों को देखते हुए स्कूलों, कॉलेज़ों और विश्वविद्यालयों में शिक्षण के पाठ्यक्रम व प्रशिक्षण के तरीके बदले जा रहे हैं। आज के समय में डिप्लोमा, सर्टिफिकेट्स, डिग्री आदि का महत्त्व बढ़ गया है।

(iv) **सामाजिक अंतरों को कम करना**-नौकरशाही एक ऐसी संगठन प्रणाली है जो आर्थिक और सामाजिक भेदों को दूर करती है और सामाजिक समानता लाने का प्रयास करती है। वस्तुनिष्ठ शैक्षिक प्रमाणपत्रों व औपचारिक परीक्षाओं के आधार पर विभिन्न पदों पर नियुक्तियाँ की जाती हैं। इन नियुक्तियों को परिवार, वंश या आर्थिक संपन्नता प्रभावित नहीं करती है। इस प्रकार नौकरशाही सामाजिक अंतरों को पाटने का भी कार्य करती है।

2-4-4-मैक्स वेबर के नौकरशाही सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Max Weber's Theory of Bureaucracy)

मैक्स वेबर ने स्वयं कहा है कि नौकरशाही एक यन्त्र के रूप में प्रयोग में लाई जाती है जिसमें निगम की कठोरता और मानवीय तत्त्व की पूर्णतया अवहेलना की जाती है। वैवर के

शब्दों में "नौकरशाही प्रशासन की ऐसी व्यवस्था है जिसकी विशेषता विशेषज्ञता, निष्पक्षता तथा मानवता का अभाव होता है। इस दृष्टि से कैंसर के नौकरशाही सिद्धान्त की निम्नलिखत आलोचनाएं की गई हैं-

(i) मैक्स वेबर का नौकरशाही का आदर्श प्रारूप सैद्धान्तिक रूप के एक आदर्श नहीं बन पाया। उसने नौकरशाही को यन्त्र माना है, इससे नौकरशाही का दृष्टिकोण असंतुलित हो गया।

(ii) वेबर के नौकरशाही के सिद्धान्त में पदसोपान, नियमों एवं नियन्त्रणों को कठौर व्यवस्था आदि विशेषताओं से अधिकतम प्रभावकारिता उत्पन्न नहीं होती।

(iii) वैबर का नौकरशाही सिद्धान्त उत्तरदायित्व को टालने, तनाव, नियमों में अत्यधिक सम्मोह संगठनात्मक लक्ष्यों के स्थान पर औपचारिकता को उत्पन्न करने वाला है।

(iv) वेबर के नौकरशाही सिद्धान्त में व्यक्तिगत और व्यावहारिक तत्त्वों पर ध्यान नहीं दिया गया। इससे कई दुष्परिणाम सामने आए हैं।

(v) वैबर का नौकरशाही सिद्धान्त इतना नियमबद्ध है कि यह जड़ संगठन को पैदा करने वाला बन जाता है। यह बदलती हुई परिस्थितियों का सामना नहीं कर पाता। वैवर के नौकरशाही सिद्धान्त को वेबलन (Veblen) ने प्रशिक्षित अयोग्यता का नाम दिया है।

(vi) वैबर का नौकरशाही सिद्धान्त बदलती हुई परिस्थितियों का सामना नहीं कर पाता। इसलिए यह विकासशील देशों की आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन के कार्यों को संतोषजनक रूप से पूरा नहीं कर सकता। इसमें परिवर्तन के प्रति अनुकूलन की क्षमता बहुत धीमी है।

(vii) वैबर का नौकरशाही सिद्धान्त औपचारिकताओं से परिपूर्ण है। इसमें केवल प्रक्रिया पर ही ध्यान दिया जाता है। कार्यों पर नहीं।

(viii) यद्यपि वैबर ने नौकरशाही के आदर्श प्रारूप में 'उत्तरदायित्व' पर अत्यधिक बल दिया है, किन्तु इस व्यवस्था में उत्तरदायित्व स्वीकारोक्ति नहीं अपितु उत्तरादायित्व टालने को बल मिलता है। फिफनर (Priffner) के शब्दों में "दैनिक क्रियाविधि अनमनीयता को तथा उत्तरदायित्व की चिन्ता विलम्ब और विधिवाद को जन्म देती है।"

(ix) नौकरशाही में औपचारिक नियमों का अन्धानुसरण तथा कागजी कार्यवाही पर अधिक समय लगाया जाता है अर्थात् कार्यों की अपेक्षा प्रक्रिया को महत्त्व दिया जाता है जिसमें लाल फीताशाही जैसी बुराइयां सामने आती हैं।

(x) नौकरशाही में कर्मचारी औपचारिक नियमों व अपने पद के दायित्वों से बंधे होते हैं जिससे उनकी निजी रचनात्मकता, सूझ-बूझ एवं पहल करने के साहस जैसी शक्तियों का गला घूंट जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि, व्यक्ति केवल एक कर्मचारी के रूप में अपनी नौकरी को सुरक्षित रखने के बारे में सोचने लगता है और वह एक नीरस और उबाऊ दिनचर्या में फंसा रहता है।

(xi) नियमों एवं विधियों की अवैयक्तिकता ऐसे विशेषज्ञों को जन्म दे सकती है, जो अपने सीमित कार्यक्षेत्र में सिमटे समग्र संगठन के लक्ष्यों को भूल जाएँ। यह भी संभावना हो सकती है कि नियमावली व प्रक्रिया ही उनके लिये साध्य बन जाए। इस संबंध में वेबर का कहना है कि, दफ्तरी आचरण की अवैयक्तिकता की प्रवृत्ति 'आत्मविहीन विशेषज्ञों' को जन्म देने की होती है।

(xii) नौकरशाही में अधिकारी जनता से दूर बड़े-बड़े भवनों में काम करते हैं जिससे वे शांति, व्यवस्था और सुरक्षा के आदी हो जाते हैं। इसलिये वेबर का कहना है कि, हम जान-बूझ कर ऐसे व्यक्ति बन जाते हैं जिसे व्यवस्था या शांति की सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है और यदि एक क्षण के लिये भी यह व्यवस्था नष्ट हो जाए तो हम घबरा जाते हैं तथा खुद को निस्सहाय समझने लगते हैं।

(xiii) वेबर का मानना है कि, युक्तिकरण या तार्किकता (Rationalization) की एक प्रमुख अभिव्यक्ति नौकरशाही है, जो कि वस्तुत: अतार्किक है। तार्किकता हमें उन परंपरात्मक मूल्यों से अलग कर देती है जो मानव जीवन को अर्थ और लक्ष्य प्रदान करते हैं।

इस तरह से, हम वेबर द्वारा बताए गए नौकरशाही के नकारात्मक परिणामों से भी परिचित होते हैं। इसके आधार पर हम यह भी कह सकते हैं कि, वेबर नौकरशाही के

अन्धपुजारी नहीं थे, जैसा कि कुछ लोग उन्हें समझने की भूल करते हैं। अन्ततः कहा जा सकता है कि मैक्स वैवर का नौकरशाही सिद्धान्त राज्य की प्रशासन व्यवस्था को उजागर करता है। यह उचित ही कहा गया है कि वैवर के नौकरशाहों सम्बन्धी विचारों को जाने बिना नौकरशाही का सही अध्ययन नहीं किया जा सकता। लेकिन मैक्सवर ने अपने नौकरशाही के आदर्श रूप में जिन विशेषताओं का उल्लेख किया उनसे नौकरशाही आदर्श नहीं बन सकता। नौकरशाही मानवीय व्यवहार से सम्बन्धित है जिसका एक यन्त्रवत् अध्ययन अनुचित होगा। वैवर का नौकरशाही सिद्धान्त आधुनिक नौकरशाहों के लिए आधारभूत ढांचा है जिसको परिवर्तित परिस्थितियों के सन्दर्भ में संशोधन की आवश्यकता है।

2-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(i) पुस्तक 'सामाजिक और आर्थिक संगठन का सिद्धान्त' की रचना किसने की है

(ii) संगठन का नौकरशाही सिद्धांत किसने दिया

(iii) नौकरशाही शब्द का का प्रयोग प्रथम बार कब और किसने किया था

(iv) किसके अनुसार प्रशासकों या अधिकारियों द्वारा किया गया शासन ही नौकरशाही है।

2-6-सारांश (Summary)

जर्मन समाजशास्त्री मैक्स वेबर ने नौकरशाही के आदर्श रूप का वर्णन किया है। वेबर पहले ऐसे विद्वान हैं जिन्होंने नौकरशाही के नकारात्मक पहलुओं के बजाय सकारात्मक पहलुओं पर ज़्यादा बल दिया और नौकरशाही के आदर्श मॉडल का प्रतिपादन किया। वेबर ने नौकरशाही के बारे में बताया कि, नियुक्त किये गए अधिकारियों का समूह नौकरशाही कहलाता है अर्थात् प्रत्येक वह व्यक्ति जो नियुक्त है, नौकरशाह है। वेबर ने अपने सिद्धांत में नौकरशाही की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई हैं-**पदसोपान-** नौकरशाही में विशिष्ट कार्य,

विशेष पदों के लिये ही निर्धारित होते हैं। यहाँ कार्य, योग्यता, अधिकार व उत्तरदायित्व में एक अंतर रहता है। प्रत्येक अधीनस्थ कार्यालय अपने ऊपर के कार्यालय के नियंत्रण व देखरेख में होता है।**व्यवसायिक योग्यता-** सभी कर्मचारियों को एक वस्तुनिष्ठ कसौटी के आधार पर चुना जाता है, जिसके चलते उनमें व्यवसायिक योग्यता होती है। वे अपने संबंधों, खर्चों व अन्य चीज़ों को लेकर दूसरों के साथ औपचारिक तरीके से व्यवहार करते हैं। साथ ही, उनकी आमदनी में स्थायित्व होता है और उन्हें उन्नति के पर्याप्त अवसर उपलब्ध होते हैं।**नियम व प्रक्रिया-** किसी भी संगठन में कर्मचारियों के कर्तव्य व अधिकार तथा काम करने की पद्धति स्पष्ट रूप से कुछ निश्चित नियमों द्वारा तय व प्रशासित होती है, जो लिखित, तार्किक व अवैयक्तिक होते हैं। ये भी कहा जाता है कि, इन नियमों का पालन स्वेच्छाचारिता को रोकता है और कार्यकुशलता को बढ़ावा देता है।**विशेषीकरण-** किसी भी संगठन में प्रत्येक कर्मचारी की भूमिका उसके काम के अनुसार तय कर दी जाती है और निर्धारित किये गए उन्हीं कामों की सीमा के भीतर उससे अपेक्षाएँ की जाती हैं।**संगठनात्मक संसाधन-** नौकरशाह, संगठन के संसाधनों को निजी तौर पर उपयोग नहीं कर सकते हैं। जैसे- आधिकारिक कर व निजी आमदनी पूरी तरह से अलग होती है।**लिखित दस्तावेज़-** लिखित दस्तावेज़ वेबेरियन नौकरशाही के केंद्र में हैं। सभी प्रशासनिक कार्य, निर्णय और नियम लिखित रूप में रिकॉर्ड किये जाते हैं। ये दस्तावेज प्रशासन को लोगों के प्रति उत्तरदायी बनाते हैं।**एकतंत्री प्रारूप-** इसका अर्थ यह है कि, नौकरशाही के कुछ कार्यों को अन्य संगठनों द्वारा नहीं किया जा सकता है। कुछ कार्यों पर उनका एकाधिकार होता है और केवल प्राधिकृत अधिकारी ही उस कार्य को संपन्न कर सकते हैं।, मैक्स वेबर का नाम एक तरह से नौकरशाही के पर्यायवाची के तौर पर प्रयोग किया जाता है, क्योंकि समाज विज्ञान के जिन विद्वानों ने नौकरशाही की अवधारणा को बताने का प्रयास किया है, उनमें वेबर का स्थान अद्वितीय है। हालाँकि, अनेक विद्वानों ने नौकरशाही की कड़ी आलोचना की है, किंतु इसके बावजूद न तो हम इस

व्यवस्था को छोड़ पाए हैं और न ही संगठन के कार्य संपादन के लिये कोई दूसरा विकल्प ही प्रस्तुत कर पाए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि नौकरशाही में कुछ गुण अंतर्निहित हैं।

2-7-सूचक शब्द (Key Words)

(i) **नौकरशाही:** किसी बड़ी संस्था या सरकार के परिचालन के लिये निर्धारित की गयी संरचनाओं एवं नियमों को समग्र रूप से अफसरशाही, नौकरशाही या ब्यूरोक्रैसी (bureaucracy) कहते हैं।

(ii) **संगठन: वह** सामाजिक व्यवस्था या युक्ति है जिसका लक्ष्य एक होता है, जो अपने कार्यों की समीक्षा करते हुए स्वयं का नियन्त्रण करती है, तथा अपने पर्यावरण से जिसकी अलग सीमा होती है।

(iii) **लाल फीताशाही:** जब अत्यधिक नियमों एवं नियंत्रण के कारण अनावश्यक बिलम्ब किया जाता है तो इसे लाल फीताशाही (Red tapism) कहते हैं।

(iv) **अहं भाव-** मनुष्य में होनेवाला यह ज्ञान या धारणा कि मैं हूँ या मैं करता हूँ तथा मेरी औरों से पृथक एवं स्वतंत्र सत्ता है

(v)

2-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

(i) संगठन की नौकरशाही विचारधारा की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(ii) संगठन के नौकरशाही सिद्धान्त की विशेषताओं का वर्णन करो।

(iii) संगठन के नौकरशाही सिद्धान्त के सकारात्मक व नकारात्मक पक्ष की व्याख्या करें।

2-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

(i) मैक्स वेबर

(ii) मैक्स वेबर

(iii) 1745 में फ्राँसीसी अर्थशास्त्री विन्सेट डी गोर्नी (Vincent de Gournay) ने किया था।

(iv)**हर्मन फाईनर के अनुसार**

2-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा,डॉ हरी चंद्र शर्मा ,त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) लोक के प्रशाशन सिद्धांत विष्णु भगवान, विद्याभूषण एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr.Parveen Sharma
Lesson No.: 3	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
मानव संबंध सिद्धांत (एल्टन मेयो) और वाजिब निर्णय-निर्माण (हर्बर्ट साइमन) Human Relations Theory (Elton Mayo) and Rational Decision-Making (Herbert Simon)	

अध्याय की संरचना-

3-1-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

3-2-परिचय (Introduction)

3-3- अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

3-3-1-मानव संबंधी सिद्धांत का अर्थ एंव परिभाषाएं (Meaning and Definition of human relations theory)

3-3-2-मानव सम्बन्ध उपागम की विशेषताएँ (Characteristics of Human Relations Approach)

3-3-3-एल्टन मेयो का मानव संबंध सिद्धांत (Elton Mayo's Human Relations Theory)

3-3-4-एल्टन मेयो के मानव संबंधी सिद्धांत की आलोचना (Criticism of Elton Mayo's Anthropological Theory)

3-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

3-4-3-निर्णयन का अर्थ परिभाषा (Meaning and definition of decision making)

3-4-2-निर्णयन के लक्षण या विशेषताएँ (Characteristics of Decision-Making)

3-4-3-निर्णयन के प्रकार (Types of Decision Making)

3-4-4-निर्णयन की प्रक्रिया (Decision Making Process)

3-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

3-6-सारांश (Summary)

3-7-सूचक शब्द (Key Words)

3-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

3-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

3-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

3-1-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

i. विद्यार्थियों को एल्टन मेयो के मानव संबंधी सिद्धांत से अवगत करवाना.

ii. विद्यार्थियों को संगठन के मानव संबंधी सिद्धांत से अवगत करवाना.

iii. विद्यार्थियों को हर्बर्ट साइमन के निर्णय निर्माण सिद्धांत से अवगत करवाना

3-2-परिचय (Introduction)

मेयो मनोवैज्ञानिक उन्होंने शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और आर्थिक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए श्रमिकों के व्यवहार और उनकी उत्पादन क्षमता पर ध्यान केंद्रित किया। एल्टन मेयो को औद्योगिक समाजशास्त्र और व्यापार संगठन के मानव संबंध स्कूल के संस्थापक के रूप में माना जाता है।

3-3-1 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

3-3-3-मानव संबंधी सिद्धांत का अर्थ एंव परिभाषाएं (Meaning and Definition of human relations theory)

मानव संबंध को नवशास्त्रीय दृष्टिकोण भी कहते । वस्तुतः यह लोक प्रशासन के द्वितया चरण में यांत्रिक विचारधारा की प्रतिक्रिया के स्वरूप अस्तित्व में आया । मानव संबंध का अर्थ है, संगठन में कार्यरत मनुष्यों और उनके परस्पर संबंधों को महत्व देना । मानव संबंध दृष्टिकोण ने औपचारिक संगठन के भीतर अनौपचारिक संगठन की खोज एवं स्थापना की । इसका आशय यह है कि कार्यरत व्यक्तियों का इस प्रकार अध्ययन-विश्लेषण करना कि किसी कार्य अवस्था विशेष में मानवीय आचरण के आधारों का पता लगाया जा सके और यह भी जाना जा सके कि किस प्रकार के आचरण का संगठन के हितों में उपयोग हो सकता है ।

मानव संबंध सिद्धांत का सार इस तथ्य में है कि संगठन में कार्मिक की स्थिति निर्जीव पूर्जे की नहीं अपितु एक चेतन प्राणी की ही है और संगठन का अध्ययन वस्तुत: मानवीय इच्छाओं, समूहजन्य व्यवहारों, मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरणाओं आदि के संदर्भ में करना चाहिए ।मानव सम्बन्ध उपागम के समर्थकों में रोथलिसबर्गर, विलियम जे0 डिक्सन, टी0एन0 व्हाइट, इ0 वरनर डब्ल्यू लायड, एल0 म0 हैण्डरसन, वाल्टर रादेनाव तथा ओलिवर शैलडन आदि प्रमुख हैं।साधारण शब्दों में इनका अर्थ नियाक्ता तथा श्रमिकों के उन सम्बन्धों से है जो कानूनी मानकों द्वारा नियन्त्रित नहीं होते बल्कि नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्त्वों पर आधारित होते हैं। मानव संबंधी सिद्धांत की विभिन्न विद्वानों की निम्न परिभाषाएं है: -

I. **कीथ डेविस -** "मानवीय सम्बन्ध, प्रबन्ध के क्षेत्र में, व्यक्तियों का कार्य स्थिति में ऐसा एकीकरण है जो उन्हें उत्पादक व सहकारिक रूप तथा आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक संतुष्टि के साथ कार्य करने को अभिप्रेरित करता है।"

II. **रॉबर्ट साल्टनस्टाल** - के शब्दों में "कार्यरत व्यक्तियों का अध्ययन ही मानवीय सम्बन्धम है।"

III. **जॉन एफ. मी -** ने कहा है कि "मानवीय सम्बन्ध वह साधन है जिसकी सहायता से कम्पनी एवं कम्रचारी दोनों ही उच्च मनोबल द्वारा अत्यधिक उत्पादन की प्रगति के लिए परस्पर सहयोग करते हैं, जो व्यवसाय का अन्तिम आर्थिक लक्ष्य होता है।"

IV. **जोसेफ एल. मेसी** - के अनुसार "मानवीय सम्बन्ध अभिप्रेरण की प्रक्रिया है जो उद्देश्यों में सन्तुलन स्थापित करती है तथा जिसका लक्ष्य अधिकतम मानवीय सन्तष्टि प्राप्त करना एवं संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग करना होता है।"

V. **मेयर** - के अनुसार "मानवीय सम्बन्ध व्यक्तियों के साथ व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से व्यवहार करना है।"

3-3-2-मानव सम्बन्ध उपागम की विशेषताएँ (Characteristics of Human Relations Approach)

- यह उपागम यह मानकर चलता है कि मानव एक मशीन या मशीन का कोई पुर्जा नहीं है अपितु यह सजीव, संवेदनशील तथा विचारवान प्राणी है जो समूह के नियमों से प्रभावित होता है।
- प्रत्येक संगठन में कार्यरत व्यक्तियों के एकीकरण, सामूहिकीकरण तथा अन्तरसम्बन्धों की प्रक्रिया ही मानव सम्बन्ध है जो प्रत्येक संगठन में विद्‌यमान होते हैं।
- संगठन में कार्यरत 'सामाजिक मनुष्य' है जो समूह के द्‌वारा निर्धारित मापदण्डों तथा प्रतिमानों से प्रभावित होता है तथा स्वयं की समस्याओं के कारण संगठन की कार्यप्रणाली को प्रभावित करता है।
- यह उपागम मानता है कि नियोक्ता एवं कर्मचारियों के मध्य सम्बन्ध हमेशा कानूनों या नियमों से निर्धारित एवं संचालित नहीं होते बल्कि नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों से सम्बन्धित होते हैं।
- मानव सम्बन्ध विचारधारा, 'औद्‌योगिक सम्बन्धों' की पर्याय नहीं है बल्कि यह संगठन में कार्यरत कर्मचारियों को आदर्शोन्मुखी बनाने के लिए ठोस पद्धतियों की खोज से सम्बन्धित है।
- यह उपागम व्यक्तियों तथा उनकी अभिप्रेरणाओं पर बल देता है ताकि संगठन के समस्त संसाधनों का सदुपयोग हो सके।

3-3-3-एल्टन मेयो का मानव संबंध सिद्धांत (Elton Mayo's Human Relations Theory)

एल्टन मेयो आधुनिक मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्रीय औद्‌योगिक शोध का मूल जन्मदाता कहा जाता है क्योंकि उन्होंने मानव अभिप्रेरणा, समूह प्रतिक्रिया, अनौपचारिक संगठन,

श्रमिकों की भावनाओं एवं अभिवृत्तियों, कार्य के सामाजिक घटकों आदि के बारे में महत्वपूर्ण प्रयोग किए जिनके परिणामस्वरूप मानवीय सम्बन्ध आन्दोलन को प्रोत्साहन मिला। उनके शोध जिन्हें हॉथोर्न प्रयोग के नाम से जाना जाता है, को जोसेफ एल0 मेसी ने मानवीय सम्बन्ध आन्दोलन की आधारशिला बताया है। मेयो ने संगठन की कार्यप्रणाली को समझने के लिए मानव प्रकृति और उनकी अन्तः प्रक्रिया पर बल दिया। उनके अनुसार उद्योगपति और श्रमिकों के बीच सम्बन्ध कानूनी नियमों से नियन्त्रित नहीं होते बल्कि नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों से नियमित होते हैं। इस प्रकार मेयो ने कारखाने के श्रमिकों के विचारों को प्रेषित (Ideological Orientation) करने के लिए मानवीय सम्बन्धों पर आधारित ठोस पद्धति का निर्माण करने का प्रयत्न किया। इस प्रक्रिया में उन्होंने व्यक्तियों तथा उनकी अभिप्रेरणा पर बल दिया जो शास्त्रीय पद्धति से सर्वथा भिन्न था।

मेयो के हॉथोर्न प्रयोगों से जिस अनौपचारिक सामाजिक संगठन को खोज निकाला, वही आगे विकसित होकर मानव संबंध विचारधारा के रूप में सामने आया । इसलिए एल्टन मेयो को का मानव संबंध विचारधारा का पितामह कहा जाता है । इन प्रयोगों को मेयो ने क्लिनिकल मेथड कहा ।

हॉथोर्न प्रयोग (1924-34): अमेरिका के शिकागो शहर के हॉथोर्न औद्यौगिक क्षेत्र में वेस्टर्न इलेक्ट्रिक कंपनी का एक बड़ा कारखाना अवस्थित है जहां "नेशनल एकेडमी आफ साइंस" ने पहला प्रयोग किया । मेयो ने भी अपने प्रयोग यहीं किये । ये सब प्रयोग "हार्थान प्रयोग" के नाम से प्रसिद्ध हुए । इन सब प्रयोगों को तीन चरणों में संपादित किया गया था, जिन्हें अलग-अलग नाम दिये गये ।

(अ) प्रकाश प्रयोग, (ब) रिले असेम्बली परीक्षण स) साक्षात्कार कार्यक्रम ,(द) अवलोकन अध्ययन

(अ) वृहद प्रकाश प्रयोग (1924-27)

मेयो द्वारा जो सिद्धांत "द फर्स्ट इन्कवायरी" के बाद प्रतिपादित किये गये थे, उन्हीं के आधार पर नेशनल एकेडमी आफ साइंस की राष्ट्रीय शोध समिति ने जार्ज पेनाक के नेतृत्व में वेस्टर्न कंपनी के हाथार्न संयंत्र में प्रयोग शुरू किये । इनका मुख्य उद्देश्य उन्नत कार्यदशाओं के परिणामस्वरूप कर्मचारियों के व्यवहार एवं प्रवृत्तियों में होने वाले परिवर्तन को जानना था और श्रमिकों की कार्यकुशलता एवं उत्पादकता को प्रभावित करने वाले तत्वों का पता लगाना था।यह प्रयोग दो चरणों में हुआ- प्रकाश प्रयोग और अन्य भौतिक चरों पर आधारित प्रयोग । जार्ज पेनाक ने छह-छह महिलाओं के दो समूह बनाये। इनको प्रकाश के विभिन्न प्रदीप्त स्तरों पर रखा गया। एक समूह को समान प्रकाश, दूसरे को अलग-अलग प्रकाश में । 18 महीने तक अध्ययन करने के बाद पता चला कि दोनों समूहों की उत्पादकता में वृद्धि हुई परिणामस्वरूप यह प्रयोग छोड़ना पड़ा । इस प्रयोग ने यह सिद्ध कर दिया कि भौतिक चर या वातावरण घटक (प्रकाश) उत्पादन को प्रभावित नहीं करते अपितु कुछ अन्य घटक इसका निर्धारण करते है ।

(ब) रिले असेम्बली परीक्षण:इसका प्रयोग प्रथम दोषों की जाँच करने के लिए किया गया था। हॉथोर्न प्रयोग समूह में ये प्रयोग अधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं जो अप्रैल, 1927 से अगस्त 1932 तक चलते रहे तथा इनके निष्कर्षों ने प्रबन्धकों को गहन रूप से प्रभावित किया। इस अध्ययन के अन्तर्गत छः छः लड़कियों के दो समूह बनाये गये। इस प्रयोग के दौरान कार्य दिवसों, कार्य के घण्टों, कार्यानुसार मजदूरी, विश्राम की आवृत्ति एवं समय आदि में समय समय पर परिवर्तन किये गये। कम्पनी की ओर से चार, काफी व भोजन की सुविधा भी दी गई। इन सुविधाओं में समय समय पर कमी वृद्धि भी की गई थी। इन प्रयोगों का उद्देश्य यह पता लगाना था कि कार्य की दशाएं उत्पादन को किस प्रकार प्रभावित करती हैं। इस प्रकार इन प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया था कि उत्पादन वृद्धि में भौतिक एवं तकनीकी तत्वों की

भूमिका कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती है, बल्कि इनकी तुलना में मानवीय सम्बन्धों एवं व्यवहार का उत्पादन क्षमता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन में सौहार्दपूर्ण मानवीय सम्बन्धों के कारण उत्पादन में 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी।

मेयो द्वारा पूरक प्रयोग: मेयो ने प्रकाश व्यवस्था की जाँच करके पांच परिकल्पनाएं विकसित की थी।अपनी परिकल्पनाओं का परीक्षण करने हेतु उसने कुछ पूरक प्रयोग किये।इन पूरक परीक्षणों के तहत अब छह के स्थान पर पांच-पांच लड़कियों के दो परीक्षण समूह बनाये गये । पहले समूह को व्यक्तिगत प्रोत्साहन योजना (सामूहिक के स्थान पर) के तहत कहा गया कि वे जितना काम करेंगे उतनी अधिक मजदूरी प्राप्त करेंगे । यह उजरती दर पद्वति थी। दूसरे समूह को विश्रामकाल, कार्य अवधि आदि में भिन्न-भिन्न परिस्थितिया दी गयी । पहले समूह का उत्पादन बढ़कर एक स्तर पर स्थिर हो गया । दूसरे समूह के उत्पादन में चौदह दिनों पश्चात् जाकर वृद्धि हुई ।इसने चौथी परिकल्पना अर्थात् प्रतिव्यक्ति मजदूरी व्यवस्था (आर्थिक प्रेरणा) उत्पादन में वृद्धि करती है, उलट दिया । **मेयो ने** इस प्रयोग के पश्चात् यह निष्कर्ष दिया कि जिन महिला श्रमिकों पर प्रयोग किये जा रहे थे उनके मध्यएक समाज विकसित हो चुका था । यह समाज ही उत्पादन को प्रभावित करता है ।उन श्रमिकों को पता था कि उन पर प्रयोग हो रहे हैं, अत: उन्होंने विपरित परिस्थितियों में भी उत्पादन बढ़ाया ।उत्पादन बढ़ाने के लिए वेतन के बजाय अन्य तत्व जिम्मेदार थे ।लड़कियों को बातचीत की स्वतंत्रता थी अत: उनके मध्य सामाजिक संबंध विकसित हुए ।पर्यवेक्षकों के सहानुभूतिपूर्ण रवैये ने भी उन्हें प्रोत्साहित किया ।

(स) साक्षात्कार अध्ययन प्रयोग (1928-31): मेयो के शोध दल ने हॉथोर्न संयंत्र में ही यह दूसरा परीक्षण किया । यह मानवीय भावनाओं और दृष्टिकोण का पता लगाने वाला सिद्ध हुआ । कार्मिकों से प्रबंध की नीतियों, योजनाओं, कार्य-दशा, प्रबंधकीय बर्ताव आदि बातों पर प्रश्न पूछे गये । चूंकि मजदूरों द्वारा व्यक्त विचारों का विषय से भटकाव हो रहा था, अत:

इसमें थोड़ा परिवर्तन किया गया । अब साक्षात्कार लेने वाले की भूमिका गौण कर दी गयी, वह मात्र पहल करके चुप हो जाता था, तथा कार्मिकों को अपना पूरा गुबार निकालने का मौका दिया गया । इससे वास्तविक सच्चाई सामने आयी । श्रमिकों के न सिर्फ जवाब देने में अधिक समय लिया बल्कि उनके व्यवहार में भी परिवर्तन हुआ । कारण कि वे समझने लगे कि उनके सुझावों के आधार पर वातावरण में परिवर्तन हो गया है (जबकि कोई परिवर्तन नहीं किया गया था) । कार्मिक प्रोत्साहित हुये । 21 हजार से अधिक कामगारों का परीक्षण करने के बाद शोध दल ने निष्कर्ष निकाला कि-

i. शिकायतों और वास्तविकता के बीच कोई स्पष्ट संबंध नहीं है ।

ii. श्रमिकों ने शोधदल द्वारा उनकी समस्याओं को जानने के ढंग की सराहना की । उन्हें लगा कि वे भी प्रबंध के हिस्से हैं और बहुमूल्य सुझाव दे सकते हैं ।

iii. सुपरवाइजरों के व्यवहार में भी इस दौरान बदलाव आया क्योंकि उन पर शोधदल की नजर थी ।

iv. यह निष्कर्ष भी निकाला गया कि व्यक्तियों के साथ अंतरंग संबंध स्थापित करके ही उनकी वास्तविक समस्याओं को जाना जा सकता है ।

v. शोधदल ने स्वयं के बारे में भी एक निष्कर्ष निकाला कि उन्होंने अपने सहयोगियों को समझने और उनके साथ व्यवहार करने की श्रेष्ठ तकनीक को खोज लिया है ।

(द) अवलोकन (Observation) 1933-33: यह अंतिम प्रयोगात्मक चरण था । इस बार उन्होंने कार्य का सहज वातावरण ही रहने दिया । उन्होंने कामगारों पर बाहर से नजर रखी, अर्थात् उन्हें अपनी उपस्थिति महसूस नहीं होने दी । भौतिक चरों में भी कोई परिवर्तन नहीं किया गया । वे देखना चाहते थे कि कामगार सहज परिवेश में बिना किसी बाहरी कारक से

प्रभावित हुए, अपनी परंपरागत कार्य पद्धतियों में कैसा व्यवहार करते है । तीन विभिन्न कार्यों में लगे श्रमिकों के स्वाभाविक समूहों का अध्ययन किया गया । इनके काम परस्पर संबंधित थे- सोल्डरिंग, टर्मिनल फिक्सिंग और वायरिंग । इस चरण में मजदूरों से पीस रेट (नगवार दर) के आधार पर समझौता किया गया । लेकिन व्यक्तिगत के स्थान पर प्रत्येक समूह के साथ मजदूरी का समझौता किया गया । मजदूरी समूह प्रोत्साहन योजना के आधार पर तय हुई । अर्थात् समूह का जितना अधिक उत्पादन होगा, उतना अधिक वेतन समूह को मिलेगा । समूह के प्रत्येक सदस्य को उसमें बराबर हिस्सा मिलाना था। प्रबंधकों को आशा थी कि मजदूर अधिक लाभ (अधिक मजदूरी) के लिये अधिक उत्पादन करेंगे । लेकिन निरीक्षकों ने पाया कि श्रमिक समूहों ने उत्पादन बढ़ाने की कोशिश नहीं की । उलटे उन्होने अपने समूह का अपना उत्पादन मानक (स्टेन्डर्ड) तय कर लिया जो प्रबन्ध द्वारा निर्धारित मानक से कम था । समूह के सदस्यों को अधिक या कम उत्पादन की छूट नहीं थी । श्रमिकों ने क्षमता के बावजूद कम उत्पादन किया जबकि उन्हें पता था कि अधिक उत्पादन से उन्हें अधिक लाभ होगा ।शोध टीम ने निष्कर्ष दिया कि:

i. एक लम्बे अर्से तक काम करते रहने से कामगारों के मध्य अन्त: सामाजिक संबंध विकसित हो जाते है, जिनका प्रबंध की सामान्य आर्थिक स्थिति से कोई सरोकार नहीं होता । ये सामाजिक संबंध उनके मध्य की अन्त: व्यैक्तिक क्रियाओं के परिणाम होते है ।

ii. इन औपचारिक सामाजिक समूह की स्वयं की आचार संहिता भी निर्मित हो जाती है जिसका पालन सदस्यों से अपेक्षित रहता है ।

iii. इस प्रकार इस शोध दल ने संगठन के भीतर सामाजिक अनौपचारिक संगठन को ढूंढ निकाला ।

हॉथोर्न प्रयोगों ने मानव सम्बन्ध विचारधारा को जन्म दिया और संगठन की परम्परागत यान्त्रिक विचारधारा को इतना ठेस पहुँचायी कि उसकी लोकप्रियता कम हो गयी ! एल्टन मेयो के अध्ययन का निष्कर्ष यह था कि संगठन के मानवीय पक्ष को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए। तकनीकी और आर्थिक पहलुओं पर ज्यादा बल देने की अपेक्षा प्रबन्धकों को मानवी। स्थितियों, प्रेरणा और श्रमिकों से सम्बन्ध स्थापित करने पर ध्यान देना चाहिए। मेयो का विचार था कि सहयोग प्राप्त करने के लिए सत्ता की अवधारणा विशेषज्ञता की अपेक्षा सामाजिक कौशल पर आधारित होनी चाहिए।

3-3-4-एल्टन मेयो के मानव संबंधी सिद्धांत की आलोचना (Criticism of Elton Mayo's Anthropological Theory)

मेयो ने मानव सम्बन्धों के अध्ययन को केन्द्र बनाकर कई औद्योगिक समस्याओं का समाधान किया और साथ श्रमिकों को मानवीय व्यवहार का पात्र बनाया। उन्होंने श्रमिकों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के महत्व को स्पष्ट किया जो अच्छे औद्योगिक सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है। उन्होंने प्रत्येक कारखाने को सामाजिक संगठन का नाम दिया।

मेयो ने भीड़ कल्पना (Rabble Hypothesis) का खण्डन किया जिसके तहत प्रबन्ध के सम्पूर्ण समाज को संगठित व्यक्तियों का झुण्ड मानते है। जो अपनी रक्षा स्वयं करते हैं। उन्होंने समाज में छोटे छोटे सहयोगी समूहों के निर्माण पर जोर दिया। इस उपागम के फलस्वरूप उद्योगों में सामाजिक कार्य सम्बन्ध, सम्प्रेषण व्यवस्था, भागीदारी, उदार पर्यवेक्षण, भावात्मक अभिप्रेरणा, आत्मविश्वास, मनोबल आदि अवधारणाओं पर ध्यान दिया जाने लगा।

मिलर तथा फोर्म ने मेयो के प्रयोगों को केवल अनुभववाद और अवलोकन पर आधारित बताया और इनके तरीके वैज्ञानिक नहीं थे क्योंकि कार्य, श्रमिक और वातावरण का चयन व्यवस्थित ढंग से नहीं किया गया और नमूनों का आधार छोटा था जिनके आधार पर सामान्य परिणाम नहीं निकाले जा सकते।

मेयो ने प्रबन्धकों का पक्ष तो लिया है परन्तु कहीं भी श्रम संघों का उल्लेख नहीं किया। श्रमिकों को एक साधन की भाँति ही देखा गया है भले ही वह सामाजिक कौशल के माध्यम से हो और मुख्य उद्देश्य श्रमिकों से अधिक काम लेना' ही रहा। मेयो की मान्यता थी कि संतुष्ट श्रमिक अधिक उत्पादन करते हैं जिसे बेल (Bell) ने गाय समाजशास्त्र (Cow sociology) का नाम दिया |

आलोचकों की यह मान्यता रही है कि मेयो तथा मानव संबंध अवधारणा ने संगठन से सिर्फ आंतरिक परवर्तियों या चरों के संबंध में ही अपना विचार प्रस्तुत किया है तथा वातावरणीय तत्वों को नजरअंदाज किया गया है। पीटर ड्रकर, कैरी, लॉरेन बैरिट्ज, इटज्योनि, बैंडिक्स और फीशर, डेनियल बेल इत्यादि विद्वानों ने मेयो के विचार की आलोचना की है। इन आलोचनाओं को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

पीटर ड्रकर के अनुसार मानव संबंध विचार में आर्थिक आयामों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया है। ड्रकर तथा कुछ चिंतकों ने यह विचार प्रकट किया है कि मानव संबंध आंदोलन ने तो मानव की गरिमा को ही नजरअंदाज किया है। आर्थिक पहलुओं को पूरी तरह से नजरअंदाज करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि एल्टन मेयो संगठनात्मक उद्देश्यों की बजाय व्यक्तिगत अनौपचारिक उद्देश्यों के प्रति ज्यादा संवेदनशील नजर आता है।

कैरी ने हाथोर्न प्रयोगों के निष्कर्ष की आलोचना करते हुए कहा कि इस शोध के आधार निष्कर्ष के सामान्यीकरण के लिए पर्याप्त नहीं। चूँकि हाथोर्न प्रयोग में पाँच या छः लड़कियों

को लेकर 'महान प्रकाश व्यवस्था' संबंधी शोध किया गया था। वह किसी भी आधार पर वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता।

लॉरेन बैरिट्ज ने मेयो की आलोचना करते हुए कहा था कि उसने श्रमिक संघों के विरोध में और प्रबंधकों के पक्ष में अपना विचार दिया है।

इटज्योनी के अनुसार मानव संबंध से संबंधित विचारक अपना अधिकांश ध्यान कर्मचारियों के बीच अनौपचारिक संबंधों पर देते हैं, यहाँ तक कि कर्मचारियों और प्रबंधकों के बीच भी।परन्तु न तो उनका ध्यान औपचारिक तत्वों की ओर है और न ही अनौपचारिक तत्वों के साथ-साथ औपचारिक तत्वों के विकास की ओर।

बेंडिक्स और **फिशर** के अनुसार मेयो अपने वैज्ञानिक कार्यों को नीतिपरक पूर्व कल्पनाओं की स्पष्ट परिभाषा देने में असफल रहा। तब तक जब तक कि वह इस संदर्भ में अपना स्पष्टीकरण नहीं देता तब तक लोकतांत्रिक समाज में ज्ञान और कौशल के संबंध में जो नकारात्मक टिप्पणियाँ उसने की थी उस पर ध्यान देना या फिर उसे अधिक महत्ता प्रदान करना संभव नहीं।

डेनियल शेल ने मेयो और उसके सहयोगियों की संपूर्ण आलोचना करते हुए कहा कि हॉर्वर्ड दल द्वारा जो पद्धतियाँ अपनाई गई वह त्रुटिपूर्ण थी।

मेयो ने मानव सम्बन्धों के अध्ययन को केन्द्र बनाकर कई औद्योगिक समस्याओं का समाधान किया और साथ श्रमिकों को मानवीय व्यवहार का पात्र बनाया। उन्होंने श्रमिकों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के महत्व को स्पष्ट किया जो अच्छे औद्योगिक सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है। उन्होंने प्रत्येक कारखाने को सामाजिक संगठन का नाम दिया।

मेयो ने भीड़ कल्पना (Rabble Hypothesis) का खण्डन किया जिसके तहत प्रबन्ध के सम्पूर्ण समाज को संगठित व्यक्तियों का झुण्ड मानते है। जो अपनी रक्षा स्वयं करते हैं। उन्होंने समाज में छोटे छोटे सहयोगी समूहों के निर्माण पर जोर दिया। इस उपागम के फलस्वरूप उद्योगों में सामाजिक कार्य सम्बन्ध, सम्प्रेषण व्यवस्था, भागीदारी, उदार पर्यवेक्षण, भावात्मक अभिप्रेरणा, आत्मविश्वास, मनोबल आदि अवधारणाओं पर ध्यान दिया जाने लगा।

3-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

3-4-3-निर्णयन का अर्थ परिभाषा (Meaning and definition of decision making)

शब्दकोश के अनुसार 'निर्णय' का अर्थ है "अपने मन में किसी विचार अथवा कार्रवाई के बारे में निर्धारित (determine) करना। " प्रस्तुत कई विकल्पों में से एक विकल्प चुनना होता है।" वस्तुतः निर्णय लम्बी सोच-विचार का निष्कर्ष है ।'निर्णयन' का शाब्दिक अर्थ है- 'अन्तिम परिणाम पर पहुँचना', जबकि व्यावहारिक दृष्टिकोण से इसका अर्थ है 'निष्कर्ष पर पहुँचना ।' व्यवसाय में प्रवर्तन से समापन तक निर्णय ही लेने पड़ते हैं। प्रबन्धकों को उपलब्ध विभिन्न विकल्पों में से श्रेष्ठतम विकल्प का चयन करना पड़ता है जिससे न्यूनतम लागत पर, कम समय में, कुशलतापूर्वक कार्यों को सम्पन्न किया जा सके। निर्णयन की विभिन्न विद्वानों की निम्न परिभाषाएं है: -

I. **आर.एस.डाबर के शब्दों में** ''निर्णयन को दो या अधिक विकल्पों में से एक आचरण विकल्प का किसी सिद्धान्त के आधार पर चुनाव करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।निर्णय लेने का आशय काम समाप्त करना या व्यावहारिक भाषा में किसी निष्कर्ष पर पहुँचना ।

II. **कून्टज एवं ओडोनेल के अनुसार,** ''शब्दों एक क्रिया को करने के विभिन्न विकल्पों में से किसी एक का वास्तविक चयन है। यह नियोजन की आत्मा है।''

III. **जी.एल.एस. शेकैल के अनुसार,** ''निणर्य लेना रचनात्मक मानसिक क्रिया का वह केन्द्र बिन्दु होता है जहॉ ज्ञान विचार भावना तथा कल्पना कार्यपूर्ति के लिए एकत्र किये जाते हैं।

IV. **अर्नेस्ट डेल -** ''प्रबधंकीय निर्णयों से आशय उन निर्णयों से है जो प्रबंध संबंधी प्रत्येक क्रिया नियोजन, संगठन, स्टाकिंग, नियंत्रण, नव प्रवर्तन तथा प्रतिनिधित्व करना आदि के निश्पादन के लिए आवश्यक होते हैं।''

V. **जार्ज टैटी -** ''निर्णयन मापदण्डों पर आधारित दो या दो से अधिक संभावित विकल्पों में से किसी एक विकल्प का चयन है।''

VI. **हर्बर्ट साइमन -** ''निर्णयन के अन्तर्गत तीन प्रमुख अवस्थायें समाहित होती हैं - कार्य करने के अवसरों का पता लगाना, कार्य के सम्भावित क्रमों का पता लगाना तथा कार्य के सम्भावित क्रमों में से चयन करना।

VII. **हाज एवं जॉनसन -**''उपलब्ध विभिन्न विकल्पों में से एक विशेष विकल्प का चयन करना ही निर्णयन कहलाता है।''

VIII. **डॉ. जे .सी. ग्लोवर** के अनुसार, चुने हुए विकल्पों में से किसी एक के सम्बन्ध में निर्णय करना ही निर्णयन है।

IX. **रे. रे . किलियन्स** के अनुसार, निर्णयन विभिन्न विकल्पों के चुनाव की एक सरलतम विधि है।

X. **जा र्ज आर. टेरी** के शब्दों में , निर्णय किसी एक कसौटी पर आधारित दो या दो से अधिक सम्भावित विकल्पों में से एक का चुनाव है।

XI. **मेकफारलैण्ड** के अनुसार, निर्णय लेना चयन की एक क्रिया है, जिसके अन्तर्गत कोई अधिशाशी दी हुई परिस्थितियों में इस निर्णय पर पहुँचता है कि क्या किया जाना चाहिए।

निर्णय किसी व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है , जिसका चयन अनेक सम्भव विकल्पों में से किया जाता है।

XII. **जी.एल.एस. शेकल** के अनुसार, निर्णय लेना रचनात्मक मानसिक क्रिया का वह केन्द्र बिन्दु है , जहां कार्य पूर्ति के लिए ज्ञान, विचार, भावना तथा कल्पना का संयोग होता है।

XIII. **अर्नेस्ट डेल** के अनुसार, प्रशासनिक निर्णयों से आशय उन निर्णयों से है जो कि सदैव सही प्रशासनिक क्रियाओं , जैसे -नियोजन, संगठन, कर्मचारियों की भर्ती, निदेशन, नियन्त्रण, नव प्रवर्तन तथा प्रतिनिधित्व के दौरान लिये जाते हैं।

XIV. **लुण्डवर्ग** के शब्दों में , प्रशासकीय निर्णय एक प्रक्रिया है जिसमें कि एक व्यक्ति संगठन में दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करने के लिए एक निर्णय करता है , ताकि वे व्यक्ति संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में अपना योगदान दे सके।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि निर्णयन से आशय निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उपलब्ध विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करने से है। निर्णयन की प्रक्रिया का अंतिम परिणाम निर्णय है। निर्णयन, निर्णय तक पहुंचने की प्रक्रिया है। इस तरह निर्णय वैकल्पिक उपलब्ध विकल्पों में से सचेतन रूप से चुने गए विकल्प को कहा जाता है। एक विशेष परिस्थिति में कार्य किया जावे , इसका निर्धारण निर्णय लेने वालों के द्वारा किया जाता है। निर्णय करते समय प्रशासक के सामने एक से अधिक विकल्प होते हैं। निर्णय करना अनेक उपलब्ध विकल्पों में से जागरूक चयन करना है। निर्णय प्राय: नीति, नियम, आदेश अथवा निर्देश के रूप में व्यक्त होते हैं। अत: सामान्यत: निर्णय काफी जटिल और कठिन होते हैं , बल्कि कई निर्णय ऐसे भी होते हैं , जिनमें विचार विमर्श करना अधिक जरूरी होता है।

3-4-2-निर्णयन के लक्षण या विशेषताएँ (Characteristics of Decision-Making)

निर्णयन' अथवा 'निर्णय प्रक्रिया के निम्नलिखित लक्षण दृष्टिगत होते हैं:

i. 'निर्णयन' एक मानवीय प्रक्रिया है जिसमें विभिन्न विकल्पों (Alternatives) में से किसी एक का चयन किया जाता है ।

ii. सर्वश्रेष्ठ विकल्प को चुनने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है ।

iii. अन्तिम विकल्प का चयन करने से पूर्व के सभी आवश्यक कार्य सम्पादित किये जाते हैं ।

iv. निर्णय स्थापित लक्ष्यों के आधार पर किया जाता है । निर्णयकर्त्ता अपने विवेक, कल्पनाशक्ति एवं भावनाओं का संयुक्त प्रयोग करता है ।

v. निर्णय लक्ष्य प्राप्ति का एक साधन है । इसमें परिस्थितियों के साथ परिवर्तन होता रहता है ।

vi. निर्णय प्रक्रिया में समय का अत्यधिक महत्व होता है । जो व्यक्ति शीघ्र निर्णय लेने की योग्यता से युक्त होता है उसे 'कुशल निर्णयकर्ता' माना जाता है ।

vii. निर्णयन में दृढ़ता होती है तथा वह ठोस वास्तविकताओं पर आधारित होता है ।

3-4-3-निर्णयन के प्रकार (Types of Decision Making)

I. प्रमुख व गौण निर्णय
II. अनियोजित एवं नियोजित निर्णय
III. संगठनात्मक एवं व्यक्तिगत निर्णय
IV. नैतिक एवं व्यूह रचना संबंधी निर्णय
V. व्यक्तिगत एवं सामूहिक निर्णय
VI. नीति विषयक निर्णय एवं संचालन संबंधी निर्णय

प्रमुख व गौण निर्णय - जब किसी महत्वपूर्ण विष्ज्ञय पर निणर्य लिये जाते हैं तो इसे प्रमुख निर्णय कहते हैं। इसे आधारभूत निर्णय या महत्वपूर्ण निर्णय भी कहते हैं। भूमि क्रय करना, संयंत्र क्रय करना, वस्तु का मूल्य निर्धारित करना आदि निर्णय इस वर्ग में आते हैं। ऐसे निर्णयों के लिये अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। जब सामान्य मामलों के संबंध

में निर्णय लिये जाते हैं जिसके लिए अधिक सोच विचार करने की आवश्यकता नहीं होती है तो ऐसे निर्णयों को गौण निर्णय कहते हैं। इनमें स्टेशनरी क्रय करना, फोन के बिलों का भुगतान करना आदि आते हैं।

अनियोजित एवं नियोजित निर्णय - ऐसे निर्णय जो किसी परिस्थिति विशेष पर अकस्मात लेने पड़ते हैं जिसके लिए कोई पूर्व योजना नहीं होती है अनियोजित निर्णय कहलाते हैं। इसके विपरीत ऐसे निर्णय जो किसी पूर्व योजना पर आधारित होते हैं, नियोजित निर्णय कहलाते हैं। नियोजित निर्णय ठोस तथ्यों पर आधारित होते हैं क्योंकि यह पूर्व निर्धारित योजना पर आधारित होते हैं।

संगठनात्मक एवं व्यक्तिगत निर्णय - ऎसे निणर्य जो संगठन को प्रत्यक्षत: प्रभावित करते हैं। यह संगठन के पदाधिकारी के रूप में लिये गये होते हैं तो ऐसे निर्णय को संगठनात्मक निर्णय कहते हैं। दूसरे शब्दों में किसी संगठन में कार्यरत व्यक्ति द्वारा अपने पद के कारण जो निर्णय लेने पड़ते हैं जिससे संगठन प्रभावित होता है संगठनात्मक निर्णय कहलाते हैं। इसके विपरीत व्यक्ति द्वारा लिये गये ऐसे निर्णय जिससे व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन प्रभावित होता है व्यक्तिगत निर्णय कहलाते हैं। माल कब क्रय करना है? कितना क्रय करना है? आदि संगठनात्मक निर्णय है। आज कहॉ जाना है किस मित्र से मिलना है? आदि व्यक्तिगत निर्णय है।

नैतिक एवं व्यूह रचना संबंधी निर्णय - ऐसे निर्णय जो दिन प्रतिदिन के कार्यों से सम्बन्धित होते हैं नैतिक निर्णय कहलाते हैं। इन्हें सामान्य निर्णय भी कहते हैं। जैसे दिहाड़ी मजदूर को किया जाने वाला मजदूरी भुगतान। व्यूह रचना संबंधी निर्णय लेना व्यवसाय के लिए कठिन होता है। यह व्यवसाय के भविष्य को प्रभावित करते हैं तथा सम्पूर्ण संगठन को प्रभावित करता है। ऐसे निर्णय प्रतिद्वन्दियों को पराजित करने तथा व्यावसाय विषम परिस्थितियों में भी सफलता से संचालित करने हेतु किये जाते हैं।

व्यक्तिगत एवं सामूहिक निर्णय - ऐसे निर्णय जो केवल एक व्यक्ति द्वारा लिये जाते हैं व्यक्तिगत निर्णय कहलाते हैं। एकल स्वामित्व व्यवसाय में लिये जाने वाले निर्णय व्यक्तिगत निर्णय कहलाते हैं। ऐसे निर्णय जो एक समूह द्वारा जैसे अधिकारियों एवं कर्मचारियों के समूह, द्वारा लिये जाते हैं, सामूहिक निर्णय कहलाते हैं।

नीति विषयक निर्णय एवं संचालन संबंधी निर्णय -नीति विषयक निर्णय संगठन के शीर्ष प्रबंध द्वारा लिये जाते हैं । यह संगठन की आधारभूत नीतियों से संबंधित होते हैं। लाभाशं की दर निर्धारित करना? कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना आदि नीति विषयक निर्णयों की श्रेणी में आते हैं। संचालन संबंधी निर्णय निम्नस्तरीय प्रबंधकों द्वारा लिये जाते हैं। किस व्यक्ति को कौन सा काम करना है? कितना काम आज हो जाना चाहिए? आदि संचालन संबंधी निर्णय ही हैं।

3-4-4-निर्णयन की प्रक्रिया (Decision Making Process)

I. समस्या को परिभाषित करना
II. समस्या का विश्लेषण करना
III. वैकल्पिक हलों पर विचार करना
IV. सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना

समस्या को परिभाषित करना - निर्णयन का प्रथम चरण समस्या को परिभाषित करना है। समस्या की प्रकृति कैसी है? इसका स्वरूप कैसा है? यह कितनी मात्रा में संगठन को प्रभावित करती है? आदि प्रमुख बिन्दु पर विचार किया जाता है। समस्या को परिभाषित करना ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार किसी बीमारी को पता लगाने हेतु चिकित्सकीय परीक्षण किये जाते हैं और बीमारी का सही सही पता लगाया जाता है। इसके पश्चात ही बीमारी के उपचार हेतु औषधि दी जाती है। इसी प्रकार निर्णयन के प्रथम चरण में समस्या

को सुपरिभाषित किया जाता है जिससे समस्या के सम्बन्ध में सही सही निर्णय लिये जा सकें।

समस्या का विश्लेषण करना - समस्या को परिभाषित करने से उसका स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। इसके पश्चात हम समस्या का गहन विश्लेषण करते हैं इसमें इन बातों पर विचार किया जाता है -समस्या की प्रकृति कैसी है?यह किन विभागों से सम्बन्धित है? ,निर्णय के लिए किन किन सूचनाओं की आवश्यकता होगी? निर्णय हेतु कौन कौन से व्यक्तियों की सहायता लेनी चाहिए?, निर्णय किन आधारों पर लिये जाने चाहिए? आदि उपरोक्त बातों पर विचार किये बिना जो निर्णय लिये जाते हैं उनके कार्यान्वयन में कठिनाई आ सकती है। समस्या के विश्लेषण हेतु वैज्ञज्ञनिक विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

वैकल्पिक हलों पर विचार करना -किसी समस्या के समाधान के लिए अनेक हल होते हैं। संगठन को सभी हलों पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए तथा जो हल संगठन के लिये सर्वथा उपयुक्त हो उसे ही अपनाना चाहिए। यह आवश्यक नहीं कि जो हल एक संगठन के लिये भी उपयुक्त हो वही दूसरे संगठन के लिए ही उपयुक्त यदि सभी विकल्पों पर विचार करना संभव न हो तो केवल उन्हीं विकल्पों पर विचार किया जा सकता है। जो संगठन के लिए अधिक प्रासंगिक हैं। इस प्रकार हम सीमित करने वाले घटकों पर विचार कर लेते हैं।

सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना - उपलब्ध विकल्पों में से संगठन के लिए अधिक प्रासंगिक विकल्पों पर विचार कर सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन किया जाता है। इसके लिये इन बातों पर विचार किया जा सकता है।

3-4-5-साइमन का निर्णय निर्माण का सिद्धांत(Simon's theory of decision making)

व्यवहारवादी उपागम के प्रमुख स्तंभों में हरबर्ट साइमन का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। सन् 1978 में उन्हें अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए नोबेल

पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनका महत्वपूर्ण योगदान प्रबंध विज्ञान के क्षेत्र में है। वस्तुतः निर्णयन की प्रक्रिया के विश्लेषण पर उनके लिए प्रबंध की समस्त कार्यवाही निर्णय है। हरबर्ट साइमन की रचना 'Administrative Behaviour' निर्णयन प्रक्रिया के अध्ययन की दृष्टि से उल्लेखनीय ग्रंथ माना जाता है। उन्होंने निर्णय निर्माण प्रक्रिया में मूल्य वरीयताओं के संदर्भ में मानव व्यवहार का विश्लेषण किया। यही वह केंद्रीय संबद्धता है, जो संगठन और उसके कार्य को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण है।

साइमन की विचारधारा का मूल निष्कर्ष यह है कि संगठन का अध्ययन करने के लिए व्यक्ति को निर्णयन प्रक्रियाओं की जटिल संरचना का अध्ययन करना चाहिए। साइमन के लिए प्रशासन 'कार्य कराने की कला है। उन्होंने उन प्रक्रियाओं तथा विधियों पर बल दिया जिनसे कार्यवाही सुनिश्चित हो । साइमन कहते हैं कि प्रशासनिक विश्लेषण में उस चयन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है जो कार्यवाही से पहले दिया जाना आवश्यक है। निर्णय लेना चयन की वह प्रक्रिया है, जो कार्रवाई आधारित पर होता है। साइमन ने ध्यान दिया किया कि इस निर्णय निर्माण की प्रक्रिया को भली प्रकार से समझने के अभाव में, प्रशासन का अध्ययन बाधित होगा। क्योंकि यही संगठन में व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करता है। व्यवहारवादी उपागम में कार्यवाही से पूर्व की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया जाता है। इसे निर्णय लेने की प्रक्रिया के नाम से जाना जाता है।

3-4-5-3-साइमन का निर्णय निर्माण प्रक्रिया (Simon's decision-making process)

साइमन के अनुसार संगठन का अध्ययन करने के लिए व्यक्ति को निर्णयन प्रक्रिया की जटिल संरचना का अध्ययन करना चाहिए। साइमन के मतानुसार निर्णय से अभिप्राय तथ्यों तथा मूल्य आदि तत्वों का उचित योग होता है। तथ्य का अर्थ है कि वस्तु क्या है। तथ्य सच्चाई की अभिव्यक्ति है। इसके विपरीत मूल्य का अर्थ पसंदगी से है। मूल्य वरीयता की अभिव्यक्ति है। इसलिए यह तथ्य पर आधारित नहीं होती है। साइमन का मत था कि

प्रत्येक निर्णय अनेक तथ्यों तथा अनेक मूल्यों का परिणाम होता है। निर्णय लेने की आवश्यकता तब उत्पन्न होती है, जब व्यक्ति के पास किसी कार्य को करने के लिए बहुत से विकल्प होते हैं परंतु व्यक्ति को छटनी की प्रक्रिया के माध्यम से केवल एक ही विकल्प चुनना होता है। अनेक विकल्पों का अर्थ विभिन्न में से चुनाव करना है।साइमन निर्णय निर्माण प्रक्रिया के तीन चरण:-

i. **अन्वेषण / आसूचना प्रक्रिया (Intelligence Activity) :** इस प्रथम चरण के माध्यम से निर्णय लेने के अवसरों की तलाश की जाती है। इसके आधार पर इसमें सबसे पहले देखा जाता है समस्या क्या है। जिसमें कब तथा कहां निर्णय लेने की आवश्यकता है। इस चरण में निर्णय की आंतरिक तथा बाह्य वातावरण की खोज की जाती है। इसमें संगठन की आंतरिक नीतियां तथा प्रबंधकीय व्यवहार एवं चिंतन संगठनात्मक लक्ष्यों, मूल्य व दर्शन के साथ-साथ बाह्य सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक मूल्यों, सामाजिक मूल्यों, सामाजिक प्रारूपों, अभिवृत्तियों आदि का विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

ii. **डिजाइन क्रिया (Design Activity):** इस चरण के माध्यम से समस्या के विकल्पों की खोज की जाती है। साइमन दो प्रकार के निर्णय बताते हैं। कार्यक्रमित निर्णय तथा आकार्यक्रमित निर्णय ।कार्यक्रमित निर्णय: वे निर्णय जो नैतिक प्रकृति के होते हे तथा संगठन में जिनकी पुनरावृत्ति होती रहती है। कार्यक्रमित निर्णय कहलाते है। आकार्यक्रमित निर्णय : वे निर्णय आकार्यक्रमित होते है, जो नवीन असंरचित तथा आकस्मिक प्रकृति के होते है।

iii. **चयन क्रिया (Choice Activity):** निर्णय प्रक्रिया के तीसरे तथा अंतिम चरण में समस्त उपलब्ध क्रिया विधियों में से श्रेष्ठ क्रिया विधि का चयन किया जाता है। साइमन निर्णय निर्माण प्रक्रिया में तार्किकता या विवेकशीलता का विस्तार से विवेचन करते हैं। साइमन निर्णय निर्माण में तार्किकता की वकालत करते हैं। एक निर्णय इस स्थिति में तार्किक

कहा जाता है जब वांछित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उपयुक्त साधनों का चयन किया जाता है।

3-4-5-2-निर्णय निर्माण प्रक्रिया में तार्किकता के विभिन्न प्रकार (Different Types of Rationality in Decision Making Process)

- व्यक्तिनिष्ठ तार्किकता: एक निर्णय व्यक्तिनिष्ठ हो सकता है, यदि व्यक्ति के ज्ञान के अनुसार उपलब्धि बढ़े।
- सचेत तार्किकता: एक निर्णय संचेतन तार्किक हो सकता है, जबकि साधन तथा साध्य का समायोजन एक सचेतन प्रक्रिया हो।
- वैषयिक तार्किकता: एक निर्णय वैषयिक रूप से तार्किक हो सकता है, यदि यह निश्चित मूल्यों को अधिकतम करने का सही व्यवहार करता है।
- जानबूझकर स्थापित तार्किकता: एक निर्णय उस समय जानबूझकर स्थापित तार्किकता हो सकता है. जब साधन और साध्य के बीच सामंजस्य की स्थापना जान बूझकर की जाए।
- संगठनात्मक तार्किकता: एक निर्णय उस समय संगठनात्मक रूप से तार्किक हो सकता है, जब यह संगठन के लक्ष्य की ओर अभिमुख हो ।
- व्यक्तिगत तार्किकता: एक निर्णय उस समय व्यक्तिगत रूप से तार्किक होता है, जब यह व्यक्तिगत लक्ष्यों की ओर अभिमुखिता रखता है।
- साइमन का विचार था कि कोई भी निर्णय पूर्णता तार्किक नही हो सकता। वे पूर्ण तार्किकता के विचार का खंडन करते है और उसके स्थान पर मर्यादित तार्किकता या सीमित तार्किकता के विचार का प्रतिपादन करते है।

3-4-5-3- साइमन के निर्णय निर्माण प्रक्रिया सिद्धांत की आलोचना (Criticism of Simon's Decision-Making Process Theory)

साइमन के आलोचकों का मुख्यत: यह मानना है कि निर्णयन की प्रक्रिया संगठन के लिए महत्त्वपूर्ण है परंतु संगठनात्मक व्यवस्था की व्याख्या के लिए यह अकेली पर्याप्त नहीं है। उनके लिए निर्णयन की प्रक्रिया में भावनात्मक और तर्कपूर्ण दोनों ही तत्त्व का होना आवश्यक है। साइमन निर्णयन के अध्ययन में तथ्य तथा मूल्य के विभेद को स्पष्ट करते है। इस दृष्टिकोण की आलोचना करते हुए कहा गया है कि ये नए रूप में उपेक्षित राजनीति-प्रशासन विभाजन को पुनः जीवित करता है। यह देखा गया है कि निर्णय करने वाले व्यक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा यह साइमन की मुख्य धारणा से मेल नहीं खाता।

साइमन द्वारा दी गई कुशलता की धारणा भी आलोचना का मुख्य विषय बनी हुई है। कुछ आलोचकों ने इसे आर्थिक पहलू में मिलाने के विरुद्ध तथा कुछ प्रशासन को यांत्रिक स्वरूप देने के विचार से इसका विरोध करते हैं। साइमन की तर्कसंगत की धारणा की भी आलोचना की गई है। अर्गिस का कहना है कि साइमन तर्क शब्दों का प्रयोग करके अंतर्बोध, रूढ़ि तथा निर्णयन में विश्वास की भूमिका को मान्यता नहीं देते। लेकिन सभी आलोचनाओं के बावजूद भी साइमन के योगदान को प्रशासनिक सिद्धांत के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण माना गया है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि साइमन ने अपने निर्णय निर्माण प्रक्रिया के तीन चरण बताए हैं, जिनमें अन्वेषण क्रिया, डिजाइन क्रिया तथा चयन क्रिया शामिल है। उन्होंने माना है कि निर्णय का चयन तार्किक तथा विवेकशीलता पर आधारित होना चाहिए। क्योंकि तभी वह सही निर्णय सही साबित होगा। हमने यह भी देखा है कि कई आलोचकों ने इनकी आलोचना भी की लेकिन इसके बावजूद भी साइमन का योगदान प्रशासनिक सिद्धांत के विकास के लिए बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है।

3-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

i. मेयो द्वारा होथोर्न में किए गए प्रयोगों को किस नाम से पुकारा है

ii. मानव संबंध सिद्धांत का जनक किसे कहा गया है

iii. हर्बर्ट साइमन को नोबेल पुरस्कार कब और किस विषय में दिया गया था

iv. हरबर्ट साइमन की किस रचना को निर्णयन प्रक्रिया के अध्ययन की दृष्टि से उल्लेखनीय माना जाता है

v. चुने हुए विकल्पों में से किसी एक के सम्बन्ध में निर्णय करने की प्रक्रिया को क्या कहते हैं

3-6-सारांश (Summary)

मानव सम्बन्धात्मक उपागमः एल्टन मेयो- मानव सम्बधात्मक सिद्धान्त के आधारभूत नियम अमेरिकन समाजशास्त्री एल्टन मेयो द्वारा 20वीं सदी के दूसरे दशक के अन्तिम तथा तीसरे दशक के प्रारम्भिक चरण में प्रतिपादित किए गए थे। औद्योगिक समाजशास्त्र और औद्योगिक मनोवैज्ञानिक पर उनके अध्ययन इतने गहन है कि उसे संगठन के मानव सम्बन्धात्मक उपागम के प्रवर्तकों में गिना जाता है। मेयो ने श्रमिकों के व्यवहार और उनकी उत्पादन क्षमता का गम्भीर अध्ययन किया। मेयो ने इस उपागम को एक 'डॉक्टरी विधि' (क्लिनिकल मेथड) कहा है। अपने शोध के आधार पर उन्होंने कुछ विद्वतापूर्ण लेख और कतिपय ग्रन्थ प्रकाशित किए। मेयो ने मानव सम्बन्धों के अध्ययन को केन्द्र बनाकर कई औद्योगिक समस्याओं का समाधान किया और साथ श्रमिकों को मानवीय व्यवहार का पात्र बनाया। उन्होंने श्रमिकों की सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के महत्व को स्पष्ट किया जो अच्छे औद्योगिक सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है। उन्होंने प्रत्येक कारखाने को सामाजिक संगठन का नाम दिया। मेयो ने भीड़ कल्पना (Rabble Hypothesis) का खण्डन किया जिसके तहत प्रबन्ध के सम्पूर्ण समाज को संगठित व्यक्तियों का झुण्ड मानते है। जो अपनी रक्षा स्वयं करते हैं। उन्होंने समाज में छोटे छोटे सहयोगी समूहों के निर्माण पर जोर दिया। इस उपागम के फलस्वरूप उद्योगों में सामाजिक

कार्य सम्बन्ध, सम्प्रेषण व्यवस्था, भागीदारी, उदार पर्यवेक्षण, भावात्मक अभिप्रेरणा, आत्मविश्वास, मनोबल आदि अवधारणाओं पर ध्यान दिया जाने लगा।

निर्णयन से आशय निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उपलब्ध विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करने से है। निर्णयन की प्रक्रिया का अंतिम परिणाम निर्णय है। निर्णयन, निर्णय तक पहुंचने की प्रक्रिया है। इस तरह निर्णय वैकल्पिक उपलब्ध विकल्पों में से सचेतन रूप से चुने गए विकल्प को कहा जाता है। साइमन की विचारधारा का मूल निष्कर्ष यह है कि संगठन का अध्ययन करने के लिए व्यक्ति को निर्णयन प्रक्रियाओं की जटिल संरचना का अध्ययन करना चाहिए। साइमन के लिए प्रशासन 'कार्य कराने की कला है। उन्होंने उन प्रक्रियाओं तथा विधियों पर बल दिया जिनसे कार्यवाही सुनिश्चित हो । साइमन कहते हैं कि प्रशासनिक विश्लेषण में उस चयन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है जो कार्यवाही से पहले दिया जाना आवश्यक है। निर्णय लेना चयन की वह प्रक्रिया है, जो कार्रवाई आधारित पर होता है। साइमन ने ध्यान दिया किया कि इस निर्णय निर्माण की प्रक्रिया को भली प्रकार से समझने के अभाव में, प्रशासन का अध्ययन बाधित होगा।

3-7-सूचक शब्द (Key Words)

i. **निर्णय-**किसी सिद्धांत, विषय, बात आदि के पक्ष-विपक्ष की सभी बातों का विचार करके उसके विषय में अपने मत को निश्चित करने की अवस्था ।

ii. **निर्णयन-**चुने हुए विकल्पों में से किसी एक के सम्बन्ध में निर्णय करना ही निर्णयन है।

iii. **उपागम-**उपागम अध्ययन का वह तरीका या दृष्टिकोण है जिसके आधार पर किसी विशेष सामाजिक तथ्य की विवेचना की जाती है।

iv. **अवलोकन-** अवलोकन से आशय है-आँखों से देखना।

3-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

i. एल्टन मेयो के मानव संबंधी सिद्धांत की व्याख्या किजिए।

ii. हर्बर्ट साइमन के निर्णय निर्माण सिद्धांत की व्याख्या किजिए।

iii. निर्णयन को परिभाषित करें व इसके विभिन्न विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

iv. मानव संबंधी सिद्धांत का अर्थ व इसके विभिन्न विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

i. क्लिनिकल मेथड कहा है

ii. एल्टन मेयो को

iii. सन् 1978 में, अर्थशास्त्र विषय में

iv. 'Administrative Behaviour'

v. निर्णयन

3-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

(iii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा,डॉ हरी चंद्र शर्मा ,त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iv) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(v) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(vi) विष्णु भगवान, विद्याभूषण लोक के प्रशाशन सिद्धांत एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: BA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 4	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
4-मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत और द्विघटक सिद्धांत (हर्जबर्ग) (maslow's hierarchy of needs theory) and Two-Factor Theory (Herzberg))	

अध्याय की संरचना

4-1-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

4-2-परिचय (Introduction)

4-3-अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

4-3-1-मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत (maslow's hierarchy of needs theory)

4-3-2-मास्लो के सिद्धांत का आलोचनात्मक मूल्यांकन(Critical Evaluation of Maslow's Theory)

4-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

4-4-1-हर्ज़बर्ग का द्विघटक सिद्धांत (Two-Factor Theory OF Herzberg)

4-4-2- कार्य-संवृद्धि की संकल्पना (concept of job enrichment)

4-4-2-1कार्य-संवर्धन के सिद्धांत (Principles of Job Enrichment)

4-4-2-2-हर्जबर्ग के सात सुझाव (Seven suggestions of Herzberg's)

4-4-3-आलोचनात्मक मूल्यांकन (critical evaluation)

4-4-4-हर्जबर्ग और मैस्लो सिद्धांत की तुलना (Comparison of Herzberg's and Maslow's theory)

4-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

4-6-सारांश (Summary)

4-7-सूचक शब्द (Key Words)

4-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

4-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

4-10-संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

4-3-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

i. मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत का ज्ञान करवाना
ii. हर्जबर्ग द्विघटक सिद्धान्त का ज्ञान करवाना
iii. अभिरेणा व कार्यो में सम्बन्ध से अवगत करवाना
iv. किसी कार्य व् परिसथितियों में सम्बन्ध का ज्ञान करवाना
v. मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत व हर्जबर्ग द्विघटक में भेद से अवगत करवाना

4-2-परिचय (Introduction)

प्रशासनिक चिंतकों व वैज्ञानिक प्रबंधन का मत है कि कर्मचारियों को पुरस्कारों और स्वीकृतियों के परिचालन (Manipulation) द्वारा अभिप्रेरित किया जा सकता है और इस उद्देश्य के लिए काम के आधार पर भुगतान प्रणाली विकसित की गई। क्योंकि भुगतान इस बात पर निर्भर करता है किसी ने कितना उत्पादन किया, यह माना गया है कि इससे कामगारों को अधिक उत्पादन के लिए प्रेरित किया जा सकेगा। वह अधिक उत्पादन करेगा, इस प्रकार वह अपनी आय बढ़ा सकता है। अब्राहम मैस्लो जिसने 1943 में साइक्लॉजिकल रिव्यू पत्रिका में प्रकाशित ए थ्योरी ऑफ ह्यूमन मोटिवेशन' शीर्षक से अपने लेख के प्रकाशन से मानव अभिप्रेरण में नए दृष्टिकोण का उद्भव किया। इस लेख में अब्राहम मैस्लो ने मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुक्रम के विचार को स्वीकार किया। मानव प्राणी विलासप्रिय जीव है और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर प्रेरित होता है। मैस्लो से पहले मानवीय संबंध विचार के सभी प्रशासनिक चिंतकों ने यह मानते हुए मनुष्य के बारे में नेमी तौर पर मशीनी दृष्टिकोण अपनाया कि संगठन के उत्पादनकारी साधन के रूप में उसका उपयोग हो सकता है। मैस्लो ऐसी विचारधारा को पूर्णतः अस्वीकार करता है। वह निश्चयपूर्वक कहता है कि

कर्मचारी को औजार के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए क्योंकि आवश्यकताओं की एक मुक्त श्रेणी उसे अभिप्रेरित करती है।

अब्राहम मैस्लो ने मनोविश्लेषण के माध्यम से मानव व्यवहार समझने का प्रयास किया। मैस्लो ने साकल्यवाद संबंधी मनोविज्ञान (Holistic Psychology) अवधारणा विकसित की है। इसे वह "तीसरी शक्ति" कहता है अन्य दो व्यवहारवाद और मनोविश्लेषण हैं। मैस्लो अपना मुख्य प्रयास व्यक्तित्व के क्षेत्र में करता है। वह तर्क प्रस्तुत करता है कि अब तक मनोविज्ञान ने मानव कमजोरी पर बहुत अधिक ध्यान केन्द्रित किया है और मानव शक्तियों की उपेक्षा की है। वह दावा करता है कि अनिवार्यतः मानव स्वभाव अच्छा होता है। जैसे मानव व्यक्तित्व परिपक्वता के माध्यम से विकसित होता है. सृजनशील क्षमता अधिक तेज़ी से स्पष्ट होती है। यदि मनुष्य दुखी है तो दोष परिवेश पर होता है। जो उन्हें ऐसा बनाता है। मनुष्य मूल रूप से विनाशकारी या हिंसक नहीं है: वह ऐसा केवल तभी होता है जब आंतरिक स्वरूप दुखी किया जाता है।

4-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

4-3-1 मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत(maslow's hierarchy of needs theory)

अब्राहम मैस्लो ने आवश्यकता की अवधारणा पर आधारित तीन आधारभूत प्रस्तावों को प्रस्तुत किया:

- मनुष्य अभावग्रस्त (Wanting) जीव है। उसकी सदा कुछ आवश्यकता होती हैं जो उसे करने कुछ के लिए प्रेरित करता है।
- आवश्यकता का अनुक्रम होता है उन्हें प्राथमिकता के आधारपर क्रम से रखा जाता है ताकि अधिक आधारभूत आवश्यकताओं की संतुष्टी पहले हो सकें। पहले पूरा किए जाने

के लिए इससे अधिक आधारभूत आवश्यकताओं के अनुसार प्राथमिकता के क्रम में रखे जाते हैं।

- मनुष्य केवल अपनी पूरी न हुई आवश्यकताओं द्वारा प्रेरित किया जाता है। यदि शारीरिक और सुरक्षा 'आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं तो प्रेम और स्नेह तथा अपनत्व की आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं। इनमें उपलब्धि, पर्याप्तता, ख्याति, मान्यता, महत्व, प्रशंसा तथा पसंद की इच्छा शामिल है।

  अब्राहम मैस्लो के अनुसार, 'आत्म प्रत्यक्षीकरण का संबंध मनुष्य की आत्मतुष्टि मनुष्य की इच्छा से है, अर्थात् इच्छा को भूत रूप देने वृत्ति से है जो संभवतः उसमें हैं। इस प्रवृत्ति को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है; वह इच्छा अधिकाधिक होती है, जो ऐसी वस्तु के लिए हो सकती है जिसे करने में वह सक्षम है।"

मानव व्यवहार का विश्लेषण उनकी क्रियाओं और उनके पीछे प्रयोजनों से किया जा सकता है। मैस्लो का मानव अभिप्रेरण सिद्धान्त, अध्ययन और बाल अभिप्रेरण के विश्लेषण के ढाँचे का प्रबंध करता है। जैसा कि मैस्लो स्वयं कहता है "अभिप्रेरण सिद्धांत व्यवहार सिद्धांत का पर्याय नहीं है।

मैस्लो मनुष्य की आवश्यकताओं को पदानुक्रम के रूप में देखता है, जो आरोही क्रम में आरंभ होकर निम्नतम से उच्चतम आवश्यकताएँ होती हैं और इस परिणाम पर पहुँचती हैं कि जब आवश्यकता का सेट पूरा हो जाता है तब अन्य सेट की आवश्यकता उत्पन्न होती है। मैस्लो के अनुसार मानव प्रणाली एक जीव है जो उसकी आवश्यकताएँ पूरी करने में लगा रहता है। भूख की सहज प्रवृत्ति या कोई अन्य शारीरिक सहज प्रवृत्ति के द्वारा अभिप्रेरण के सिद्धांत की व्याख्या नहीं की सकती हैं। युक्तियुक्त अभिप्रेरण सिद्धांत मनुष्य के आधारभूत लक्ष्यों पर केन्द्रित करता है। मानव व्यवहार एक से अधिक आवश्यकताओं को प्रतिबिम्बित करता है। विशिष्ट समूहों में आवश्यकताओं का वर्गीकरण अभिप्रेरण सिद्धांत निर्माण में

आवश्यक है। वह कहता है कि अभिप्रेरणों का वर्गीकरण सहज प्रवृत्ति या अभिप्रेरित व्यवहार को भड़काने के बदले लक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए। वह आगे कहता है कि जिस स्थिति मनुष्य प्रतिक्रिया करता है, वह अभिप्रेरण सिद्धांत का मान्य बिन्दु है, परंतु वह बल देता है कि सदा स्थिति के बदले व्यक्ति के व्यवहार पर होना चाहिए।

मैस्लो मनुष्य की आवश्यकताओं को प्रबलता के अनुक्रम में रखता है। निम्नतम छोर पर शारीरिक और सुरक्षा आवश्यकताएँ हैं। आत्म प्रत्यक्षीकरण आवश्यकता उच्चतम छोर पर है। इनके बीच सामाजिक और आत्मसम्मान आवश्यकताएँ हैं। जब निम्नतर क्रम पर आवश्यकताएँ पूरी हो जाती है, जब उच्चतर क्रम आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं। मैस्लो द्वारा महत्व के आरोही क्रम में निर्धारित मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताएँ निम्न प्रकार हैं: शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकता, सुरक्षा की आवश्यकता,संबंध एवं स्नेह की आवश्यकता,आत्म-सम्मान की आवश्यकता, आत्मासिद्धि की आवश्यकता

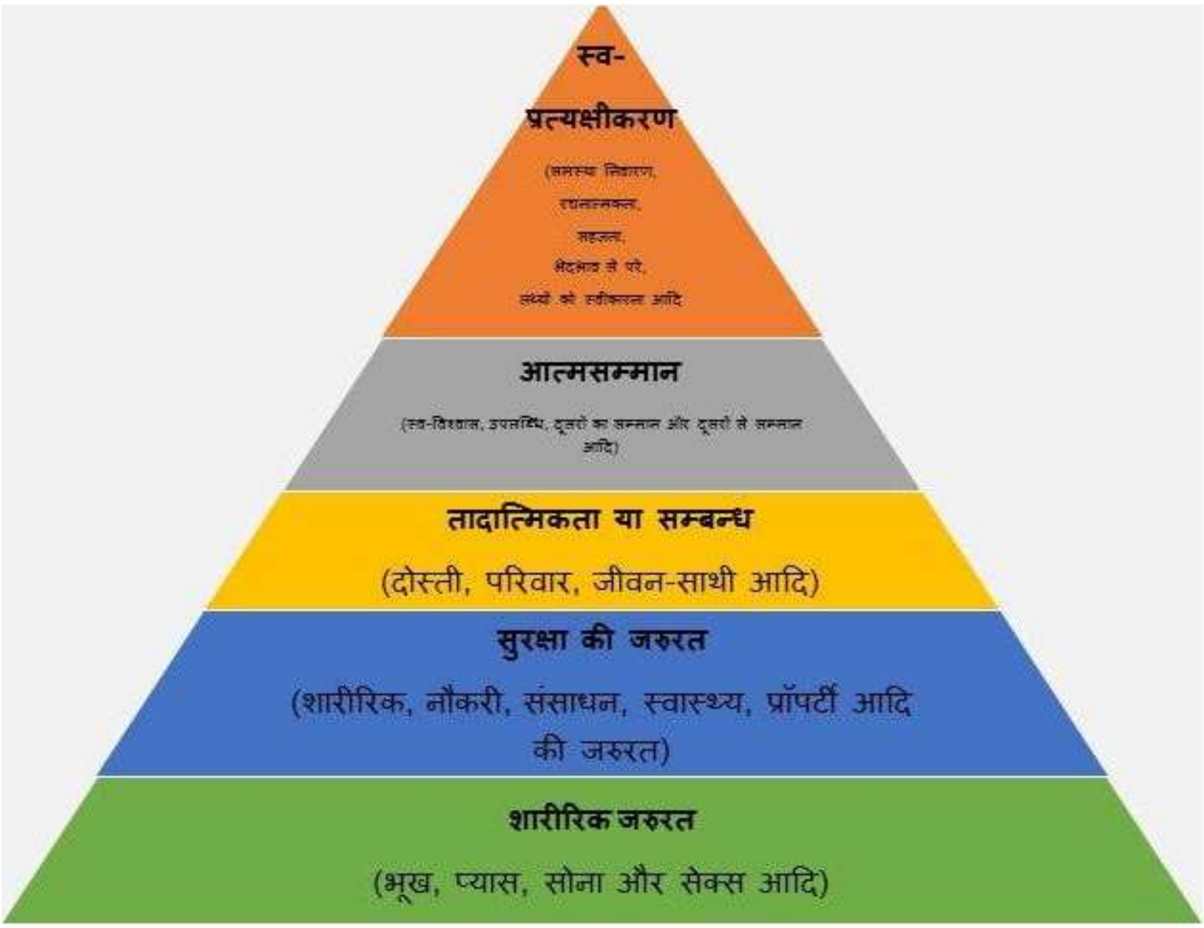

i. **शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकता:-**मनुष्य का जब जन्म होता है तब कुछ शारीरिक या बुनियादी आवश्यकताओं की जरूरत होती है उसे ही शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकता कहते हैं या फिर वे प्रेरक जो व्यक्ति में बुनियादी आवश्यकताओं के कारण उत्पन्न होती हैं उन्हीं प्रेरकों को शारीरिक एवं दैहिक अभिप्रेरणा कहते हैं इनकी आपूर्ति के अभाव में मानव शरीर का संतुलन बिगड़ जाता है तथा उसके अस्तित्व को खतरा होने लगता है। जैसे किसी व्यक्ति को भूख लगने पर भोजन की तलाश करना, प्यास लगने पर पानी इत्यादि। शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकता मानव के प्राथमिक आवश्यकता होती है जैसे हवा, भूख, प्यास, नींद, प्रजनन (सेक्स), मलमूत्र त्यागना, आश्रय, कपड़ा इत्यादि मानव की बुनियादी या प्राथमिक आवश्यकता होती है। कोई भी व्यक्ति इन सभी मांगों की पूर्ति होने पर ही वे दूसरी स्तर की आवश्यकताओं के बारे में सोचता है।

ii. **सुरक्षा की आवश्यकता:-**मानव अपनी शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद अपने जीवन की सुरक्षा के बारे में सोचता है तथा ऐसे सभी संभव उपाय करता है जिससे उसके जीवन को कोई खतरा न हो। जैसे सुरक्षित घर, नौकरी की सुरक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षित वातावरण इत्यादि। मनुष्य अपने जीवन को सुरक्षित रखने के लिए कई प्रकार के कानून भी बनाता हैं जिससे कि मनुष्य कानून के दायरे में रहकर अपने आप को सुरक्षित रख सके। मानव सुखी जीवन एवं अपने बुढ़ापे तक की सुरक्षा के बारे में सोच कर विभिन्न प्रकार के उपाय जैसे जीवन बीमा,एलआईसी, पैसों की बचत, स्वास्थ्य जैसे विकल्पों को चुनने लगता है। जब मानव को अपना जीवन सुरक्षित लगने लगता है तब वह अगली स्तर के बारे में सोचता है।

iii. **संबंध एवं स्नेह की आवश्यकता:-**मानव जीवन का तीसरा स्तर या आवश्यकता 'संबंध एवं स्नेह' है। जब मानव का प्राथमिक या बुनियादी स्तर एवं सुरक्षा आदि मांगे पूरी हो जाती है तब वे दूसरों से संबंध एवं स्नेह आदि आवश्यकताओं के लिए प्रेरित होते हैं। वह

समाज से प्रेम, स्नेह, सहानुभूति की अपेक्षा करता है। वह इसी भावना के तहत अपने निकट संबंधियों, पड़ोसियों, मित्रों तथा दूसरे लोगों से मधुर संबंध कायम करता है। वह चाहता है कि वह दूसरे लोगों को स्नेह दे तथा वे भी उसे स्नेह दे। वह '**Live and let live'** के सिद्धांत में विश्वास रखता है। अर्थात्, या तो व्यक्ति किसी का हो जाए अथवा किसी को अपना बना ले। यही जीवन का सत्य है।

iv. **आत्म-सम्मान की आवश्यकता:-** समाज में मधुर संबंधों के साथ-साथ व्यक्ति अपने अहं तथा आत्म सम्मान को भी बचाए रखने का प्रयास करता है। इसके लिए, वह हर संभव प्रयास करता है क्योंकि आत्म सम्मान की रक्षा में ही उसके जीवन की सार्थकता है। अपमान की जिंदगी वह एक क्षण भी बर्दाश्त नहीं कर सकता। यह एक उच्च स्तरीय आवश्यकता है। इसके लिए व्यक्ति शक्ति ग्रहण करना चाहता है स्वामित्व चाहता है नेतृत्व चाहता है तथा स्वतंत्र रहना चाहता है। इस प्रकार की आवश्यकता की संतुष्टि ना होने पर व्यक्ति में हीन भावना उत्पन्न हो जाती है।

v. **आत्मासिद्धि की आवश्यकता:-**अंत में व्यक्ति की सबसे बड़ी इच्छा होती है कि वह समाज के हित में कुछ योगदान कर सके ताकि लोग उसके मरने के बाद भी उसे याद कर सके। यह योगदान आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक तथा आध्यात्मिक किसी भी रूप में हो सकता है। वह समाज का पथ प्रदर्शक बनना चाहता है जिसे समाज का हित हो समाज का विकास हो। मैस्लो का कहना है कि आत्मानुभूति या आत्मा सिद्धि की आवश्यकता का अर्थ है की एक संगीतज्ञ को संगीत प्रस्तुत करना चाहिए, कलाकार को चित्रकारी करनी चाहिए, तथा कवि को कविता लिखनी चाहिए यदि वह आत्म- संतुष्टि चाहता है तो। अर्थात् एक व्यक्ति को वही होना चाहिये जो वह हो सकता है।

मानव व्यवहार का विश्लेषण उनकी क्रियाओं और उनके पीछे प्रयोजनों से किया जा सकता है। सामाजिक मनोविज्ञान में मानव व्यवहार के माध्यम से मानव आवश्यकताओं और उद्देश्यों का विश्लेषण करने में नया पथ दिखाया है। मैस्लो का मानव अभिप्रेरण सिद्धान्त, अध्ययन

और बाल अभिप्रेरण के विश्लेषण के ढाँचे का प्रबंध करता है। जैसा कि मैस्लो स्वयं कहता है "अभिप्रेरण सिद्धांत व्यवहार सिद्धांत का पर्याय नहीं है। अभिप्रेरण व्यवहार के निर्धारकों की केवल एक श्रेणी है। जबकि व्यवहार प्रायः सदा अभिप्रेरित किया जाता है, यह सदा प्रायः जीव वैज्ञानिक दृष्टि से, सांस्कृतिक दृष्टि से और स्थितिपरक दृष्टि से भी निर्धारित किया जाता है।"

मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं की आरोही क्रम में पहचान करने के बाद, मैस्लो इन बुनियादी आवश्यकताओं की विशेषताओं की चर्चा करता है। पहला, अनुक्रम न तो कठोर है न ही बिल्कुल पश्थक है। इसका अभिप्राय है कि आवश्यकताओं के अनुक्रम में कोई दृढ़ता नहीं है। उदाहरण के लिए, कुछ लोग शारीरिक से सम्मान आवश्यकताओं को तरजीह देते हैं। इसके अलावा निम्नतम छोर पर आवश्यकता पूरी होने पर खास आवश्यकता का भी उद्भव अचानक नहीं होता है। दूसरा, बुनियादी आवश्यकताएँ उन समाजों और संस्कृतियों को ध्यान में रखे बिना एक समान और उभयनिष्ठ होती हैं। जिनमें वे रहते हैं। तीसरा, मानव व्यवहार विविध आवश्यकताओं का प्रतिबिम्ब है और अकेले एक ही परिवर्ती या आवश्यकता द्वारा भी प्रभावित नहीं हो सकती है। इसके अलावा, सभी व्यवहारों को अकेले बुनियादी आवश्यकताओं द्वारा निर्धारित नहीं किया जा सकता हैं। और अंत में, पूरी हुई आवश्यकता आवश्यक रूप से अभिप्रेरक नहीं होता है। यद्यपि मैस्लो के सिद्धांत के पदानुक्रमिक पहलू संदेहास्पद हैं और बहुधा स्वीकार्य नहीं हैं, परंतु मनुष्य की बुनियादी आवश्यकता और उसका निर्धारण करने में उसकी उपयोगी प्रतीत होती है।

4-3-2-आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)

सामाजिक-मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में मैस्लो के अपनी आवश्यकता अनुक्रम में योगदान युगान्तरकारी घटना है। अभिप्रेरण के लिए आधुनिक प्रबंध दृष्टिकोण पर उसके सिद्धांत का व्यापक प्रभाव हुआ।

मैस्लो के आवश्यकता अनुक्रम सिद्धांत की आलोचना मुख्य रूप से उसके अनुसंधान आँकड़ों की जटिलता, वैधता और आवश्यकताओं के अनुक्रम के आधार पर हुई थी। मैस्लो के सिद्धांत की वास्तविकताओं पर अनुसंधान इन आवश्यकताओं के अनुक्रमिक पहलुओं की परिशुद्धता के बारे में संदेह प्रगट करता है। फिर भी, बुनियादी आवश्यकताओं के उसके निर्धारण पर्याप्त उपयोगी हुए हैं। 187 प्रबंधकों पर लावलेर और सुटल (Lawler and Suttle) के अनुसंधान दो भिन्न-भिन्न संगठनों में मैस्लो के सिद्धांत का समर्थन नहीं करते हैं कि मनुष्य की आवश्यकताएँ अनुक्रम के अनुरूप होती हैं। अनुसंधानकर्त्ता यद्यपि यह नोट अवश्य करते हैं कि आवश्यकताओं के दो स्तर, अर्थात् जैविक और अन्य आवश्यकताएँ हैं और कि अन्य आवश्यकताएँ केवल तब उत्पन्न होती हैं जब जैविक आवश्यकताएँ पर्याप्त रूप से पूरी की जाती हैं। उनका अनुसंधान आगे यह निर्दिष्ट करता है कि उच्चतर स्तर पर आवश्यकताओं की शक्ति व्यक्तियों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती हैं, कुछ व्यक्तियों में सामाजिक आवश्यकताएँ प्रबल होती हैं अन्य में आत्म प्रत्यक्षीकरण आवश्यकताएँ अत्यधिक दृढ़ होती है।

पोर्टर भी अपने अध्ययन में ज्ञात करता है कि आवश्यकताएँ अनुक्रम का अनुसरण नहीं करती हैं, विशेषकर जब निम्नतर स्तर की आवश्यकता पूरी हो जाती है। वह ज्ञात करता है कि सभी स्तरों पर प्रबंधकों की सुरक्षा और सामाजिक आवश्यकताएँ समान हैं और कि मैस्लो के अनुक्रम में तीन श्रेष्ठ आवश्यकताएँ प्रबंधकीय श्रेणियों से बहुत भिन्न हैं, क्योंकि उच्चतर स्तर के प्रबंधकों की तुलना में निम्न आवश्यकताएँ प्रबंधकीय श्रेणियों से बहुत भिन्न हैं, क्योंकि उच्चतर स्तर के प्रबंधकों की तुलना में निम्न स्तर के प्रबंधकों की आवश्यकताएँ पूरी कम होती हैं। फिर भी सभी स्तरों पर इन आवश्यकताओं की पूर्ति निश्चित रूप से अधिक या कम त्रुटिपूर्ण है।

इसी तरह हॉल और नौगाइम (Hall and Nougaim) को पाँच वर्षों की अवधि में प्रबंधकों के समूह को शामिल करते हुए मैस्लो के सिद्धांत के अपने अध्ययन में अनुक्रम का कोई दृढ़ साक्ष्य नहीं मिलता है। वे प्रकट करते हैं कि जैसे-जैसे प्रबंधक संगठन में प्रगति करते हैं, वैसे वैसे उनकी शारीरिक और सुरक्षा आवश्यकताओं का महत्व घटने लगता हैं और उनकी संबंधन सम्मान और आत्म-प्रत्यक्षीकरण की आवश्यकताएँ बढ़ने लगती हैं। उन्होंने प्रेक्षण किया है कि आवश्यकताओं की ऊर्ध्व संचलन कैरियर विकास से होता है और निम्नतर स्तर की आवश्यकताओं की पूर्ति से नहीं होता है।

वाभा और वर्डवेल (Wabha and Birdwell) द्वारा किए गए हाल ही के अनुसधान अध्ययनों से प्रकट होता है कि मैस्लो का सिद्धांत मान्य नहीं है। वे कहते हैं कि आवश्यकताओं के दो प्राथमिक विचारधाराएँ (स्कूल) हैं न कि पाँच। वे उल्लेख करते हैं "इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है कि मनुष्य की आवश्यकताएँ पाँच सुस्पष्ट श्रेणियों में वर्गीकृत की गई हैं या कि इन श्रेणियों को विशेष अनुक्रम में संरचित किया गया है। इसके कुछ प्रमाण है कि संभवतः आवश्यकताओं के दो प्ररूप हैं, कर्मी और संवृद्धि आवश्यकताएँ, यद्यपि यह श्रेणीकरण सदा व्यावहारिक नहीं है।

इसी प्रकार नैश (Nash) कहता है कि मैस्लो का सिद्धांत दिलचस्प है परंतु मान्य नहीं। "मैस्लो के अच्छे विचार थे।" परंतु "मैस्लो की आवश्यकता अनुक्रम के साथ समस्या है कि यह उन प्रबंधकों के लिए व्यावहारिक मार्गदर्शन में नहीं बदला जा सकता है जो लोगों को उत्पादनकारी बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

इस प्रकार मैस्लो के सिद्धांत की आलोचना अधिकांशतः अनुसंधान समर्थन के अभाव में हुई, यह आवश्यकताओं के अनुक्रम पर विवाद के संबंध में और आत्म-प्रत्यक्षीकरण के अस्पष्ट स्वरूप के संबंध में था। यद्यपि मैस्लो के सिद्धांत पर प्रश्न उठाए जाते हैं और बहुधा स्वीकार नहीं किए गए हैं। फिर भी, बुनियादी आवश्यकताओं का उसका निर्धारण पर्याप्त

लोकप्रिय रहा है। अभिप्रेरण के स्वरूप के संबंध में हमारा ज्ञान बढ़ाने में उसका महत्वपूर्ण योगदान किया है। अभिप्रेरण के बारे में उसके स्पष्ट दृष्टिकोण ने आधुनिक प्रबंधन को अत्याधिक प्रभावित किया है।

4-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

4-4-1 हर्ज़बर्ग का द्विघटक सिद्धांत (Two-Factor Theory OF Herzberg)

फ्रेडरिक हर्जबर्ग तथा उनके साथियों पिट्सबर्ग क्षेत्र के 200 अभियन्ताओं एवं लेखापलकों के साक्षात्कार से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर द्विघटक विचारधारा धारा का विकास किया। इसे अभिप्रेरणा की आरोग्य विचारधारा के नाम से भी जाना जाता है।

उनके मतानुसार मानव व्यवहार को समझने के लिए उनकी कृत्य प्रवृत्तियों का अध्ययन किया जाना आयक है। इसके लिए उन्होंने साक्षात्कार में हिस्सा लेने वाले व्यक्तियों से पूछा कि किस प्रकार की बात उन्हें कार्य करते हुए अप्रसन्न बनाती हैं? किस प्रकार की बातें उन्हें कार्य करते हुए प्रसन्न बनाती हैं? इस साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से हर्जबर्ग ने यह निष्कर्ष निकाला कि व्यक्तियों को दो विभिन्न प्रकार की आवश्यकताएं होती हैं जो कि एक-दूसरे पर निर्भर नहीं है। ये मानव के व्यवहार को अलग-अलग तरीके से प्रभावित करती हैं। उनके अनुसार जब व्यक्ति अपने कृत्य से असन्तुष्टि महसूस करता है तो उसका ध्यान उस वातावरण की ओर अधिक होता है जिसमें कि वह कार्य कर रहा है। इसे ही हर्जबर्ग ने **स्वच्छता , आरोग्य ,अनुरक्षक, आरोग्यवर्द्धक अथवा असंतोषजनक घटक (Maintenance, Hygiene or Dissatifiers)** कहा है। इसमें संस्था की नीतियां, प्रशासन, पर्यवेक्षण, कार्य की दशाएं, कार्य सुरक्षा, आदि सम्मिलित हैं। इसके विपरीत, जब व्यक्ति कृत्य से अच्छा महसूस करते हैं तो उनका ध्यान कार्य की तरफ अधिक रहता है, जिसे हर्जवर्ग ने **उत्प्रेरक, उत्प्रेरणात्मक घटक अभिप्रेरक अथवा संतोषक तत्व (Motivators or Satisfiers)** कहा है। उत्प्रेरक तत्व में कर्मचारी की उपलब्धियां, मान्यता, अधिक उत्तरदायित्व तथा विकास के

अवसर सम्मिलित किए गए हैं। इन दो वर्गों को निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है

I. **स्वच्छता कारक, अनुरक्षक, आरोग्यवर्द्धक अथवा असंतोषजनक घटक (Maintenance, Hygiene or Dissatifiers)** वे घटक जिनका सम्बन्ध कृत्य के वातावरण या परिस्थितियों (Context) से है उन्हें 'अनुरक्षक, आरोग्यवर्द्धक अथवा असंतोषजनक तत्व' कहा जाता है। ये व्यक्तियों के वे अनुभव हैं जो असन्तुष्टि प्रदान करते हैं। इनका सम्बन्ध कृत्यों के बाहरी वातावरण से हैं। इन घटकों में निम्न महत्वपूर्ण है- 1. कम्पनी नीति तथा प्रशासन, 2. तकनीकी निरीक्षण,3. अधीनस्थ के साथ पारस्परिक व्यक्तिगत सम्बन्ध,4. सहकर्मियों के साथ पारस्परिक सम्बन्ध,5. निरीक्षक के साथ पारस्परिक व्यक्तिगत सम्बन्ध,6. वेतन,7. कार्य सुरक्षा,8. व्यक्तिगत जीवन,9. कार्य करने की दशाएँ तथा 10. पदस्थिति ।

II. **उत्प्रेरणात्मक घटक अभिप्रेरक अथवा संतोषक तत्व (Motivators or Satisfiers)**

ये वे घटक हैं जिनका सम्बन्ध कृत्य की विषय-वस्तु (Contents) से है। ये व्यक्ति के वे अनुभव हैं जो सन्तुष्टि प्रदान करते हैं। इन्हें 'उत्प्रेरणात्मक घटक' कहा जाता है। इन घटकों का सम्बन्ध कृत्यों के आन्तरिक वातावरण से है। इन घटकों उपलब्धि या कार्य सफलता, मान्यता , उन्नति ,स्वयं कार्य , प्रगति के अवसर ,उत्तरदायित्व शामिल हैं:

हर्जवर्ग के अनुसार अरोग्य घटकों से उत्पादन में वृद्धि सम्भव नहीं होती, ये घटक तो कार्य अवरोधों के द्वारा होने वाले नुकसानों से बचाते हैं। ये निवारक उपाय हैं। इनकी उपस्थिति असन्तुष्टि एवं कार्य की बाधाओं को कमजोर करती है; इनकी उपस्थिति कर्मचारियों में उत्प्रेरणा का उचित स्तर बनाये रखने के लिए आवश्यक है। अपने आप में ये घटक उत्प्रेरणा

प्रदान नहीं करते बल्कि स्वयं एवं प्रभावी वातावरण सृजित करने में मदद करते हैं। इनकी अनुपस्थिति कार्य असन्तुष्टि में वृद्धि करती है।उत्प्रेरणात्मक घटक कार्य सन्तुष्टि को सकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। उत्प्रेरकों की उपस्थिति कार्यक्षमता एवं उत्पादकता में सामान्यतया वृद्धि करती है। इनकी उपस्थिति से | व्यक्तियों में कार्य करने की इच्छा जाग्रत होती है अर्थात घटकों की अनुपस्थिति कार्य असन्तोष में वृद्धि करती है तथा उत्प्रेरणात्मक घटकों की उपस्थिति कार्य सन्तोष में वृद्धि करती है।

हर्जबर्ग का अभिप्रेरणा सिद्धांत संतोष सिद्धांत के अंतर्गत आता है, क्योंकि यह उन आंतरिक और बाहरी कारकों पर ध्यान केंद्रित करता है जो व्यक्ति के अभिप्रेरणा को प्रभावित करते हैं। मॉस्लो के आवश्यकता-पदानुक्रम सिद्धांत से संकेत लेते हुए हर्जबर्ग ने अपना दो कारक सिद्धांत निरूपित किया जो अभिप्रेरणा-स्वच्छता सिद्धांत कहलाता है।

उसने 'अनुरक्षण' और 'वृद्धि' के आधार पर अभिप्रेरणा और संतुष्टि को प्रभावित करने वाले कारकों को विभक्त किया। हर्जबर्ग ये अनुरक्षण कारक स्वच्छता कारक थे, जो कार्य- संवृद्धि से संबद्ध थे; कारक जो कार्य के प्रति बाहरी थे।

हर्जबर्ग के लिए अभिप्रेरक संवृद्धि (प्रगति) कारक थे, क्योंकि वे कार्य संतुष्टि से संबद्ध थे, वे कारक कार्य संतुष्टि के प्रति सहज थे। उनका मानना था कि स्वच्छता कारकों पर विचार किया जाना चाहिए, उन्हें पहले संतुष्ट करना चाहिए। हर्जबर्ग के अनुसार, स्वच्छता कारकों की पूर्ति हो जाने पर कार्य-संवृद्धि के माध्यम से अभिप्रेरणा होता है। ऐसा हो जाने पर, वृद्धि कारकों - जो कि वास्तविक कारक है, के इर्द-गिर्द केंद्रित होना चाहिए। हर्जबर्ग के अनुसार, संतोष का विपरीत शब्द असंतोष नहीं है, बल्कि संतोष न होना उसका विपरीतार्थक है। हर्जबर्ग के अनुसार, कार्य-संतुष्टि की ओर अग्रसर करने वाले कारक उन कारकों से पृथक व भिन्न होते हैं, जो कार्य-असंतुष्टि प्रदान करते हैं।

हर्जबर्ग की मान्यता है कि एक रचना (Construct) के रूप में अभिप्रेरणा के दो पृथक् आयाम है:-अभिप्रेरक कारक जो संतुष्टि को प्रभावित करते हैं ,स्वच्छता कारक जो असंतुष्टि से निर्धारित करते हैं।

हर्जबर्ग के मतानुसार, स्वच्छता कारक या असंतोषप्रद कारक कार्य-असंतुष्टि सृजित कर सकते हैं लेकिन उनकी उपस्थिति संतोष को प्रेरित या निर्मित नहीं करती। इनके बिना वृद्धि अभिप्रेरक प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए। उन्होंने केवल कार्य-मनोवृत्तियों और निष्पादन में अल्पकालिक परिवर्तनों को उत्पन्न किया। ये थे कंपनी नीति और प्रशासन, मजदूरियाँ, वेतन, पर्यवेक्षक की गुणवत्ता, अंतः वैयक्तिक संबंधों की गुणवत्ता, कार्य-स्थितियाँ (दशाएँ), नौकरी, सुरक्षा की भावना । अभिप्रेरणा कारक या संतोषक (Satisfiers) वे हैं, जो कार्य-संतुष्टि, कार्य-संवृद्धि, उपलब्धि, मान्यता और चुनौतियाँ प्रदान कर सकते हैं। प्रस्थिति, प्रगति के अवसर, मान्यता प्राप्त करना, कार्य को चुनौती देना या उद्दीप्त करना और व्यक्तिगत उपलब्धि की भावना हर्जबर्ग के अनुसार कुछ अभिप्रेक (Motivators) थे । हर्जबर्ग के अनुसार, स्वच्छता कारक संतोषक निष्पादित किए जाने वाले कार्य से संबंधित थे। वे इस तथ्य से संबंधित थे कि व्यक्ति ने क्या किया, ये जबकि असंतोषक उस स्थिति से संबद्ध थे जिसमें व्यक्तियों या कर्मचारियों या श्रमिकों ने वही किया जो वह कर पाए। हर्जबर्ग के अनुसार, अभिप्रेरक के रूप में वेतन केवल समूह में ही सार्थक था और सही मायने में संतोषक नहीं था । हर्जबर्ग के लिए कार्य असंतुष्टि और कार्य संतुष्टि ने एक-दूसरे से अलग रह कर (स्वतंत्र रूप में) कार्य किया। उनके अनुसार संतुष्टि और असंतुष्टि सातत्यक पर नहीं थे, जिसमें एक बढ़ रहा है और दूसरा घट रहा है। स्वच्छता कारक कार्यस्थल या कर्मचारी में असंतुष्टि का कारण होते है। इस प्रकार, इन्हें कम किया जाना चाहिए या समाप्त किया एक बढ़ रहा है और दूसरा घट रहा है। स्वच्छता कारक कार्यस्थल या कर्मचारी में असंतुष्टि का कारण होते है। इस प्रकार, इन्हें कम किया जाना चाहिए या समाप्त किया जाना चाहिए। ऐसा करने पर

अभिप्रेरक कारक कार्य संतुष्टि को बढ़ाने के लिए अभिवृद्ध हो सकते हैं। हर्जबर्ग के अभिप्रेरणा सिद्धांत के तीन मुख्य सिद्धांत है -

- कार्य-संतोष उत्पन्न करने में सम्मिलित कारक कार्य असंतोष प्रदान करने वाले कारकों से पृथक् व भिन्न थे। संवृद्धि उपलब्धि के साथ होती है और उपलब्धि के लिए कार्य को निष्पादित करना ज़रूरी है। स्वच्छता कारक कार्यों के लिए असंबद्ध हैं ।
- कार्य में संतोष का विपरीतार्थक असंतोष नहीं था। यह केवल मात्र कार्य संतोष नहीं था। संतोष और असंतोष अमूर्त भावनाएँ थी। जैसाकि हर्जबर्ग ने कहा ये एकध्रुवीय विशेषताएँ थीं।
- कार्य असंतोष को रोकने से स्वच्छता कारकों की तुलना में स्थायी असंतोष पर अभिप्रेरक का प्रभाव अधिक दीर्घकालिक होता है। अभिप्रेरक आत्म-पोषित है, जबकि स्वच्छता आवश्यकताओं को पूरी तरह से संतुष्ट नहीं किया जा सकता और उन्हें पुनः लागू करना होगा। हर्जबर्ग का मानना है कि संतोष प्रदान करने के लिए काम से जुड़े अभिप्रेरक कारकों पर विचार करना जरूरी है। हर्जबर्ग ने इसे कार्य-संवृद्धि की संज्ञा दी।

4-4-2 कार्य-संवृद्धि की संकल्पना (concept of job enrichment)

कार्य-संवृद्धि एक प्रबंधन संकल्पना है जिसमें कार्यों को ज्यादा चुनौतीपूर्ण बनाने और पुनरावृत्ति को कम करने के लिए कार्यों का पुनः डिज़ाइन करना निहित है। यह संकल्पना 1968 हार्वड बिज़नेस रिव्यू में प्रकाशित मनोवैज्ञानिक फ्रेडरिक हर्जबर्ग के आलाख “वन मोर टाईम : हाऊ डू यू मोटीवेट इम्प्लोइज़" (One More Time : How Do You Motivate Employees) पर आधारित है। हर्जबर्ग का मानना था कि कर्मचारियों के अभिप्रेरणा और उत्पादकता को बेहतर बनाने के लिए कर्मचारियों के प्रयोजनार्थ विद्यमान अभिप्रेरकों में वृद्धि करने के लिए कार्यों को संशोधित किया जाना चाहिए। कार्य-संवृद्धि का प्रयोजन कर्मचारी की स्थिति (Position) को ज्यादा संतोशजनक बनाना है। कंपनी के समग्र लक्ष्यों में प्रायः

कर्मचारी कार्य-संतुष्टि को बढ़ाना, टर्नओवर को कम करना और कर्मचारियों की उत्पादकता को बेहतर बनाना शामिल है।

हर्जबर्ग का मत था कि (अभिप्रेरकों के माध्यम) से कार्य-संवृद्धि करना किसी भी अभिप्रेरण नीति का केंद्रीय घटक होना चाहिए। कार्य-संवृद्धि के अंतर्गत कर्मचारियों को कार्य पूरे करने

और कार्यों की श्रेणियों (प्रकार) और जटिलता को बढ़ाकर कर्मचारियों को ज्यादा दायित्व देने और उन्हें अनिवार्य प्राधिकार प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। यह कर्मचारियों को उनकी योग्यताओं का पूर्णतया प्रयोग करने का अवसर प्रदान करके उन्हें अभिप्रेरित करता है। हर्जबर्ग के अनुसार, संवर्धित कार्यों में विभिन्न योग्यता स्तरों पर कार्यों की श्रेणियों, चुनौतियों, उपलब्धि और निष्पादन पर प्रतिपुष्टि (Feedback) के लिए स्पश्ट अवसर समाविष्ट होने चाहिए।

कार्य संवर्धन में व्यवस्थित प्रशिक्षण भी होना चाहिए। कार्य-संवर्धन निम्नलिखित द्वारा संभव है:

- कार्य की पुनरावृत्ति को कम करना ।
- कर्मचारियों की उपलब्धि और मान्यता (पहचान) की भावनाओं को संवृद्ध करना।
- कर्मचारियों के कैरियन-संवर्धन (Career Enhancement) के प्रावधान
- कर्मचारियों की गैर-प्रौन्नति संवृद्धि (Non-promotion Growth) पर ध्यान केंद्रित होना अर्थात् कौशल व तकनीकी ज्ञान के संदर्भ में व्यक्तिगत संवृद्धि ।

4-4-2-1कार्य-संवर्धन के सिद्धांत (Principles of Job Enrichment)

हर्जबर्ग के अनुसार, ऊर्ध्वाधर कार्यभार स्थिति (Vertical Job Loading) से अभिप्राय है कर्मचारियों की पोजीशन (स्थिति) का संवर्धन करना। क्षैतिज (Horizontal) कार्यभार स्थिति की तुलना में, ऊर्ध्वाधर कार्यभार स्थिति कार्य को अधिक चुनौतीपूर्ण बनाकर कार्य के स्वरूप

को परिवर्तित करने में विश्वास रखता है। हर्जबर्ग ने अभिप्रेरणा और कार्य पर्यावरणों (परिवेशों) पर इसके प्रभाव को जानने व समझने के लिए एक भिन्न विन्यास (ढाँचा) प्रदान किया। उसमें ऊर्ध्वाधर कार्य भार की बजाए क्षैतिज कार्यभार की चर्चा की। इसका अभिप्राय है कर्मचारियों से अपेक्षित उत्पादन की मात्रा को बढ़ाकर कर्मचारियों को चुनौती देना ।

4-4-2-2-हर्जबर्ग के सात सुझाव (Seven suggestions of Herzberg's)

- कुछ नियंत्रणों को समाप्त करना लेकिन जवाबदेही को बनाए रखना।
- व्यक्तियों को उनके अपने कार्य के प्रति जवाबदेही को बढ़ाना अर्थात् व्यक्ति को ही उसके कार्य के लिए उत्तरदायी बनाना ।
- व्यक्ति को कार्य की पूर्ण स्वाभाविक इकाई सौंपना ।
- कर्मचारियों को उनके कार्यकलापों व गतिविधियों के लिए अतिरिक्त प्राधिकार प्रदान करना।
- कर्मचारियों को अपनी आवधिक रिपोर्ट पर्यवेक्षक के बदले व्यक्ति को स्वयं प्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराना ।
- नए और अधिक कठिन कार्य आरंभ करना, जिन्हें पहले नहीं किया जा सका था।
- व्यक्ति. विशिष्ट या विशिष्ट (विशेषज्ञतापूर्ण) कार्य सौंपना, ताकि वे विशेषज्ञ बन सकें।

कार्य संतुष्टि को बेहतर बनाने से कर्मचारियों में उपलब्धि और कार्य में आनंद की उच्चतर भावना आती है। जब कर्मचारी अपने अपने कार्यों से खुश होते हैं, तो उनकी सामान्य मनोवृत्ति भी बेहतर हो जाती है और इस तरह उत्पादकता में भी सुधार होता है। इस तरह, इस संकल्पना का लाभ यह है कि एक बार पता लग जाने के बाद प्रत्येक मूलभूत आवश्यकताओं पर काम कर सकते हैं, और फिर कर्मचारियों की ज्यादा जटिल ज़रूरतों पर

ध्यान दे सकते हैं। हर्जबर्ग ने सुझाया कार्य का संवर्धन व्यक्ति की जरूरतों को संतुष्ट करना है। कार्य का संतर्धन' से उनका तात्पर्य है कार्य रतना चनौतीपूर्ण ही होना चाहिए

धन से उनका तात्प काय इतना तापूर्ण ही होना चाहिए जो कर्मचारियों की योग्तयाओं का सदुपयोग कर सके। बढ़ी हुई योग्तया के लिए समुचित रूप से उच्चतर दायित्व के साथ पुरस्कृत किया जाना चाहिए। कार्य-संवर्धन के माध्यम से, प्रबंधन कर्मचारी के आंतरिक अभिप्रेरण को अधिकतम कर सकते हैं। यदि कार्य में कर्मचारी की विशिष्ट योग्यता को स्थान नहीं मिल पाता तो इससे कर्मचारियों को उनकी योग्यताओं के अनुरूप काम करने का सामर्थ्य होना चाहिए।

4-4-3-**आलोचनात्मक मूल्यांकन (critical evaluation)**

द्विकारक सिद्धांत के व्यापक अनुप्रयोग और प्रसिद्धि के बावजूद हेर्जबर्ग के प्रस्तावों के बारे में आलोचना हुई। शेपर्ड और हेरिक द्वारा किए गए कुछ अध्ययन हेर्जबर्ग के निष्कर्षो का समर्थन करते हैं।

अभिप्रेरण- स्वच्छता अवधारणा की मुख्य आलोचना यह है कि प्रारंभ में उसने कार्य और कम्पनी रोज़गार कारकों की व्याख्या पूर्णतः सत्वों के विशिष्ट और पृथक सेटों के रूप में की। आज यह स्वीकार किया जाता है कि ये कारक कभी-कभी स्वरूप में अभिप्रेरक और स्वच्छता दोनों हो सकते हैं।.हेर्जबर्ग का अभिप्रेरण के लिए स्वच्छता दृष्टिकोण ने अभिप्रेरण-स्वच्छता सिद्धांत की परिशुद्धता के बारे में प्रश्न उठाए गए हैं। हिण्टन हेर्जबर्ग की क्रियाविधि पर संदेह प्रकट करता है। वह आरोप लगाता है। कि ये कारक कभी-कभी स्वरूप में अभिप्रेरक और स्वच्छता दोनों हो सकते हैं।

हेर्जबर्ग का अभिप्रेरण के लिए स्वच्छता दृष्टिकोण ने अभिप्रेरण-स्वच्छता सिद्धांत की परिशुद्धता के बारे में प्रश्न उठाए गए हैं।

हिण्टन हेर्जबर्ग की क्रियाविधि पर संदेह प्रकट करता है। वह आरोप लगाता है। कि उसकी प्रश्नावली विधियाँ उसके परिणामों पर पूर्वग्रह उत्पन्न कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, घटिया कार्य निष्पादन के लिए दूसरों पर दोषारोपण की लोगों की प्रवृत्ति को हेर्जबर्ग के जाँच परिणामों पर पूर्वग्रह प्रभावग्रस्त सोचा गया है। कुछ आलोचक मानते हैं कि हेर्जबर्ग द्वारा यथा स्वीकृत स्वच्छता कारकों में संतुष्टि और असंतुष्टि की भावना देने की संभावना थी।

मेयर्स जिसने टेक्सास इंस्ट्रूमेंट्स में अपने अनुसंधान में हेर्जबर्ग के सिद्धांत का अनुप्रयोग किया, उल्लेख करता है कि उसके निष्कर्ष आंशिक रूप में ही हेर्जबर्ग के सिद्धांत का समर्थन करते हैं। उसे पता लगता है कि वे व्यक्ति जो प्रगति और उत्तरदायित्व के अवसरों का प्रयास करते हैं, जिन्हें वह 'प्रगति जिज्ञासु' के रूप में विभेद करता है, वास्तव में हेर्जबर्ग के दृष्टिकोण में उपयुक्त बैठते हैं, उसमें वे संतुष्टकों से संबंधित थे और परिवेश कारकों से अपेक्षाकृत कम संबंधित थे। इसके विपरीत, अन्य लोग, जिन्हें वह "अनुसरण जिज्ञासु' कहता है, अधिकतर पर्यावरण कारकों से संबंधित हैं। दूसरे शब्दों में, मेयर्स उल्लेख करता है कि लोगों को अधिकतर अभिप्रेरित करता है, वह अधिकांशतः व्यक्तित्व का मामला होता है।

इसके अलावा, जो कारक साधारणतया पर्यावरण संबंधी हैं, अभिप्रेरणात्मक कारक या प्रतिलोमतः हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि प्रगति और उपलब्धि के अवसर प्रगति जिज्ञासु' को नहीं दिए जाते हैं, वे "अनुरूपण जिज्ञासु' हो सकते हैं। अब यह व्यापक रूप से माना जाता है कि ये कारक कभी कभी स्वरूप में अभिप्रेरक और स्वच्छता संबंधी दोनों हो सकते हैं। हेर्जबर्ग धन और सीमांत लाभों को "नकारात्मक अभिप्रेरक कहता है. चूँकि लोग उदास महसूस करते हैं यदि उनके पास धन नहीं होता है परंतु धन उन्हें अनिवार्यतः उन्हें अधिक खुशी या अधिक उत्पादनकारी नहीं बना सकता है।"

हेर्जबर्ग के सिद्धांत के विरुद्ध एक आलोचना अपनाई गई क्रियाविधि के बारे में है। स्वाब और अन्यों ने भी हेर्जबर्ग की क्रियाविधि के समान क्रियाविधि अपनाई है, परंतु उन्हें भिन्न प्रकार के परिणाम प्राप्त किए हैं जैसा द्वि-कारक सिद्धांत पूर्वानुमान कर सकता है।

इस आलोचना के होते हुए मानवीय अभिप्रेरण सिद्धांत के संबंध में हेर्जबर्ग का योगदान महत्वपूर्ण है। उसके द्वारा विकसित कार्य संवर्धन की अवधारणा निस्संदेह योगदान के रूप में सुपरिचित है। वह अभिप्रेरण में कार्य संतुष्टि के महत्व पर ध्यान केन्द्रित करता है, जो अब तक अज्ञात था। आधुनिक प्रबंधकों ने हेर्जबर्ग के द्वि-कारक सिद्धांत के प्रभाव से अपने अधीनस्थों को अभिप्रेरित करने के लिए उनके कार्य संतुष्टि के उन्नयन का महत्व स्वीकार किया है।

4-4-4-हर्जबर्ग और मैस्लो सिद्धांत की तुलना (Comparison of Herzberg's and Maslow's theory)

मैस्लो और हेर्जबर्ग दोनों के माडल उसी संबंध पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, अर्थात् व्यक्ति को क्या अभिप्रेरित करता है। मैस्लो ने आवश्यकताओं के अनुक्रम सिद्धांत का सुझाव दिया और लोग 'प्रत्येक उच्चतर स्तर की आवश्यकता के अनुक्रम में कैसे पूरी करते हैं। इस प्रकार कोई भी अतृप्त आवश्यकता व्यक्ति के लिए अभिप्रेरक कारक होता है। आर्थिक दृष्टि से विकसित देशों में कामगारों की निम्नतर स्तर की आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं और केवल उच्च स्तर की आवश्यकताएँ अभिप्रेरक कारक रह जाते हैं। यही बात है जिसे हेर्जबर्ग ने सुझाया है। मैस्लो की शारीरिक, सुरक्षा और सामाजिक आवश्यकताएँ हेर्जबर्ग के अनुरक्षण कारकों के अधीन आते हैं जबकि आत्म प्रत्यक्षीकण अभिप्रेरक कारकों के अधीन आता है। प्रतिष्ठा आवश्यकता के कुछ भाग है, कुछ भाग अनुरक्षण कारकों के अधीन आते हैं, जैसे प्रस्थिति और अन्य प्रगति और मान्यता अभिप्रेरणात्मक कारकों के अधीन आते हैं।

दो मॉडलों के बीच विशेष अंतर है। मैस्लो बल देता है कि कोई भी अतृप्त आवश्यकता, चाहे निम्न क्रम की हो या उच्च क्रम की, व्यक्तियों को अभिप्रेरक करेगा। इसलिए, इसका सर्वव्यापक अनुप्रयोज्यता है। इसे निम्न स्तर के कामगारों के लिए तथा उच्च स्तर के प्रबंधकों के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है। अल्प विकसित देशों में निम्न स्तर की आवश्यकताएँ भी पर्याप्त रूप में पूरी नहीं होती हैं। इसलिए आवश्यकताएँ अभिप्रेरक बनी रहती हैं। फिर भी, हेर्जबर्ग के अनुसार ये स्वच्छता कारक हैं और कामगारों को अभिप्रेरित करने में सहायता नहीं करते हैं।

4-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

i. फ्रेडरिक हर्जबर्ग ने कितने अभियन्ताओं एवं लेखापलकों के साक्षात्कार से प्राप्त अपने सिद्धांत का प्रतिपादन किया।

ii. हेर्जबर्ग धन और सीमांत लाभों को किस प्रकार अभिप्रेरक मनाता है।

iii. अभिप्रेरण-स्वच्छता सिद्धांत, द्विघटक सिद्धांत के प्रतिपादक कौन हैं।

iv. आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत के प्रतिपादक कौन हैं।

v. “ए थ्योरी ऑफ ह्यूमन मोटिवेशन” लेख के लेखक कौन हैं।

vi. मास्लो का आवश्यकता क्रम सिद्धांत में सबसे प्रथम व सबसे अंतिम आवश्यकता कोनसी है।

4-6-सारांश (Summary)

मैस्लो सिद्धांत **Maslow Theory** में मैस्लो ने अपने विचारों का प्रतिपादन किया है जिसे Maslow need theory के नाम से भी जाना जाता है उन्होंने 1943 में एक पत्रिका A theory of human motivation के माध्यम से और इस पत्रिका के तत्पश्चात अपनी प्रसिद्ध पुस्तक motivation and personality में मनुष्य की क्रमबद्ध आवश्यकताओं के संबंध में लिखा। इसे मनोविज्ञान में अभिप्रेरणा का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत के रूप में जाना जाता है

तथा मैस्लो के इस सिद्धान्त को आवश्यकता पदानुक्रम सिद्धांत (Need Hierarchy Model) के नाम से भी जाना जाता हैं। सभी आवश्यकताओं को क्रमबद्ध इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि इनकी पूर्ति क्रमबद्ध तरीके से ही हो सकती है अर्थात जब तक पहली आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो जाती तब तक व्यक्ति दूसरी आवश्यकता तक नही पहुँच सकता अर्थात उसे तब तक दूसरी आवश्यकता के सम्बंध में ज्ञान नही होता कि उसको उसकी भी आवश्यकता हैं। जिनकी प्राप्ति हेतु मनुष्य निरंतर प्रयत्न करते रहता हैं

- शारीरिक आवश्यकता (Physical need) शारीरिक आवश्यकताओं में भोजन, पानी, वस्त्र,मन की एकाग्रता, यौन संबंधी आवश्यकताएं एवं शरीर के आराम हेतु निद्रा आदि। यह सभी आवश्यकताएं मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताएं होती है जिसकी पूर्ति हेतु वह सर्वप्रथम प्रयत्न करता हैं।

- सुरक्षा की आवश्यकता (Safety) -प्रथम चरण की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है तो तब उसको अपने अस्तित्व की चिंता होने लगती है वह अपने अस्तित्व की महत्ता को जानने लगता है जिस कारण वह अपने जीवन-मृत्यु के संबंध में सोचने लगता हैं। अपने जीवन को स्थिरता प्रदान करने के लिए उसे इस दूसरे चरण की आवश्यकता महसूस होती हैं।

- प्यार और संबंधों की आवश्यता (Love and Belonging) व्यक्ति इन समस्त आवश्यकताओं की प्राप्ति अकेले रहकर नही कर सकता। जिस कारण वह अपने परिवार का निर्माण करता है एवं समाज के साथ विभिन्न प्रकार के संबंधों की स्थापना करता है

- आत्मसम्मान की आवश्यकता (Self-respect) - प्यार और संबंधों की आवश्यकता की पूर्ति हो जाने के पश्चात उसे समाज मे गौरवपूर्ण तरीके से जीवनयापन करने हेतु आत्मसम्मान की आवश्यकता महसूस होती है जिस कारण वह एक गौरवपूर्ण पद प्राप्त करने

और दूसरे से अपनी एक अलग पहचान बनाने अर्थात खुद को विशिष्ट दिखाने की आवश्यकता की पूर्ति करने का प्रयास करता हैं।

● आत्मबोध (Self-actualization) -मनुष्य को आत्मबोध तब होता है जब वह अपने चारों चरणों की पूर्ति कर लेता हैं। इसमे व्यक्ति अपनी आंतरिक शक्तियों को जान लेता है एवं उसे आंतरिक संतुष्टि की प्राप्ति हो जाती है। आत्मबोध अर्थात आत्मा को जानना, सांसारिक कटुता एवं सत्यता को पहचान लेना ही आत्मबोध (Self-actualization) हैं।इन समस्त आवश्यकताओं की प्राप्ति पदानुक्रम अर्थात क्रमबद्ध तरीके से ही होती है इसमें व्यक्ति नीचे से ऊपर की ओर बढ़ता है अर्थात प्रथम चरण की प्राप्ति होने के पश्चात ही वह दूसरे चरण की आवश्यकता महसूस कर पाता हैं।जब तक व्यक्ति प्रथम चरण को प्राप्त नही कर लेता तब तक वह दूसरे चरण की प्राप्ति के लिए अग्रसर नही होता अर्थात प्रथम चरण की प्राप्ति के बाद ही उसमे अभिप्रेरणा जागती है और वह अभिप्रेरित (Motivate) होता है कि वह दूसरे चरण की प्राप्ति हेतु विभिन्न प्रयास करें इसलिए भी इसे अभिप्रेरणा का सिद्धांत कहा जाता हैहर्जबर्ग ने अपने अनुसन्धान से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर लिखा है कि कार्य संतोष में वृद्धि का 81 प्रतिशत उत्प्रेरणात्मक घटकों से और 19 प्रतिशत आरोग्य घटकों से प्राप्त होता है। इसी प्रकार कार्य असन्तोष को कम करने में 69 प्रतिशत तत्व तथा 31 प्रतिशत तत्व योगदान करते हैं।

4-7-सूचक शब्द (Key Words)

i. **अभिप्रेरणा -अभिप्रेरणा** लक्ष्य-आधारित व्यवहार का उत्प्रेरण या उर्जाकरण है। अभिप्रेरणा या प्रेरणा आंतरिक या बाह्य हो सकती है। इस शब्द का इस्तेमाल आमतौर पर इंसानों के लिए किया जाता है, लेकिन सैद्धांतिक रूप से, पशुओं के बर्ताव के कारणों की व्याख्या के लिए भी इसका इस्तेमाल किया जा सकता है

ii. **मनोविश्लेषण**-मनोविश्लेषण मुख्यत: मानव के मानसिक क्रियाओं एवं व्यवहारों के अध्ययन से सम्बन्धित है किन्तु इसे समाजों के ऊपर भी लागू किया जा सकता है।

iii. **दैहिक आवश्यकताएँ**-सभी मनुष्यों की अपनी शारीरिक ज़रूरतें होती हैं जैसे भूख, प्यास, नींद, भावनाएँ आदि और इन ज़रूरतों को पूरा करना यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि शरीर सुचारू रूप से कार्य करे।

iv. **उत्प्रेरक-**किसी घटना या क्रिया को बढ़ावा देने वाला, प्रोत्साहित करने वाला, प्रेरणा देने वाला

4-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

I. फ्रेडरिक हर्जबर्ग के दो कारक अभिप्रेरणा सिद्धांत को स्पष्ट कीजिए ।

II. कार्य-संवर्धन संकल्पना का वर्णन कीजिए ।

III. मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम का सिद्धांत को स्पष्ट कीजिए ।

IV. मैस्लो का आवश्यकता पदानुक्रम व फ्रेडरिक हर्जबर्ग के दो कारक अभिप्रेरणा सिद्धांत में अंतर स्पष्ट कीजिए

4-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

i. 200 अभियन्ताओं एवं लेखापलकों के साक्षात्कार से

ii. नकारात्मक अभिप्रेरक

iii. हेर्जबर्ग

iv. अब्राहम मैस्लो

v. अब्राहम मैस्लो

vi. शारीरिक एवं दैहिक आवश्यकता,आत्मासिद्धि की आवश्यकता

4-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

(iii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा,डॉ हरी चंद्र शर्मा ,त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iv) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(v) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन ,साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(vi) विष्णु भगवान, विद्याभूषण लोक के प्रशाशन सिद्धांत एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 5	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
पारिस्थितिक दृष्टिकोण (फ्रेड रिग्स), नवाचार और उद्यमिता (पीटर ड्रूकर) Ecological Approach (Fred Riggs), Innovation and Entrepreneurship (Peter Drucker)	

अध्याय की संरचना:

5-1-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

5-2-परिचय (Introduction)

5-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

5-3-1-फ्रेड डब्ल्यू॰ रिग्स के विचार (Views of FW. Riggs)

5-3-3-3-बहुकार्यात्मक प्रारूप (Fused Model)

5-3-3-2-अल्पकार्यात्मक प्रारूप (Diffracted Model)

5-3-3-3-समपाश्र्वीय प्रारूप (Prismatic Model)

5-3-3-3-3-समपाश्र्वीय समाज: विशेषताएँ (Features of Prismatic Society) 3-3-2-

5-3-2 साल प्रारूप (Sala Model)

5-3-3-बाजार कैंटीन प्रारूप (Bazaar Canteen Model)

5-3-4- समपाश्र्वीय समाज का सिद्धांत पुननिर्माण का संशोधन (Theory of Prismatic Society Revisited)

5-3-3-बाजार कैंटीन प्रारूप (Bazaar Canteen Model)

5-3-4- समपार्श्वीय समाज का सिद्धांत पुनर्निर्माण का संशोधन (Theory of Prismatic Society Revisited)

5-3-5-आलोचना (Criticism)

5-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

5-4-3-नवाचार एवं उद्यमी (Meaning of Innovation and Entrepreneur)

5-4-2-नवाचार की विशेषताएँ (Characteristics of Innovation)

5-4-3-नवाचार एवं आविष्कार (Innovation and Invention)

5-4-5-नवाचार के प्रकार (Types of Innovation)

5-4-5- सृजनात्मकता,सृजनात्मकता के घटक व नवाचार ,सृजन प्रक्रिया की प्रमुख अवस्थाएँ (Creativity, components of creativity and innovation, major stages of the creative process)

5-4-6-नवाचार की अवस्थायें (Stages of Innovation)

5-4-7-उद्यमिता का अर्थ ,परिभाषा,अवधारणाएँ,विषेषताएँ व आवश्यकता (Meaning, definition, concepts, characteristics and need of entrepreneurship)

5-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

5-6-सारांश (Summary)

5-7-सूचक शब्द (Key Words)

5-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

5-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

5-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

5-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

i. विद्यार्थियों को परिस्थितिकी उपायों से अवगत करना।

ii. विद्यार्थियों को(एफ.डब्ल्यू. रिग्स) के विचारो से अवगत करना।

iii. लोक प्रशासन पर बाह्य वातावरण पर प्रभाव से अवगत कराना.

iv. विद्यार्थियों को **नवाचार एवं उद्यमी** ,**उद्यमिता** की अवधारणा से अवगत करवाना।

5-2-परिचय (Introduction)

वह दृष्टिकोण जो प्रशासन तथा वातावरण में सम्बन्ध अथवा अंतःक्रिया पर प्रकाश डालता है को पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण (Ecological Approach) कहते हैं। इस दृष्टिकोण के मुख्य प्रतिपादक जॉन एम. गॉस (John M. Gaus) रावर्ट ए. डाहल (Robert A. Dahl), रॉस्को मार्टिन (Rasco Martin), एफ. डब्लयू रिगज (F.W. Riggs) आदि हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार सभी संस्थानों (Institutions) पर समाज के वातावरण तथा संस्कति का प्रभाव पड़ता है। क्योंकि लोक प्रशासन भी एक उप-व्यवस्था (Sub-system) है इसकी सामाजिक व्यवस्था के साथ अन्तः क्रिया होती रहती है। सामाजिक व्यवस्था लोक प्रशासन को प्रभावित करती है तथा प्रशासन इसे प्रभावित करता है। प्रशासन का आकार एवं स्वरूप इसके चहुँ ओर विद्यमान वातावरण पर निर्भर है तथा सामाजिक व्यवस्था प्रशासन पर निर्भर है। एफ. डब्लयू रिगज (F.W. Riggs) के अनुसार, “किसी भी प्रशासनिक प्रतिरूप या नमूने (Pattern) का महत्त्व उसकी स्थिति के अन्तर्गत होता है।" यह अब सामान्य रूप में स्वीकार किया जाने लगा है कि किसी समाज में राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक सांस्कतिक घटनाओं की प्रशासनिक व्यवस्था के साथ उसी प्रकार परस्पर क्रिया है जैसे सभी सामाजिक व्यवस्थाएं अपने वातावरण के साथ अंतःक्रिया करती है तथा उनको प्रभावित करती है तथा उनसे स्वयं प्रभावित होती है। पारिस्थितिक अथवा पर्यावरण (Ecology) शब्द जीवन विज्ञान से लिया है जिसका अभिप्राय सभी जीवत जीव (Organisms) तथा उनके वातावरण में अन्तःसम्बन्ध से

है। शास्त्रीय दृष्टिकोण से पारिस्थितिक का अर्थ है संगठन तथा उसके वातावरण में पारस्परिक सम्बन्ध। इसी दृष्टिकोण से समाज शासित्रयों ने इसका प्रयोग संगठन तथा उसके वातावरण के बीच पारस्परिक सम्बन्ध के लिए किया है। उनके अनुसार प्रशासकीय व्यवस्था सभी पारिस्थितिक में एक स्वतन्त्र प्रक्रिया के रूप में कार्य नहीं कर सकती बलि्क यह अपने गिर्द होने वाली परिस्थितियों के प्रभावाधीन कार्य करती है तथा उन्हें प्रभावित करती है। क्योंकि प्रशासन विद्‌यमान पारिस्थितिक के अन्तर्गत कार्य करता है बस लिए इसके अन्तर्गत उन पारिस्थितिक का अध्ययन करना अवश्य है।

5-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

5-3-1-फ्रेड डब्ल्यू॰ रिग्स के विचार (Views of FW. Riggs)

जे.एम. गॉस, राबर्ट ए. डाल तथा रॉबर्ट एस. मर्टन ने फ्रैड डब्ल्यू. रिग्स से बहुत पहले लोक प्रशासन के अध्ययन के परिस्थितिकीय दृष्टिकोण की शुरूआत की थी। परन्तु रिग्स ने ही इस दृष्टिकोण के प्रति महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अमरीकी विद्‌वानों तथा विकासशील देशों के सलाहकारों ने उसके थाईलैंड, फिलीपींस तथा भारत में किये अध्ययनों के आधार पर परिस्थितिकीय अवधारणा का विकास किया। विकासशील देशों के प्रशासनिक तथा आर्थिक, सामाजिक, तकनीकी, राजनीतिक तथा संचार कारकों के बीच संबंध का विश्लेषण किया। थाईलैंड तथा फिलीपींस में अपने अध्ययनों के आधार पर उन्होंने उदाहरण देकर यह बतलाया कि किस प्रकार पर्यावरण प्रशासनिक व्यवस्थाओं को प्रभावित करता है।

रिग्स ने विकासशील देशों में पश्चिमी संगठन सिद्धांतों की उपयुक्तता के विषय में मौलिक या आधारभूत प्रश्न उठाए। उन्होंने कहा कि प्रत्येक समाज की अपनी कुछ विलक्षण विशेषताएँ होती हैं जो उसकी उपव्यवस्थाओं को प्रभावित करती है। उसने पाया कि पश्चिमी सिद्धांतों में से अधिकतर ने व्यवस्था के "भीतर" झाँका। इसकी तुलना में "बाहर" का संबंध सामान्यतः सामाजिक-आर्थिक वातावरण या परिवेश से है। पश्चिमी विकसित देशों का सामाजिक-आर्थिक परिवेश तृतीय विश्व के देशों जैसा नहीं है। इसीलिए, रिग्स के अनुसार,

शायद विकसित देशों के लिए निर्मित सिद्धांत या प्रादर्श अविकसित देशों में लागू नहीं होते। इसलिए रिग्स के निष्कर्ष, तृतीय विश्व के देशों में प्रशासनिक व्यवस्थाओं को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। अपने निष्कर्षो के आधार पर तृतीया विश्व के देशों में प्रशासनिक व्यवस्थाओं के विश्लेषणात्मक ढाँचे को विस्तृत किया गया है।

परिवेशीय या परिस्थितिकीय दृष्टिकोण वस्तु स्थिति या घटना विशेष को समझने के लिए व्यवस्था-उपागम का प्रयोग करता है। व्यवस्था उपागम का अर्थ घटना विशेष (Phenomena) को अंतनिर्भर भागों से बने एक ही भाग (Aspect) पर केन्द्रित होने के बावजूद भी परिस्थितिकीय उपागम संगठन के समग्र दृष्टिकोण को अपनाता है। यही कारण है कि रिग्स ने वृहद स्तर पर मुख्य (Broad) व्यवस्थाओं को श्रेणीबद्ध किया तथा उन श्रेणियों को प्रशासन जैसी सूक्ष्म या छोटी-उप व्यवस्थाओं को लिया तथा विकासशील समाजों में परिवर्तन की व्याख्या करने के लिए तीन आदर्श रूपों-बहुकार्यात्मक, समपार्श्वीय तथा अल्पकार्यात्मक को विकसित किया। रिग्स द्वारा आदर्श प्रारूप इतिहास-पूर्व, विकासशील तथा विकास समाज का विश्लेषण करने के उद्देश्य से स्थापित काल्पनिक मान्यताएँ (Hypothetical) हैं।

एक प्रिज्म से किरन के संक्रमण की प्रक्रिया को एक समाज परिवर्तन की प्रक्रिया की व्याख्या के लिए संकेत रूप में लिया गया है। किरण के आरंभ बिन्दु को बहुकार्यात्मक, (फ्यूज्ड) प्रिज्म के अंदर किरण के स्पंदन (Vibration) प्रक्रिया को संक्रमण कालीन, इन्द्रधनुष बनाने के लिए प्रिज्म से किरण के बाहर आने की प्रक्रिया का अल्पकार्य (डिफ्रैक्शन) कहा गया है। इसी प्रकार, जैसे रिग्स ने व्याख्या की है, विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाएँ विकास प्रक्रिया की आरंभिक अवस्थाओं में बहुकार्यात्मक, (फ्यूज्ड) संक्रमणकालीन अवस्था में समपार्श्वीय तथा अंत में अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) होगी।

रिग्स ने संरचनात्मक तथा कार्यात्मक उपागमों के आधार पर प्रारूप तैयार किए। उसके अनुसार एक बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) समाज में एक अकेला संगठन या संरचना बहुत से कार्य करती है। इसके विरुद्ध, एक अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) समाज में निश्चित कार्य करने के लिए अलग-अलग संरचनाएँ बनाई जाती है। परन्तु इन दोनों के बीच में अनेक ऐसे समाज हैं जिनमें बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) तथा अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) समाज दोनों की विशेषताएँ लगभग समान पाई जाती है। ऐसे समाजों को समपार्श्वीय कहा जाता है। रिग्स इस बात पर बल देता है कि कोई भी समाज पूर्ण रूप से बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) या अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) नहीं कहा जा सकता। सामान्यतः सभी समाज प्रक ति में संक्रमणकालीन होते हैं। प्रत्येक समाज चाहे वह बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) है या अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) उसका चरित्र विभिन्न संरचनाओं एवं उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है।

5-1-3-1-बहुकार्यात्मक प्रारूप (Fused Model)

बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) समाज की अवधारणा को स्पष्ट करने हेतु उदाहरणों के रूप में रिग्स ने साम्राज्यवादी चीन तथा क्रांति-पूर्व सयामी थाईलैंड को चुना। इन समाजों में कार्यों का कोई वर्गीकरण नहीं था तथा एक संरचना अनेक प्रकार के कार्य करती थी। ये समाज कृषि पर बहुत अधिक निर्भर थे तथा उनका औद्योगीकरण या आधुनिकीकरण नहीं हुआ था। उनकी आर्थिक व्यवस्था उस वस्तु विनिमय के कानून तथा परिवर्तन व्यवस्था पर आधारित थी जिसे रिग्स ने “पुनर्वितरण प्रारूप" (redistributive model) कहा। देश के प्रशासन में शाही परिवार ने एक बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। राजा तथा उसके द्वारा नामित अधिकारी सभी प्रकार के प्रशासनिक, आर्थिक तथा अन्य कार्य स्वयं ही करते थे। आर्थिक तथा प्रशासनिक कार्य करने की कोई अलग व्यवस्था नहीं थी। सरकार तथा जनता के बीच संबंध सामान्यतः निचले स्तर पर थे। जनता किसी भी चीज की आशा किए बिना राजा को अपनी सेवाएँ तथा भौतिक वस्तुएँ देकर उसके प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित करती थी।

सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी नहीं थी यद्यपि जनता सरकार के आदेशों को मानने के लिए बाध्य थी। राज्य में परिवार की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। यह आर्थिक राजनीतिक तथा सामाजिक अनेक कार्य करता था। सामाजिक संरचना को आधार प्रदान करने के अतिरिक्त, यह प्रशासन के प्रमुख स्थान पर था। परिणामस्वरूप, इन संघों के प्रशासन ने व्यापक प्रसन्नता तथा विकास पर ध्यान देने की अपेक्षा परिवार तथा कुछ अन्य संप्रदायों क विशेष हितों की सुरक्षा करने का प्रयास किया। वास्तव में प्रशासन व्यवस्था परिवार तथा अन्य संप्रदायों की संरचना पर आधारित थी तथा यह व्यवस्था को सुरक्षित बनाये रखने बनाये रखने में सहायक रही। सामान्यतः इस समाज की प्रवृत्ति स्थिर रहने की थी और जिनकी कोई विकसित संचार व्यवस्था भी नहीं थी। जनता की शायद ही कोई माँग रही होगी तथा शायद ही सरकार के समाने कभी कोई मामला उठाया गया होगा। राजा तथा उसके द्वारा नामित लोगों के पास असीमित सत्ता थी। जिसका प्रयोग वे सामान्यतः अपने निजी हितों की रक्षा के लिए करते थे। ये समाज औपचारिक व अनौपचारिक ढाँचों, सरकारी और गैर-सरकारी कार्यों में भेद नहीं करते थे।

समाज में आरोपित मान्यताएँ एक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती थी तथा जनता का व्यवहार अत्यधिक परम्परावादी था। सदियों पुरानी परम्पराएँ, मान्यताएँ, विश्वास तथा रहन-सहन के परम्परावादी ढंग लोगों को एक साथ रहने तथा अपने व्यवहार को नियंत्रित करने में समर्थ बनाते थे।

5-1-3-2-अल्पकार्यात्मक प्रारूप (Diffracted Model)

ये प्रारूप सार्वभौमिक सिद्धांतों पर आधारित है तथा इनके व्यवहार में भेद नहीं होता है। बहुत अधिक विशेषीकरण होता है तथा प्रत्येक संरचना एक विशेष कार्य करती है। आरोपित मान्यताएँ समाप्त हो जाती हैं तथा उपलब्धि मान्यताओं का आगमन होता है। समाज अत्यधिक रूप से गतिशील तथा अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) होता है। इन समाजों में खुली

वर्ग-संरचनाएँ होती. है जिनका प्रतिनिधित्व विभिन्न संघ करते हैं तो समाज में तार्किक परिणामों को प्राप्त करने की प्रमुख भूमिका अदा करते हैं। समाज के सभी संगठनों तथा संरचनाओं की निर्मित की जाती है तथा ये वैज्ञानिक तर्क पर आधारित होते हैं। आर्थिक व्यवस्था बाजार व्यवस्था पर आधारित होती है। बाजार का प्रभाव समाज के अन्य पहलुओं को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूप से प्रभावित करता है। विभिन्न संघ अलग-अलग कार्य करते हैं। संचार व्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी बहुत अधिक विकसित होती है तथा सरकार सोहार्दपूर्ण जन-संपर्क व्यवस्था को उच्च प्राथमिकता देती है। सरकारें लोगों की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होती हैं तथा मानव-अधिकारों की रक्षा करती है। लोगों द्वारा कार्यों को पूर्ण करने हेतु तथा काफी सीमा तक सरकार के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए दबाव डाला जायेगा। सरकारी अधिकारियों के पास कोई दबावकारी तथा असीमित शक्तियाँ नहीं होतीं। जनता स्वयं राष्ट्र के कानूनों पर ध्यान देती है तथा उनका सम्मान करती है। इससे सरकार को बिना किसी कठिनाई के अपने दायित्वों का निर्वाह करने तथा कानूनों को क्रियान्वित करने में आसानी होती है। सामाजिक जीवन के सभी आधारभूत पहलुओं पर जनता में व्यापक सामंजस्य होता है।

5-1-3-4-समपार्श्वीय प्रारूप (Prismatic Model)

रिग्स ने अपने प्रारूपों के केन्द्रीय बिन्दु-समाश्वय प्रारूप पर ध्यान केन्द्रित किया। रिग्स के अनुसार समपार्श्वीय समाज वह है जिसने विशिष्टीकरण का स्तर, आधुनिक प्रौद्योगिकी के लेन-देन में आवश्यक भूमिकाओं का विशेषीकरण प्राप्त कर लिया हो परन्तु इन भूमिकाओं को जोड़ने में असफल रहा हो। समपार्श्वीय समाज बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) तथा अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) दोनों समाज के मूल्य प्रतिरूपों का हिस्सा है।

5-1-3-5-समपार्श्वीय समाज: विशेषताएँ (Features of Prismatic Society)

दो चरण रूपों-बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक के बीच का समाज समपार्श्वीय समाज कहा जाता है। अपने विश्लेषण में रिग्स ने बहुकार्यात्मक तथा अल्पकार्यात्मक प्रारूपों का विकासशील देशों के समपार्श्वीय वस्तु स्थिति की व्याख्या करने के साधन रूप में प्रयोग किया है। रिग्स के अनुसार, समपार्श्वीय समाज की तीन चारित्रिक विशेषताएँ होती है वे हैं-

विजातीयता, औपचारिकता, तथा अतिआच्छादन

(i) **विजातीयता** का अर्थ है भिन्न प्रकार की व्यवस्थाएँ, व्यवहार, क्रियाएँ तथा दष्टिकोणों आदि की एक साथ उपस्थिति पूर्णतया विरोधी दृष्टिकोणों के समानांतर सह-अस्तित्व के कारण एक समपार्श्वीय समाज में होने वाला परिवर्तन असंगत, अपूर्ण तथा गैर-अनुक्रियाशील होगा। विजातीयता प्रशासनिक व्यवस्था को भी प्रभावित करती है।

एक समपार्श्वीय समाज में प्रशासन के आधुनिक गजट, पश्चिमी रूप के कार्यालय, बुद्धिजीवी वर्ग, कृत्रिमता भरे शहरी क्षेत्र होते हैं। सुविकसित संचार व्यवस्था, गगन चुम्बी इमारतें, वातानुकूलन, विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा तकनीकि सेवाओं को सम्पन्न करने वाली एजेसियाँ भी इस समाज में होती है। दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में, लोग बहुत अधिक परंपरावादी जीवन व्यतीत करते हैं जिनके पास टेलीफोन, फ्रिज आदि जैसी आधुनिक जीवन की कोई सुविधाएँ नहीं होती। गांव के बुजुर्गो (एलडर्स) द्वारा विभिन्न राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक भूमिकाओं का निर्वाह किया जाता है। विजातीयता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विरोधी तस्वीर प्रस्तुत करती दिखाई देती है। उदाहरण के लिए शिक्षा के क्षेत्र में, समाज शिक्षा के पाश्चात्य रूप पर भी बल देता है तथा परंपरावादी गुरूकुलों को स्वीकार करता है। इसी प्रकार आधुनिक सुविधा सम्पन्न डाक्टरी प्रथा के अनुसार (एलोपैथी) इलाज देने वाले अस्पतालों के साथ आयुर्वेदिक, यूनानी, होमियोपैथिक तथा प्राक तिक चिकित्सा संबंधी केन्द्र भी अस्तित्व में हैं। इस प्रकार विरोधी व्यवस्थाओं का सह-अस्तित्व समाज को अलग-अलग दिशाओं की ओर खीचता है जिससे सामान्यीकरण

प्रक्रिया कठिन बन जाती है। समपाश्र्वय समाजों में राजनीतिक तथा प्रशासनिक कार्यालय काफी प्रभावी शक्तिशाली तथा प्रतिष्ठावान होते हैं जो धन कमाने में सहायता करते हैं। यद्‌यपि सभी के लिए समान अवसर होते हैं, फिर भी कुछ ही व्यक्ति विशेषाधिकार प्राप्त कर लेते हैं तथा उच्च स्थानों का कार्य या पद पाने की आशा करते हैं। वे लोग, जिन्हें कार्य प्राप्त करने में सफलता नहीं मिलती, समय को देखते हुए सरकार के विरूद्ध दबाव समूह बना लेते हैं तथा एक या दूसरे बहाने से आंदोलन प्रारंभ करते हैं। प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं द्‌वारा चुने जाने पर भी सरकार लोगों को नियंत्रित करने की स्थिति में नहीं होती। सत्ताधारी लोग अपने हितों की रक्षा करने तथा सत्ता से चिपके रहने के सभी प्रयास करने की ओर प्रवत्त या उन्मुख होते हैं। इस प्रकार, सदैव, तथ्यों की गलत समझ तथा गलत प्रस्तुतीकरण से समाज में तनाव तथा अस्थिरता पैदा हो जाती है ।

बहु-समुदायवादी समाज में जहाँ विभिन्न समुदाय अपने-अपने हितों को बढ़ावा देने के लिए समाज को अलग-अलग दिशाओं में खींचने का प्रयास करते हैं, समस्या काफी पेंचीदा या जटिल हो जाती है। यह एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के लगभग सभी विकासशील देशों में स्पष्ट है। इस प्रकार एकीकरण का अभाव एक समपार्श्वीय समाज की आधारभूत विशेषता होती है।

जीवन के लगभग सभी पहलुओं में ये सभी असमानताएँ, विभेद न केवल प्रशासनिक व्यवस्था के कार्य को प्रभावित करते हैं। और उसके व्यवहार को सीमित करते हैं अपितु प्रशासन के लिए अनेक समस्याएँ भी उत्पन्न करते हैं। यदि सत्ताधारी वर्ग धनी लोगों के हितों की रक्षा तथा गरीबों के हितों की उपेक्षा करने का प्रयास करेगा तो, रिग्स के अनुसार, इससे समाज में क्रांति के आरंभ की अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न होंगी।

(ii) औपचारिकता (Formalism)

औपचारिकता का अर्थ उस सीमा से है जहाँ तक परंपरा सिद्ध (perscriptive) तथा वर्णनात्मक (descriptive) में अंतर रहता है, जहाँ नियमनिष्ठ तथा प्रभाव शक्ति (effective power) में अंतर रहता है और संविधान, कानूनों एवं नियमों संगठन सारणियों एवं आंकड़ों, समाज तथा सरकार की वास्तविक क्रियाओं तथा तथ्यों के बीच विसंगति होती है। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ औपचारिक रूप से आदेशित तथा प्रभावी रूप से व्यवहारित मानदंडों तथा वास्तविकताओं के बीच का अंतर तथा निर्धारित उद्देश्यों एवं वास्तविक निष्पादन के बीच का अंतर है। औपचारिकता तथा वास्तविकता में जितना अधिक अंतर होगा एक व्यवस्था उतनी ही अधिक औपचारिक होगी। एक समपार्श्वीय समाज, जिसमें औपचारिकता अधिक होती है, की तुलना में बहुकार्यात्मक फ्यूज्ड तथा अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) समाजों में वास्तविकता अधिक होती है।

यद्यपि कानून, नियम एवं विनियम सरकारी अधिकारियों की कार्य प्रणाली को निर्धारित करते हैं, परन्तु वास्तविक रूप में उनके व्यवहार में अधिक अंतर होता है। अधिकारी कभी नियमों पर डटे रहते हैं और कभी उनकी उपेक्षा, यहाँ तक की उनका उल्लंघन भी करते हैं। इस औपचारिक व्यवहार का कारण कार्यक्रम उद्देश्यों के प्रति सरकार पर दबाव की कमी नौकरशाही के निष्पादन को प्रभावित करने की सामाजिक शक्ति की कमजोरी तथा स्वैच्छिक प्रशासन की उन्मुक्तता है। इस प्रकार सरकारी अधिकारियों तथा नौकरशाहों का व्यवहार ऐसा होता है जिसे पहले से नहीं बताया जा सकता तथा यह असंगत तथा परिस्थिति पर निर्भर करता है। इस प्रकार के व्यवहार के कारण कर्मचारियों में आसानी से धन इकट्ठा करने की स्वाभाविक प्रवत्तिया पर निर्भर करता है। इस प्रकार के व्यवहार के कारण कर्मचारियों में आसानी से धन इकट्ठा करने की स्वाभाविक प्रवत्ति या कुप्रशासन के अवसरों की उपस्थिति हो सकती है। इस प्रकार सामान्यतः प्रशासन में नियमबद्धता समाज में भ्रष्टाचार के लिए रास्ता बनाती है।

औपचारिकता सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं में होती है। सामान्यतः जीवन के सामाजिक तथा सांस्क तिक पहलुओं से संबंधित कानूनों का सम्मान तथा पालन नहीं होता। वे केवल सरकारी रिकार्ड के लिए ही होते हैं तथा सरकार भी उनके क्रियान्वयन के विषय में गंभीर नहीं होती। भारत में कुछ उदाहरण स्वरूप, कह सकते हैं कि नशाबंदी कानूनों का सम्मान उनका पालन करने की अपेक्षा उनको तोड़ने में अधिक है। शहरी योजना विनियम पालन करने की अपेक्षा तोड़े अधिक जाते हैं। इस प्रकार सामाजिक जीवन में बनावटीपन लगभग सभी विकासशील देशों में सामान्यतः देखा जा सकता है।

औपचारिकता के आयामों की व्याख्या करते हुए रिग्स ने संवैधानिक औपचारिकता का भी विचार किया। संवैधानिक औपचारिकता का अर्थ संवैधानिक उपबंधों तथा उनके वास्तविक क्रियान्वयन के बीच का अंतर है। यह भारत में देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए संवैधानिक व्यवहार के अनुसार, मुख्यमंत्रियों का चुनाव विधानसभा के बहुमत पक्ष द्वारा होता है। मंत्री परिषद् का चयन मुख्यमंत्री द्वारा होता है। परन्तु व्यवहार में, ज्यादातर मामलों में केन्द्रीय पार्टी नेत त्व उनके चयन में निर्णायक भूमिका निभाती है। संविधान कानूनी रूप से शासन चलाने का कार्य जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों में साँपता है परन्तु व्यवहार में वास्तविक सरकारी शक्ति तथा प्रभाव संसद के बाहर कुछ लोगों तथा समूहों के पास होती है।

संविधान कानून बनाने का दायित्व विधायकों को सौंपता है परन्तु वास्तव में वे कानून निर्माण में बहुत कम समय लगते हैं। ये अपने विधायी दायित्व का निर्वाह करने की अपेक्षा सत्ता की राजनीति में अधिक व्यस्त होते हैं। इससे नौकरशाही को समपार्श्वीय समाज में कानून । निर्माण की मुख्य भूमिका का निर्वाह करने में सहायता मिलती है। यहाँ तक कि अधिकारी समूह बना सकते। हैं या सत्ताधारी दल के अंतर्गत फूट डालने वाले राजनीतिक

नेताओं के साथ स्वयं को जोड़ सकते हैं। इस प्रकार समपाश्र्वीय समाज में सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं में औपचारिकता रहती है।

(iii)अतिच्छादन (Overlapping)

अतिच्छादन (ओवरलैपिंग) का अर्थ उस सीमा से है जिस तक एक अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) समाज के औपचारिक रूप से विभेदीक त संगठन या संरचनाएँ बहुकार्यात्मक समाज में अविभेदीक त संगठनों के सह-अस्तित्व में होते हैं। प्रशासनिक व्यवस्थाओं में प्रशासनिक व्यवहार अप्रशासनिक आधार से अर्थात् राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक या अन्य बातों से प्रभावित होने की ओर उन्मुख होता है। एक बहुकार्यात्मक समाज में परम्परावादी संरचनाएँ लगभग सभी प्रकार के कार्य सम्पन्न करती है इसलिए उनमें अतिच्छादन की समस्या उत्पन्न नहीं होती क्योंकि इस प्रकार के समाज में जो औपचारिक है वह प्रभावी भी है। जबकि एक समपाश्र्वीय समाज में, नये या आधुनिक संगठन खड़े किये जाते हैं, फिर भी वास्तव में पुराने या अविभेदीक त संगठन, सामाजिक व्यवस्था पर प्रभुत्व जमाये रखते हैं। यद्यपि नये आदर्श या मानदंड तथा मूल्य, जो सामान्यतः अल्पकार्यात्मक संगठन से जुड़े होते हैं उनको औपचारिक मान्यता दे दी जाती है, वास्तव में उनके साथ जबानी सहानुभूति होती है तथा अल्पकार्यात्मक समाजों से जुड़े परंपरावादी मूल्यों के पक्ष में उन्हें उपेक्षित कर दिया जाता है। इस प्रकार एक समपावय समाज में, संसद, सरकारी कार्यालय, बाजार, स्कूल आदि विभिन्न राजनीतिक, प्रशासनिक तथा आर्थिक कार्य संपन्न करते हैं। वास्तव में, उनका व्यवहार कुछ परंपरावादी संगठनों, जैसे, परिवार, धर्म, जाति आदि से प्रभावित होता है।

5-3-2-साल प्रारूप (Sala Model)

बहुकार्यात्मक समाज की विशेषता यह है कि उसमें अनेक आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक उप-व्यवस्थाएँ शामिल होती हैं। रिग्स ने प्रशासनिक उप-व्यवस्था को "साल प्रारूप" का नाम दिया। एक अल्पकार्यात्मक समाज में इसके दूसरे भाग को "ब्यूरो" या

"कार्यालय" तथा एक बहुकार्यात्मक समाज में उसे ही "चेम्बर" कहा जाता है। इनमें से प्रत्येक की अपनी अलग विशेषताएँ होती हैं।

स्पेनिश शब्द "साल" के अनेक अर्थ है, जैसे- सरकारी कार्यालय, धार्मिक सम्मेलन, एक कमरा, इत्यादि। पूर्वी एशियाई देशों में भी सामान्यतः साल शब्द का प्रयोग लगभग इस अर्थ में किया जाता है। साल में अल्पकार्यात्मक "ब्यूरो" एवं बहुकार्यात्मक "चेम्बर" दोनों की कुछ विशेषताएँ पाई जाती है। परंतु साल की जो "ब्यूरो" विशेषताएँ हैं इसके आधारभूत चरित्र का सही प्रतिनिधित्व नहीं करती। विषय मूल्य व्यवस्था तथा समपार्श्वीय समाज के परम्परावादी एवं आधुनिक तरीके इसकी प्रशासनिक समझदारी में दिखाई देते हैं तथा ब्यूरो में पाई जाने वाली कार्यकुशलता साल में नहीं होती।

समपार्श्वीय समाज में परिवार कल्याण, भाई-भतीजावाद तथा पक्षपात की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, विभिन्न प्रशासनिक पदों पर नियुक्तियाँ तथा कुछ प्रशासनिक कार्य संपन्न किए जाते हैं। अल्पकार्यात्मक समाज में रिश्तेदारों प्रशासनिक व्यवहार तथा सरकारी सत्ता के प्रयोग से अलग रखी जाती है। बहुकार्यात्मक समाज में राजनीतिक प्रशासनिक व्यवस्था का चरित्र आनुवंशिक है इसलिए परिवार या रिश्तेदारी को महत्त्व देता है। समपाश्र्वय समाज में नातेदारी तथा परिवार के ऊपर नये औपचारिक संगठनों को लादने के अतिरिक्त, दूसरी तरफ यह कानूनों के व्यापक रूप से क्रियान्वयन की उपेक्षा करता है। यद्यपि आनुवंशिकतावाद अधिकारिक रूप से निर्धारित होता है, वास्तविक रूप में इसका व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है तथा सभी प्रशासनिक व्यवहारों में देखा जा सकता है। "साल" अधिकारी सामाजिक कल्याण की अपेक्षा निजी उन्नति या धन प्राप्ति को प्राथमिकता देता है। उसका व्यवहार तथा निष्पादन पुरातनवाद या रूढिवाद से प्रभावित होता है जिसके परिणामस्वरूप विनियमों का किया व्यापक रूप से किया जाता। कुछ लोग दूसरों की बनता में सरकारी कार्यों सेअधिक लाभान्वित होते हैं जिससे बहुत बड़े वर्ग के हितों की उपेक्षा होती है।

इसके अतिरिक्त बहु-समुदायवाद से कुछ प्रशासनिक समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं। सैद्धांतिक रूप से यह कहा जा सकता है कि सरकारी अधिकारियों द्वारा कानूनों का निष्पक्ष रूप से क्रियान्वयन होना चाहिए। परंतु एक सरकारी अधिकारी सरकार के प्रति कम वफादार होता है जबकि अपने समाज के सदस्यों के प्रति अधिक वफादार पाया जा सकता है। परिणामस्वरूप, प्रबल अल्पसंख्यक समुदाय भर्ती आदि में प्रतिनिधित्व का प्रधान अंश प्राप्त करते हैं जिससे अधिकतर लोगों में असंतोष उत्पन्न होता है। ऐसी स्थिति उपस्थित करने तथा अन्य अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करने के लिए “कोटा" या आरक्षण पद्धति अपनाई जा सकती है जिससे प्रशासन में सभी समुदायों को एक प्रकार का आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया जा सके।

फिर भी इस प्रकार की व्यवस्था विभागीकरण तथा समुदायों को पारस्परिक विद्वेष की ओर ले जा सकती है जिससे विभिन्न सरकारी एजेसियों में कार्यरत भिन्न समुदायों के बीच तनाव और भी बढ़ सकता है केवल विकासशील देशों में ही विशेष रूप से यह स्थिति नहीं है, दक्षिण अमेरिका में सफेद तथा नीग्रो लोगों के बीच तनाव भी इसका उदाहरण है।

समपार्श्वीय समाज में परिवार, समुदाय तथा जाति निर्णायक भूमिकाएँ निभाती है, परंतु उसके साथ ही नए समूहों का विकास भी इस समाज के अंतर्गत होता है। रिग्स इसे "क्लैक्ट" कहते हैं। "क्लैक्ट" एक अपने ही प्रकार का समपार्श्वीय समूह होता है जो आधूनिक संघात्मक पद्धतियां या संगठन का प्रयोग तो करता है, परंतु पुरातनवादी अपविस्त त (डिफ्यूज) तथा विशिष्ट ध्येयों को बनाए रखता है। "क्लैक्टों में मात्र एक समुदाय या समूह विशेष के लोग शामिल होते हैं तथा उस श्रेणी से जुड़े सरकारी अधिकारी केवल अपने कलैक्टों के सदस्यों की सेवा प्रभावी रूप से अन्य लोगों की उपेक्षा करके करते हैं। कभी-कभी साल या इसकी एजेंसियों में से कोई एक क्लैक्ट विशेष के साथ संबंध स्थापित कर लेती है या एक क्लैक्ट के रूप में कार्य करना प्रारंभ कर देती है।

परिणामस्वरूप क्लैक्ट एक समूह विशेष से घनिष्ठ संबंध बनाए रखता है तथा प्राथमिक रूप से उसके हित के कार्य करता है तथा व्यापक मानदंडों या आदर्शों तथा उपलब्धियों के प्रति केवल दिखावटी बातें करता है।

एक समपार्श्वीय समाज में पुरातनवादी व्यवहार का प्रतिमान मानदंडों या आदर्शों की नई प्रव त्ति के साथ-साथ विद्‌यमान होता है। औपचारिक तथा प्रभावी आचरण मानदण्डों के अतिच्छादन के परिणामस्वरूप आचरण प्रतिमानों के विषय में सामंजस्य का अभाव समपाश्वय की सामाजिक अंतःक्रियाओं की विशेषता होता है।

साल अधिकारी राजसेवा में प्रवेश तो उच्चतर शैक्षिक योग्यताओं के कारण या प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने के माध्यम से कर सकते हैं, परन्तु अपनी पदोन्नति तथा कैरियर के विकास के संबंध में वे मुख्यतः या अधिकतर निक्षेपित संबंधों तथा वरिष्ठता के आधार पर अथवा वरिष्ठ अधिकारियों के प्रभाव पर भी निर्भर करता है। यद्‌यपि ये अधिकारी अपने आचरण में आधुनिक मानदंडों पर चलने का दावा कर सकते हैं, वास्तविकता प्रतिदिन के व्यवहार में वे मानदंडों की उपेक्षा अथवा उन्हें अस्वीक त करते हैं। जनता भी नियमों तथा विनियमों का पालन करने में साल अधिकारियों का अनुसरण करती है। परन्तु जब उनका निजी मामला होता है तो वे या तो नियमों को तोड़ने का प्रयास करती है या अपने हित में छूट प्राप्त करने के लिए निवेदन करते हैं।

एक समपार्श्वीय समाज के शक्ति संगठन के आच्छादन का वर्णन करते समय रिग्स कहते हैं कि यह एक बहुत अधिक केन्द्रीक त तथा सकेन्द्रित सत्ता संरचना है जो बहुत अधिक स्थानीय तथा बिखरी हुई नियंत्रण व्यवस्था को आच्छादित करती है। इसमें सत्ता का (अधिकाधिक रूप से स्वीक त या वैध सत्ता) तथा नियंत्रण वास्तविक, परंतु अनाधिकाधिक रूप से अनुमत या अवैध सत्ता से विभाजन होता है। व्यवहार में कानूनी शक्ति वस्तुतः नियंत्रणों के सामने झुक जाती है। साल की सत्ता बहुल समुदायवाद, क्लैक्ट तथा बहुत

आदर्शवाद पर आधारित समाज की नियंत्रण संरचनाओं को आच्छादित करता । बहुत सी संरचनाएँ कभी-कभी असाधारण से व्यवहार करती है तथा यहां तक कि कई बार उस उद्देश्य के ही विरूद्ध कार्य करती है जिसके लिए उन्हें बनाया गया था। कभी-कभी प्रशासन की ओर मूलभूत स्थिति से विहीन संरचनाएँ इसके लिए उत्तरदायी अन्य संरचनाओं के साथ प्रशासनिक कार्यों का क्रियान्वयन करती है।

रिग्स ने समपार्श्वीय समाज को एक असंतुलित राज्य कहा है जिसमें राजनीतिक नेताओं की संवैधानिक शक्तियों के होते हुए भी नौकरशाहों का प्रभुत्व होता है। परिणामस्वरूप साल अधिकारी समपार्श्वीय समाज की निर्णय निर्माण प्रक्रियाओं में अल्पकार्यात्मक समाज की तुलना में अधिक प्रभुत्वशाली भूमिका निभाते हैं। नौकरशाहों के हाथों में शक्तियों के केन्द्रीकरण के कारण, लोगों की आवश्यकताओं तथा इच्छाओं के प्रति उनके द ष्टिकोण में सहानुभूति का अभाव होगा। इस प्रकार की परिस्थिति में विकासशील समाज में लोग प्रशासन को शक्तिशाली बनाना राजनीतिक विकास को संभवतः अवरूद्ध करना होगा। उन्होंने आगे कहा है कि नौकरशाही को नियंत्रित करने में असफल राजनीतिक व्यवस्था विधानमंडल, राजनीतिक दलों, स्वैच्छिक संस्थाओं तथा जनमत को प्रभावशून्य बना देगी।

किसी भी सत्तारूढ़ राजनीतिक नेता की कमजोरी या शक्ति उसके प्रशासकों को दंडित करने तथा पारितोषिक देने की योग्यता से अलग होती है। एक कमजोर राजनीतिक नेता एक कार्यकुशल अधिकारी की सेवाओं को पहचानने तथा उसके द्वारा संगठन लक्ष्य को प्राप्त करने पर उसे अधिकारी को पुरस्कार देने में असफल हो सकता है और उसी समय अपनी असफलताओं के लिए कोई अकुशल अधिकारी दंड से बच कर निकल सकता है। परिणामतः एक कुशाग्र बुद्धि वाला साल अधिकारी अपनी शक्ति तथा निजी हितों को बढ़ावा देने में अपना अधिकतम समय व्यतीत करने की ओर प्रवत होता है तथा इस प्रक्रिया में अकुशल अधिकारी बचकर निकल सकते है। क्योंकि सरकार का निष्पादन साल अधिकारी के उत्पादन

स्तर पर निर्भर करता है, इसलिए रिग्स का कहना है कि नौकरशाही के व्यवहार तथा प्रशासनिक उत्पादन में घनिष्ठ संबंध है, एक नौकरशाह जितना अधिक शक्तिशाली होगा, उतना ही वह प्रभावहीन प्रशासक होता है, परिणामस्वरूप अपने हितों की रक्षा के लिए सत्ता प्राप्त करने के उद्देश्य से नियंत्रित होने के कारण कानूनों के संचालन में, अकुशलता, संस्थागत भ्रष्टाचार तथा भर्ती में भाई-भतीजावाद साल की विशेषताएँ होती है।

5-3-3-बाजार कैंटीन प्रारूप (Bazaar Canteen Model)

समपार्श्वीय अर्थव्यवस्था की आर्थिक उपव्यवस्था को रिग्स बाजार कैंटीन प्रारूप का नाम देते हैं। एक अल्पकार्यात्मक (डिफ्रैक्टेड) समाज में आर्थिक व्यवस्था मांग और पूर्ति के बाजार घटकों पर निर्भर होकर काम करती है तथा केवल आर्थिक कारण ही बाजार को नियंत्रित करते हैं एक बहुकार्यात्मक (फ्यूज्ड) समाज में धार्मिक, सामाजिक या परिवार संबंधी कारक अर्थव्यवस्था का संचालित करते हैं। ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में एक प्रकार से वस्तु विनिमय प्रणाली ही विद्‌यमान होती है तथा कीमत का प्रश्न कभी-कभार ही उत्पन्न होता है समपाश्वीय समाज में बाजार अर्थव्यवस्था तथा परम्परावादी अर्थव्यवस्था दोनों की विशेषताएँ होती हैं। ऐसी परिस्थितियों में एक वस्तु या सेवा का मूल्य आंकना संभव नहीं होता।

बाजार कँटीन, प्रारूप में, समाज का एक वर्ग आर्थिक संस्थाओं पर नियंत्रण द्‌वारा सभी लाभ प्राप्त करता है तथा अधिक लोगों का शोषण करता है। सौदेबाजी, कटौती तथा रिश्वत इत्यादि इस प्रारूप की सामान्य विशेषताएँ हैं। सभी स्तरों पर भेदभाव तथा पक्षपात होता है, सेवाओं का निर्धारण सार्वजनिक अधिकारी तथा लोगों के संबंधों से होता है, जो एक स्थान से दूसरे स्थान में तथा एक समय से दूसरे समय तथा व्यक्तिवत: भिन्न होता है। किसी वस्तु या सेवा की कीमत परिवार के संबंध, रिश्तेदारी, व्यक्तिगत संबंध, सौदेबाजी की शक्ति तथा राजनीति पर निर्भर होती है। इस प्रकार की स्थिति कालाबाजारी, जमाखोरी, मिलावट तथा महँगाई इत्यादि को बढ़ावा देती है। एक समपाश्वीय समाज में बाजार कारक पूंजी में

आनुपातिक वद्धि के बिना ही विकसित होते हैं, व्यापारी अपने प्रभाव को निजी हितों के उद्देश्य से राजनीतिक तथा प्रशासनिक क्षेत्रों तक फैलाने का प्रयास करते हैं। इसलिए शोषण, गरीबी तथा सामाजिक अन्याय बाजार कैंटीन प्रारूप की मुख्य विशेषताएँ बन जाती है।

5-3-4- समपार्श्वीय समाज का सिद्धांत पुननिर्माण का संशोधन (Theory of Prismatic Society Revisited)

अपने प्रयासों की सीमाओं को स्वीकार करते हुए रिग्स ने अपने बाद के कार्य "प्रिज्मेटिक सोसाइटी रिविजिटिङ' (1975) में सुधार किया था जैसा पहले कहा जा चुका है, उनके बहुकार्यात्मक, समपार्श्वीय तथा अल्पकार्यात्मक समाजों के प्रारूपों विभेदीकरण के स्तरों पर आधारित थे अपने नए सूत्रों में रिग्स ने विभेदीक तथा समपार्श्वीय समाजों के बीच समन्वय का दूसरा आयाम प्रस्तुत किया है। रिग्स ने विभेद तथा समन्वय के दोहरे दष्टिकोण के माध्यम से समाजों को समन्वय तथा असमन्वय के आधार पर संकलित किया। अल्पकार्यात्मक तथा समपाश्र्वय समाजों के प्रारूपों का फिर आगे समन्वय के आधार पर उप विभाजित किया गया। इसलिए अल्पकार्यात्मक समाजों आदि को अल्पकार्यात्मक अर्थो अल्पकार्यात्मक तथा नव- अल्पकार्यात्मक के रूप में संकलित किया गया है। इसी प्रकार समपार्श्वीय समाजों को भी अति समपाश्र्वीय (co- prismatic) आर्थो समपार्श्वीय (artho-prismaticK) तथा नव-समपार्श्वीय (neo-prismatic) के रूप में संकलित किया गया है। दोहरे दष्टिकोण के नए सूत्रों का अर्थ है एक अल्पकार्यात्मक प्रारूप उस समाज का वर्णन करता है जो विमेदीक त तथा समन्वित है तथा समपाश्वीय प्रारूप विभेदीक परन्तु असमन्वित समाज का वर्णन करता है। दोनों प्रारूपों के साथ जुड़े पूर्व प्रत्यय विभेद तथा समन्वय के बीच भिन्न संबंधों को बतलाते हैं।

रिग्स ने संशोधित प्रारूपों का प्रयोग अमरीका जैसे विकसित समाज में तनावों की व्याख्या करने के लिए किया। उसके विचार में विकसित राष्ट्रों में शहरी, संकट, वंशानुगत या

जातिगत हिंसा, विद्यार्थी आंदोलन जैसे सामाजिक तनाव विभेद तथा समन्वय में दूषित समायोजन के परिणामस्वरूप होते हैं। अल्पविकसित देशों में अधिक स्थिर या शांतिपूर्ण स्थितियों समपार्श्वीय समाज में विभेद तथ समन्वय के बीच के कम अंतर का सूचक हो सकती है। रिग्स के ये सूत्र विकासशील तथा विकसित समाज की विशेषताओं को समझने के लिए अधिक उपयोगी है।

5-3-5-आलोचना (Criticism)

रिग्स की पारिस्थितिकीय व **दृष्टिकोण** की बहुत सी आलोचनाएँ आपको मिलेगी मुख्यतः आलोचनाएँ निम्न आधारों पर की जाती

- **भाषा प्रयोग में कठिनाइयाँ:** रिग्स ने अपनी धारणाओं का अर्थ बतलाने के लिए नये शब्दों को निर्मित किया। इसके अतिरिक्त पहले से ही प्रयोग में आए अनेक शब्दों का भिन्न अर्थ भी प्रदान किया। नये शब्द बनाने में उस समय कोई हानि नहीं होती जब वर्तमान शब्दकोष अर्थ समझाने तथा अवधारणाओं को ढंग से अभिव्यक्त करने में असमर्थ हो यदि कोई अपने ढंग से शब्द की व्याख्या करता है तो इसमें यह भी कोई गलत बात नहीं है। परन्तु नये शब्दों का स्वतंत्र प्रयोग और ऐसे शब्दों का जिनके पहले ही भिन्न-भिन्न अर्थ हों, अवधारणाओं को स्पष्ट करने के स्थान पर उलझन या भ्रांति पैदा कर सकता है। रिग्स ने अपने प्रारूपों को वैज्ञानिक रूप देने के उत्साह में अपनी अधिकतम शब्दावली भौतिक विज्ञानों से उधार ली है। परन्तु प्रशासन के विश्लेषण के लिए भौतिक विज्ञानों से उधार लिए कुछ नये शब्दों का प्रयोग इसे विज्ञान नहीं बना सकता।
- **परिवर्तनोन्मुखी की कमी:** 'हानि-बीन ली' विकास प्रशासन के सामाजिक परिवर्तन पर संकेन्द्रण की दष्टि से समपाश्र्वीय तथा साल प्रारूपों की उपयोगिता को संदेह की दष्टि से देखते हैं। ली का मानना है कि रिग्स के प्रारूप सामाजिक परिवर्तन तथा विकास की प्रक्रिया के विश्लेषण में सहायक नहीं है। वे रिग्स के प्रारूपों को संतुलन-प्रारूपों के रूप में

मानते हैं। संतुलन प्रारूप व्यवस्था को सुरक्षित रखने में तो सहायता देंगे परन्तु व्यवस्था में कोई परिवर्तन प्रस्तुत करने में नहीं। इस प्रकार निष्कर्षतः ली कहते हैं कि रिग्स के प्रारूप उस समय उपयोगी नहीं है जब प्रशासन का लक्ष्य व्यवस्था को बनाये रखने की अपेक्षा व्यवस्था को परिवर्तित करता हो।

- **परिमाणात्मक सूचकों का अभाव या अनुपस्थितिः** विशेष समाजों में रिग्स के प्रारूपों को क्रियान्वित करने में मूल्यांकन की समस्या उत्पन्न होती है। मूल्यांकन के अभाव में समपार्श्वीय या अल्पकार्यात्मक समाजों की पहचान कठिन हो जाती है। रिग्स के विश्लेषण के पीछे चलने वाला विद्यार्थी समपाश्र्वय को प्रत्येक ज्ञातस्थिति या अवस्था से जोड़ने की ओर प्रवर्त हो सकता है।
- **अवधारणाओं की नकारात्मक प्रव त्ति या उन्मुखताः** रिग्स ने एक समपार्श्वीय समाज के सकारात्मक चरित्र को इतना महत्त्व नहीं दिया जितना नकारात्मक चरित्र को। उसने नियमबद्धता या नियमनिष्ठता का एक नकारात्मक पहलू के रूप में प्रस्तुत किया तथा उसके सभी बुरे प्रभावों का उभारा। परन्तु यह भी सच है कि कभी-कभी नियमों तथा विनियमों का सख्ती से पालन न करने से लोगों को लाभ हो सकता है। उदाहरण के लिए, यदि कुछ नियमों का सख्ती से पालन न किया जाए तो प्रशासन अधिक तेज गति से चल सकता है। भारत जैसे देशों में, यदि नेतृत्त्व ठीक हो, नियमनिष्ठता अधिकतम या सभी स्थितियों में कार्य अवरोधक बन जाता है तथा एक गैर-परिवेशीय द ष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। रिग्स की नकारात्मक औपचारिकता की अवधारणा को प्रति-संतुलित करने के लिए वाल्सन ने सकारात्मक औपचारिकता की नई अवधारणा प्रस्तुत की है। इस बात से असहमति नहीं हो सकती जहाँ पर निष्पादन के एक उच्चतर स्तर को प्राप्त करने का प्रयास किया जायेगा वहाँ प्रत्येक स्थिति में औपचारिकता का होना आवश्यक है। इसका अर्थ निष्पादन के नये उच्चतर स्तर पर पहुँचने की लोगों की इच्छा है। सभी संस्थाएँ तथा व्यक्ति अपना निष्पादन सुधार सकते हैं जब निर्धारित लक्ष्य,

निर्धारित मानदंड उच्चतर किस्म या स्थिति के हों। औपचारिकता को सद्भावनाओं तथा उसे प्राप्त करने के लिए संघर्ष के बीच अंतर समझने की अपेक्षा, इसका वर्णन एक नकारात्मक विशेषता के रूप में किया गया है।

- **जातिवाद या वंशवाद पर अधिक बलः** समाजों का बहुकार्यात्मक समपाश्र्वीर्य या अल्पकार्यात्मक समाजों के रूप में वर्गीकरण पूंजीवादी व्यवस्था में अंतनिर्हित मूल्यों पर आधारित है। वास्तव में अल्पकार्यात्मक प्रारूप की विशेषताएँ पूर्णतः एक पूँजीवादी व्यवस्था की विशेषताएँ है। रिग्स का विश्लेषण स्पष्ट रूप में अन्य प्रारूपों के ऊपर अल्पकार्यात्मक प्रारूप की श्रेष्ठता स्थापित करता है। उस सीमा तक यह दृष्टिकोण जाति या वंशवाद से ग्रसित है।

5-4 **अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)**

5-4-3-नवाचार एवं उद्यमी (Meaning of Innovation and Entrepreneur)

पीटर डकर के अनुसार, "नवाचार उद्यमिता का विशिष्ट उपकरण है।" (Innovation is specific instrument of entrepreneurship) नवाचार एवं उद्यमी इन दोनों में गहन सम्बन्ध है। बिना नवाचार के उद्यमिता अधूरी है और बिना उद्यमी के नवाचार अधूरा है। आखिर वह उद्यमी ही है जो नवाचार को विकसित एवं लागू करता है। नवाचार और उद्यमी दोनों नवाचार + उद्यमी का योग है।

- **नवाचार का अर्थ (Meaning of Innovation)**

नवाचार किसी नवीन क्रिया को सम्पन्न करने की प्रक्रिया है। नवाचार से आशय किसी नवीन क्रिया को सम्पन्न करना, किसी नई वस्तु को निर्मित करना, किसी नये विचार को उत्पन्न करना, किसी नवीन औद्योगिकी (Technology) को लागू करने से है। नवाचार वह कार्य होता है, जो स्रोतों को सम्पदा की नई क्षमता प्रदान करता है। लक्ष्यों को प्राप्त करने के

विभिन्न पस्त साहत उद्यमी उसके स्थानापन्न ढूँढने के लिए तैयार रहता है। नवाचार में निम्न क्रियायें निहित हैं

(i) ऐसे नवीन उत्पाद को प्रस्तुत करना जिससे उपभोक्ता अवगत न हों अथवा विद्यमान उत्पादों के मध्य नवीन उत्पाद प्रस्तुत करना।

(ii) नवीन कच्चे माल अथवा अर्द्ध-निर्मित उत्पाद का पता लगाना जिसका अभी तक विदोहन नहीं हआ हो।।

(iii) ऐसी नवीन निर्माणी प्रक्रिया को प्रस्तुत करना जिसकान तो अभी तक परीक्षण किया गया हो और न उसका वाणिज्यिक उपयोग किया गया हो।

(iv) उत्पादन के संसाधनों का नया संयोजन विकसित करना।

(v) नये विचारों को उत्पन्न एवं विकसित करना। (vi) एक ऐसे नवीन बाजार को खोलना एवं विदोहन करना जिसमें पहले कभी भी कम्पनी का विक्रय नहीं हुआ हो।

- **उद्यमी का अर्थ (Meaning of Entrepreneur)**

उद्यमी से आशय ऐसे व्यक्ति से है जो किसी नवीन उपक्रम की स्थापना का जोखिम उठाता है, अनिश्चितताओं का सामना करता है, आवश्यक संसाधनों को एकत्रित करता है। (जैसे-श्रम, पूँजी, कच्चा माल, भवन, यन्त्र, सामग्री आदि) आधुनिक तकनीकी ज्ञान प्रदान करता है, स्वयं प्रबन्ध करता है और अच्छा लाभ कमाता है। उद्यमी के अर्थ का विस्तृत विवेचन इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में किया जा चुका है।

- **नवाचार एवं उद्यमी का अर्थ (Meaning of Innovation and Entrepreneur)**

नवाचार एवं उद्‌यमी दोनों के मध्य चोली-दामन का सम्बन्ध है। यह उद्‌यमी ही है जोकि नवाचार को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है। उद्‌यमी नवाचार द्‌वारा प्रतिपादित नवीन विचारों को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है। उत्पादन क्रिया में नई-नई तकनीकें लाग करता है, जिनके परिणामस्वरूप उत्पादन तथा उत्पादकता दोनों में वृद्धि होती है, किस्म में सुधार होता है, उपभोक्ताओं को नये-नये उत्पादों के उपभोग का सुअवर मिलता है, प्रति इकाई उत्पादन लागत में पर्याप्त कमी होती है और लाभों में भारी वृद्धि होती है। उपक्रम का भविष्य भी उज्ज्वल हो जाता है।

जोसेफ ए.शुम्पीटर (JosephA.Schumpeter) के अनुसार,उद्‌यमिता नवप्रवर्तनकारी कार्य है नवाचार के लिए किसी राष्ट्र में शैक्षिक, सामाजिक तथा तकनीकी स्तर को ऊँचा उठाना आवश्यक है। एक विकसित अर्थव्यवस्था में उद्‌यमी वह व्यक्ति है जो अर्थव्यवस्था में किसी नवीन बात को प्रस्तुत करता है। उद्‌यमी नवाचार के द्‌वारा नवीन परिवर्तनों-नई वस्तु, नई उत्पाद, नई वितरण प्रणाली, नये बाजार, नया कच्चा माल, नई तकनीक तथा नये अवसर आदि को जन्म देता है और उनसे अधिकाधिक लाभ प्राप्त करता है। उद्‌यमी मुनाफा (लाभ) कमाता है, किन्तु मुनाफाखोरी (Profiteering) नहीं करता है। उद्‌यमी नवाचार को लागू करके उपभोक्ताओं को विभिन्न प्रकार के उत्पादों का उपभोग करने का सुअवसर प्रदान करता है, किन्तु उनका शोषण नहीं करता है।

फ्रेन्ज (Frantz) के शब्दों में, “उद्‌यमी प्रबन्धक से बड़ा होता है। उद्‌यमी नवप्रवर्तक एवं प्रवर्तक दोनों है।”

पीटर एफ. ड्रूकर (Peter F. Drucker) के शब्दों में, “उद्‌यमी वह व्यक्ति है जो सदैव परिवर्तन की खोज करता है, उस पर प्रतिक्रिया करता है तथा एक अवसर के रूप में उसका लाभ उठाता है।”

उक्त परिभाषाएँ उद्यमी को नवाचार की गतिशील भूमिका प्रदान करती हैं। उद्यमी प्रत्येक स्थिति का एक सृजनात्मक प्रत्युत्तर (Creative Response) प्रस्तुत करता है तथा उद्यमी आजीविका स्वरूप उन रास्तों का अनुसरण करता है जिनसे अवसरों को सृजनात्मक और नवाचारी बनाना सम्भव होता है।-नवाचार तथा उद्यमिता इन दोनों में निकटतम सम्बन्ध है। दोनों में से किसी को भी एक-दूसरे से पृथक करना सम्भव नहीं है क्योंकि एक के बिना दूसरा अधूरा एवं अनुपयोगी है। इसलिए कहा जाता है कि नवाचार तथा उद्यमिता दोनों के मध्य चोली-दामन का सम्बन्ध है।

3-4-2-नवाचार की विशेषताएँ (Characteristics of Innovation)

जोसेफ ए.शुम्पीटर (Joseph A.Schumpeter),फ्रेन्ज (Frantz), पीटर एफ.ड्रुकर (Peter F.Drucker) आदि प्रबन्धशास्त्रियों ने इस बात की गहन खोज की है कि संगठनों में नवाचार, नवाचार सम्बन्धी स्वभाव, मूल्य और निश्चय किन बातों से बनते हैं। कई प्रश्न सूचियों और विभिन्न प्रकार के विश्लेषणों के पश्चात् वे इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि उनमें से कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) नये विचारों पर प्रयोग करना,

(ii) परिवर्तनों से प्रसन्न होना,

(iii) नये विचारों को प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में अनिश्चितता का सामना करना,

(iv) अपरम्परागत व्यवहार का मूल्यांकन करना,

(v) किसी काम को छोड़ना नहीं और नए काम को करते समय गलतियाँ होने पर अस्थिर न होना,

(vi) वर्तमान तरीकों या वर्तमान उपकरणों का वर्तमान सेवाओं के नए उपयोग खोजना,

(vii) हल करने के लिए समस्याओं को ढूँढना,

(viii) ऐसी समस्या पर कार्य करना जिसके कारण दूसरों को काफी कठिनाई हो रही हो,

(ix) अपने मौलिक तरीके से वस्तु को पेश करना,

(x) असंरचनात्मक कार्य आबंटनों हेतु तत्पर रहना,

(xi) एक नए विचार की दिशा में महत्त्वपूर्ण निविष्टि प्रदान करना, एवं

(xii) प्रस्तावित विचारों का मूल्यांकन प्रस्तुत करना।

संक्षेप में नवप्रवर्तन उद्यमी का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। अपनी प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति में सुधार करने तथा समाज को अधिकतम सन्तुष्टि एवं सेवाएं प्रदान करने के लिए उद्यमी नवप्रवर्तनों का विकास करता है तथा उन्हें अपनाता है। वह समाज में नवीन परिवर्तनों को जन्म देता है। वह शोध, अनुसन्धान व सृजनात्मक चिन्तन के द्वारा अपनी वस्तु, उत्पादन प्रणाली आदि में नए-नए सुधार करता है। उद्यमी समाज में नए मूल्यों, उच्च जीवन स्तर, नई उपयोगिताओं व नवीन सन्तुष्टियों के लिए निरन्तर खोज करता रहता है। उद्यमियों में नवविचारों पर कार्य करने और कार्य की पहल करने की प्रबल प्रवृत्ति होती है। इस प्रवृत्ति के कारण वे केवल स्वप्नदृष्टा नहीं होते हैं, बल्कि अपने सपनों को वास्तविकता में बदलने वाले कर्मयोगी भी होते हैं।

5-4-3-नवाचार एवं आविष्कार (Innovation and Invention)

प्राय: लोग नवाचार (Innovation) तथा आविष्कार (Invention) को समान ही मानते हैं। वास्तविकता यह है कि म पर्याप्त अन्तर है। आविष्कार के अन्तर्गत नवीन सामग्रियों, नवीन विधियों तथा नवीन तकनीकों का पता लगाया जाता श्सक विपरीत, नवाचार के अन्तर्गत इन नवीन सामग्रियों, विधियों एवं तकनीकों का उपयोग ऐसे नवीन उत्पादों की नवीन मा के निर्माण में किया जाता है जोकि एक ओर उपभोक्ताओं को अधिक सन्तुष्टि प्रदान करती हैं और दूसरी ओर, उद्यमियों आधक लाभ प्रदान करती हैं। जहाँ एक ओर आविष्कारक नये

विचार प्रदान करता है, वहीं दूसरी ओर, उद्यमी उन विचारों लागू करके आर्थिक लाभ कमाता है। एक आविष्कारक समाज के ज्ञान में वृद्धि करता है, जबकि नवाचार उपभोक्ताओं की टम वृद्धि करते हुए उन्हें नए-नए उत्पादों का उपभोग करने का सुअवसर प्रदान करता है। यह नवाचार ही है, जो आविष्कार का वाणिज्यिक उपयोग करता है।

5-4-5-नवाचार के प्रकार (Types of Innovation)

करातको (Kuratko): **रिचर्ड एम. होगेटस (Richard M. Hodgetts**); एवं डॉनाल्ड एफ. (Donald F.) के अनुसार नवाचार निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं

1नवीकरण (Innovation) यह नवीन उत्पादों एवं प्रक्रिया का उत्पादन करता है।

2. विस्तार (Extension) यह पहले से बने उत्पाद, कार्य या प्रक्रिया का विस्तार करता है।

3. दोहराने की प्रणाली (Duplication) यह पहले से मौजद विचार या उत्पाद की रचनात्मक नकल करता है। रचनात्मक नकल का अर्थ है उसे बढ़ाने या सुधारने के लिए कुछ नया रचनात्मक कार्य करना।

4. संयोग (Synthesis)–यह स्थापित धारणाओं एवं विचारों का मिश्रण है ताकि वे मिलकर एक नया कार्यक्रम प्रारम्भ कर सकें।

5-4-5- सृजनात्मकता,सृजनात्मकता के घटक व नवाचार ,सृजन प्रक्रिया की प्रमुख अवस्थाएँ

(Creativity, components of creativity and innovation, major stages of the creative process) सृजनात्मकता एवं नवाचार दोनों शब्दों का अक्सर एक ही आशय समझा जाता है, किन्तु दोनों का अर्थ भिन्न है। 'सृजनात्मकता' से आशय नवीनता को वास्तविकता में लाने वाली योग्यता से है, जबकि नवाचार नवीन कार्यों को करने की प्रक्रिया

है, दोनों के मध्य यह भिन्नता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। किसी भी विचार या कल्पना का मूल्य तब तक शून्य होता है जब तक कि वह किसी नए उत्पाद, सेवा अथवा प्रक्रिया के रूप में परिवर्तित नहीं हो जाती। नवप्रवर्तन मूलतः सृजनात्मक कल्पनाओं एवं धारणाओं (Creative Ideas) का लाभप्रद प्रयोगों में रूपान्तरण है, जबकि सजनात्मकता, नवप्रवर्तन की पूर्वआवश्यकता है।

अलेक्जेण्डर ग्राहम बेल (Alexander Grahm Bell) ने सृजन प्रक्रिया को निम्नांकित प्रकार से स्पष्ट किया है– विचार की पहचान, विचार व्याख्या विचार की ग्राह्यता, विचार विकास

(1) विचार की पहचान या जन्म (Recognition)–इस अवस्था को अंकुरण (Germination) अवस्था भी कहते हैं। इससे प्रादुर्भाव होता है, चाहे वह नवीन विचार की खोज हो अथवा किसी समस्या के समाधान का कोई नवीन हल हो।

(2) विचार व्याख्या (Rationalisation) नवीन विचार के मन्थन की अवस्था को युक्तिपूर्वक विचार व्याख्या कहते मास सोपान में विचार का जनक विचार की विश्लेषणात्मक ढंग से व्याख्या करता है। इस सोपान में सम्बन्धित साहित्य सूचनाएँ।

(3) विचार विकास (Incubation) यह अवस्था पल्लवन की अवस्था होती है। इस अवस्था को Incubation Stage भी कहते हैं।

(4) विचार ग्राह्यता (Realisation)-उक्त अवस्थाओं से गुजर कर नवविचार की चमक एवं समझ स्पष्ट होने लगती । है जिससे विचार की संरचना समझी जाती है एवं उसके क्रियान्वयन का विश्वास होने लगता है।

(5) विचार प्रमापीकरण (Validation) इस अवस्था में विचार का विभिन्न दृष्टिकोणों से परीक्षण किया जाता है । तथा विचार मूल्य का स्पष्टीकरण हो जाता है।

सृजनात्मकता के तीन प्रमुख घटक हैं। एक व्यक्ति में रचनाधर्मिता अथवा सृजनशीलता की प्रक्रिया के लिए विभिन्न क्षमताएँ (Skills) होनी चाहिए। सृजन प्रक्रिया और सृजनात्मकता के घटकों को निम्नांकित चित्र द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

5-4-6-नवाचार की अवस्थायें (Stages of Innovation)

जेम्स आर.एडम्स (James R.Adams) के अनुसार, "व्यवसाय पृथ्वी पर सबसे महत्त्वपूर्ण क्रिया है। यह वह आधारशिला है जिस पर संस्कृति का निर्माण होता है। वास्तव में धर्म, समाज, शिक्षा सबका मूल आधार व्यवसाय ही है। किसी भी व्यवसाय की स्थापना एवं प्रारम्भ के लिए व्यावसायिक अवसरों की खोज से लेकर, उत्पादन प्रारम्भ होने तक अनेक कार्यवाहियाँ करनी होती हैं तथा विभिन्न निर्णय लेने होते हैं। व्यवसाय प्रवर्तन में की जाने वाली प्रारम्भिक क्रियाओं को अध्ययन की सविधानुसार अग्रलिखित छः प्रमुख अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है।

- व्यावसायिक विचारों की पहचान (Identification of Business Idea)
- व्यवसाय का नियोजन (Business Planning)
- परियोजना प्रतिवेदन का निर्माण (Formation of Project Report)
- संगठन संरचना का निर्माण (Formation the Organisation Structure)
- वित्त के साधन (Source of Finance) व्यवसाय का प्रारम्भ (Commencement of Business)

I. **व्यावसायिक विचार की पहचान (Identification of Business Idea)**

मैकनॉटन (MCNauthton) के शब्दों में, "प्रत्येक व्यावसायिक उद्यम का उड़ान-बिन्दु (take-off point) एक विचार होता है। विचार वह शक्ति है जो प्रत्येक व्यावसायिक संस्था को अपने प्रेक्षपथ पर कायम रखती है। वे उद्यम जिनके पास मौलिक एवं व्यावहारिक विचारों का शक्ति स्रोत नहीं होता, मलिन हो जाते हैं तथा अन्ततः लुप्त हो जाते हैं।" प्रवर्तन एवं नवप्रवर्तन की प्रारम्भिक अवस्था व्यावसायिक अवसरों की पहचान करना होता है। अवसर की पहचान उसकी व्यावहारिकता एवं लाभदायकता का परीक्षण करने के उपरान्त ही उपक्रम की स्थापना का निर्णय होता है। संक्षेप में इस अवस्था में निम्न बातें शामिल होती हैं–(अ) व्यवसाय के प्रेरक, (ब) व्यावसायिक विचार, एवं (स) विचार की व्यावहारिकता एवं लाभदायकता की जाँच।

(अ) व्यवसाय के प्रेरक (Motives of Business)–समाज में उद्यमिता एवं व्यवसाय के प्रसार और विकास में प्रेरणा साधारणतया एक महत्त्वपूर्ण कारक होती है तथापि प्रेरणा के वृहत् दायरे के अन्तर्गत कुछ सामाजिक अभिप्रायों को उद्यमिता स्वभाव से महत्त्वपूर्ण ढंग से जुड़े पाया गया है; जैसे उपलब्धि की आवश्यकता,शक्ति संयोजन, पराश्रय,प्रसार,व्यक्तिगत उपलब्धि,सामाजिक उपलब्धि, प्रभाव आदि।

(ब) व्यावसायिक विचार (Business Ideas)–किसी भी प्रवर्तन अथवा नवप्रवर्तन सम्बन्धी विचार के लिए रचनात्मक एवं ठोस कार्य-योजना होना आवश्यक है। व्यावसायिक विचार अनेक विकल्पों के मध्य चयनित किया जाता है। जैसे निर्माणी इकाई स्थापित की जाए या सेवा उद्यम स्थापित किया जाए अथवा खाद्य एवं कृषि उद्योग स्थापित किया जाए।

(स) विचार की व्यावहारिकता एवं लाभदायकता की जाँच (Evaluating the Feasibility and Profitability of Ideas)-किसी भी प्रवर्तन अथवा नवप्रवर्तन की दशा में जो व्यावसायिक विचार चयनित किया गया है उसमें इस बात की जाँच करनी होती है कि उत्पाद

या सेवा का वास्तविक रूप क्या है? उनकी क्या उपयोगिताएँ हैं? उत्पादन एवं क्रियान्वयन की सम्भावित क्षमता क्या है? उक्त क्षमता हेतु निवेश की सीमा क्या है? बाजार सम्भावनाएँ क्या हैं? तकनीकी जटिलता/व्यवस्था क्या है? सम्भावित वार्षिक विक्रय क्या है? सम्भावित लाभ क्या हैं? एवं सफलता के निर्धारक तत्त्व क्या हैं? उक्त प्रश्नों का उत्तर ज्ञात करना आवश्यक है,क्योंकि इससे व्यावसायिक विचार की उपादेयता, व्यावहारिकता एवं लाभदायकता के सम्बन्ध में निर्णय लिया जा सकता है।

(II) व्यवसाय नियोजन (Business Planning)

व्यवसाय का प्रवर्तन करने से पूर्व व्यवसाय के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु नियोजन करना पड़ता है। व्यवसाय के लक्ष्यों की पूर्ति न्यूनतम साधनों के द्वारा अधिकतम कुशलता से करने के लिए व्यवासय की समग्र योजना एवं नियोजन करना अपरिहार्य है। नियोजन के महत्त्वपूर्ण घटक निम्नलिखित हैं- उत्पाद नियोजन (Product Planning),वित्तीय नियोजन (Financial Planning),विपणन नियोजन (Marketing Planning),लागत नियोजन (Cost Planning),संगठनात्मक नियोजन (Organisational Planning), संयन्त्र एवं उत्पादन,नियोजन (Plant and Production Planning)

(III) परियोजना प्रतिवेदन का निर्माण (Formation of Project Report)

प्रवर्तन की प्रारम्भिक अवस्था में व्यवसाय के महत्त्वपूर्ण पहलुओं की समग्र योजना बनाने के पश्चात् प्राथमिक परियोजना प्रतिवेदन की रचना की जाती है। प्राथमिक परियोजना प्रतिवेदन में उद्यम की संक्षिप्त एवं महत्त्वपूर्ण जानकारी की स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत की जाती है। परियोजना के प्राथमिक प्रतिवेदन का प्रारूप निम्नलिखित है

5-4-7-उद्यमिता का अर्थ, परिभाषा, अवधारणाएँ, विषेषताएँ व आवश्यकता(Meaning, definition, concepts, characteristics and need of entrepreneurship)

उद्यमिता अर्थ एवं परिभाषा

उद्यमिता एक कार्यविधि एवं भावना का समन्वय है। उद्यमिता का प्रयोग प्रचीनकाल से होता रहा है। आर्थिक क्षेत्र में उद्यमिता विचार का प्रारम्भ 18वीं शताब्दी से माना जाता है। उद्यमिता मात्र जीविकोपार्जन की कार्यप्रणाली ही नही बल्कि कौशल एवं व्यक्तित्व विकास की प्रभावी तकनीक भी है। राष्ट्र का आर्थिक विकास एवं सामाजिक विकास उद्यमिता का ही परिणाम हाता है।

आधुनिक युग में औद्योगिक और आर्थिक क्षेत्र के विकास के लिय उद्यमिता का महत्वपूर्ण योगदान है। उद्यमिता नये नये अविष्कारों एवं नवप्रवर्तन को जन्म देता हैं उद्यमी प्रवृत्तियों के कारण ही अमेरिका, जापान, रूस, जर्मनी आदि ने स्वयं को विकसित देशों की श्रेणी में स्थापित कर दिया है।

उद्यमिता एक विज्ञान, व्यवहार, अवसर के साथ साथ एक कर्मदृष्टि एवं दृष्टिकोण भी है। आर्थिक व्यवस्था एवं विकास के परिवर्तन स्तर के अनुसार उद्यमिता के अर्थ में परिवर्तन हुआ है।

उद्यमिता की परिभाषाएँ

- जोसेफ शुम्पीटर के अनुसारः " उद्यमिता एक नवप्रवर्तनकारी कार्य है। यह स्वामित्व की अपेक्षा एक नेतृत्व कार्य है।
- पीटर एफ ड्रकर के अनुसार: “व्यवसाय में अवसरों को अधिकाधिक करना अर्थपूर्ण है वास्तव में उद्यमिता की यही सही परिभाषा है।

- प्रो० राव एवं मेहता के शब्दों में उद्यमिता वातावरण का वृजनात्मक एवं नवप्रवर्तनशील प्रत्यूत्तर है"।
- एचडब्ल्यू० एच०ड० जॉनसन के अनुसार उद्यमिता तीन आधारभूत तत्वों का जोड़ है- अन्वेषण प्रवर्तन एवं अनुकूलन।
- रॉबर्ट लैब के शब्दों में उद्यमिता सामाजिक निर्णयन का वह स्वरूप है। जो आर्थिक नवप्रवर्तकों द्वारा सम्पादित किया जाता है।

उद्यमिता की अवधारणाएँ

- जोखिम अवधारणा-इस अवधारणा के अन्तर्गत जोखिम वहन करने वाले को ही उद्यमी माना गया है।
- संगठन एवं सम्नवय की अवधारणा-इस अवधारणा के अनुसार उद्यमी को संगठनकर्ता के रूप में जाना जाता हैं उद्यमी उत्पादन के विभिन्न साधनों का संयोजन कर नई उपयोगी वस्तु अथवा सेवा का सृजन करता है।
- प्रबन्धकीय कोशल की अवधारणा-प्रो० जे०एस० मिल ने उद्यमिता को निरीक्षण नियन्त्रण एवं निर्देशन की योग्यता माना है उद्यमिता की प्रबन्धकीय अवधारणा के अनुसार उद्यमी को प्रबन्धकीय कार्यों को कौशलपूर्ण ढंग से सम्पादन करना पड़ता है।
- नवप्रवर्तन अवधारणा -नवप्रवर्तन अवधारणा का प्रतिपादन 1934 में शुम्पीटर द्वारा किया गया। उन्होंने उद्यमिता को नवप्रवर्तनशील घटक माना। विकासशील एवं विकसित अर्थव्यवसी में उद्यमिता की नवप्रवर्तन अवधारणा का स्वरूप दिखायी देता है। क्योंकि विकास नवीन परिवर्तनों, सुधारों पर निर्भर करता है।
- मनोवैज्ञानिक प्रेरणा की अवधारणा -मैक्कीलेण्ड ने उद्यमिता को व्यक्ति का आकस्मिक व्यवहार मानकर इसे मनोवैज्ञानिक प्रेरणा माना है। इस अवधारणा के अनुसार उच्च उपलब्धियों को प्राप्त करना ही उद्यमिता है।

उद्यमिता की विषेषताएँ

उद्यमिता की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है-

- जोखिम वहन करना- उद्यमिता की अधारशीला जोखिम एवं अनिश्चितताओं को वहन करते हुये सफलता पाना हैं । संसाधनों को प्रबन्धित एवं व्यवस्थित ढंग से विनियोजित करना उद्यमी का कार्य होता है। जिससे उद्यमिता जोखिमपूर्ण नहीं रह जाती है।
- नवप्रवर्तन नवप्रवर्तनकारी कार्य उद्यमिता है। नये विचारों, तकनीकों का सृजन करना उद्यमिता है। व्यवसाय में नई खोज, ये यन्त्र एवं नई प्रबन्ध व्यवसी से उद्यमी सफलता प्राप्त करता है।
- रचनात्मक क्रिया- उद्यमिता, उद्यमी को नये-नये विचारों को क्रियान्वित करने के लिये प्रेरित करता है तथा कार्य में गुणवत्ता भी बढ़ती है जिससे व्यवसायिक विकास होता है।
- ज्ञान पर आधारित व्यवहार ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर व्यक्ति में उद्यमी के गुण आते हैं और वह अपने अनुभव तथा ज्ञान से उच्च उपलब्धियां प्राप्त करता है।
- .व्यवसाय अभिमुखी- उद्यमिता में व्यवसाय करने की प्रवृत्ति निहित रहती हैं यह उद्यमी को नय उद्योग प्रारम्भ करने की प्रेरणा देता है।
- उद्यमिता सिद्धान्तों पर आधारित है– उद्यमिता निश्चित सिद्धान्तों पर आधारित है। इसके लिये अर्थशास्त्र, कानून, सामाजिक शास्त्र एवं सांख्यिकी का ज्ञान आवश्यक है।

उद्यमिता की आवश्यकता

- सफल इकाइयों की स्थापना उद्यमिता से व्यवसायिक इकाइयों को लाभप्रद एवं कुशल बनाया जा सकता है।
- नवाचारों को प्रोत्सहन उद्यमिता के कारण ही व्यवसायिक नवप्रवर्तन होते है जिसके फलस्वरूप औद्योगिक एवं आर्थिक विकास होता है।

- तीव्र आर्थिक विकास उद्यमिता से व्यक्ति में उद्यमी की भावना का विकास होता है जिससे उद्यमी व्यवसायिक अवसरों की खोज करते हैं। और संसाधनों का दाहन करते हैं जिससे औद्योगिक एवं आर्थिक विकास तीव्र गति से होता है।
- रोजगार के अवसर उद्यमिता के विकास से देश में नये उद्योग स्थापित होते हैं जिससे औद्योगिक क्षेत्र का विकास एवं विस्तार होता है और रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है।
- सन्तुलित विकास उद्यमी पिछडे प्रान्तों में उद्योग स्थापित करके न केवल रोजगार प्रदान कर रहे हैं अपितु आर्थिक असमानताओं को भी कम करते है।
- नवीन बाजारों की खोज एवं विकास- उद्यमिता नवीन बाजारों की खोज एवं उनका विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नये शिक्षित एवं प्रशिक्षित उद्यमी नय नये बाजारों को खोजते हैं।
- राजकीय नीतियों का क्रियान्वयन उद्यमिता राजकीय नीतियों एवं योजनाओं के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- पूँजी निर्माण उद्यमिता देश की बचतों को एकत्र करके उसको विनियोग करती है जिससे पूँजी का निर्माण होता है। ।

5-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(i) पारिस्थितिक दृष्टिकोण का प्रतिपादन किसने किया था ।

(ii) रिग्स ने प्रशासनिक उप-व्यवस्था को क्या दिया था।

(iii)"उद्यमी वह व्यक्ति है जो सदैव परिवर्तन की खोज करता है, उस पर प्रतिक्रिया करता है तथा एक अवसर के रूप में उसका लाभ उठाता है" यह परिभाषा किसने दी थी।

(iv)"नवाचार उद्यमिता का विशिष्ट उपकरण है" यह किसने कहा था।

(v) एक अपने ही प्रकार के समपार्श्वीय समूह को रिग्स क्या कहते हैं।

5-6-सारांश (Summary)

वह दृष्टिकोण जो प्रशासन तथा वातावरण में सम्बन्ध अथवा अंतःक्रिया पर प्रकाश डालता है को पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण (Ecological Approach) कहते हैं। एफ. डब्लयू रिगज (F.W. Riggs) आदि हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार सभी संस्थानों (Institutions) पर समाज के वातावरण तथा संस्कति का प्रभाव पड़ता है। क्योंकि लोक प्रशासन भी एक उप-व्यवस्था (Sub-system) है इसकी सामाजिक व्यवस्था के साथ अन्तः क्रिया होती रहती है। सामाजिक व्यवस्था लोक प्रशासन को प्रभावित करती है तथा प्रशासन इसे प्रभावित करता है। प्रशासन का आकार एवं स्वरूप इसके चहुँ ओर विद्यमान वातावरण पर निर्भर है तथा सामाजिक व्यवस्था प्रशासन पर निर्भर है। "नवाचार उद्यमिता का विशिष्ट उपकरण है।" (Innovation is specific instrument of entrepreneurship) नवाचार एवं उद्यमी इन दोनों में गहन सम्बन्ध है। बिना नवाचार के उद्यमिता अधूरी है और बिना उद्यमी के नवाचार अधूरा है। आखिर वह उद्यमी ही है जो नवाचार को विकसित एवं लागू करता है। नवाचार और उद्यमी दोनों नवाचार + उद्यमी का योग है।

5-7-सूचक शब्द (Key Words)

(i) **पारिस्थितिकी-**जीवविज्ञान व भूगोल की एक शाखा है जिसमें जीव समुदायों का उसके वातावरण के साथ पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करतें हैं।

(ii) **नवाचार-** नवाचार (नव+आचार) का अर्थ किसी उत्पाद, प्रक्रिया या सेवा में थोडा या बहुत बडा परिवर्तन लाने से है। नवाचार के अन्तर्गत कुछ नया और उपयोगी तरीका अपनाया जाता है, जैसे- नयी विधि, नयी तकनीक, नयी कार्य-पद्धति, नयी सेवा, नया उत्पाद आदि।

(iii) **सृजनात्मकता-** सर्जनात्मकता अथवा रचनात्मकता किसी वस्तु, विचार, कला, साहित्य से संबद्ध किसी समस्या का समाधान निकालने आदि के क्षेत्र में कुछ नया रचने, आविष्कृत

करने या पुनर्सृजित करने की प्रक्रिया है। यह एक मानसिक संक्रिया है जो भौतिक परिवर्तनों को जन्म देती है।

5-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

(i) पारिस्थितिकी उपागम का विस्तार से वर्णन कीजिए ।

(ii) पारिस्थितिकी उपागम के संदर्भ में एफ.डब्ल्यू. रिग्स के विचारो का वर्णन कीजिए ।

(iii) नवाचार एवं उद्यमी के के सम्बन्ध में पीटर एफ. ड्रूकर के विचारो का वर्णन कीजिए ।

(iv) उद्यमिता का अर्थ ,परिभाषा,अवधारणाएँ,विषेषताएँ व आवश्यकता का वर्णन कीजिए ।

5-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) फ्रेड रिग्स

(ii) साल प्रारूप" का नाम दिया

(iii)पीटर एफ. ड्रूकर (Peter F. Drucker)

(iv)पीटर एफ. ड्रूकर (Peter F. Drucker)

(v) "क्लैक्ट"

5-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा,डॉ हरी चंद्र शर्मा ,त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन ,साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) विष्णु भगवान, विद्याभूषण लोक के प्रशाशन सिद्धांत एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 6	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
निर्णय लेने के मॉडल (मार्च और ऑलसेन और रिचर्ड थेलर) Decision Making Models (March and Olsen and Richard Thaler)	

अध्याय की संरचना-

6-1अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

6-2-परिचय (Introduction)

6-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

6-3-1-निर्णय-निर्माण का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of decision making)

6-3-2-निर्णयों के प्रारूप (Types of Decisions)

6-3-3-निर्णय-निर्माण प्रक्रिया (Decision Making Process)

6-3-4-निर्णय-निर्माण का आधार या कारक (Bases or Factors of Decision Making)

6-4- **पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)**

6-4-3-निर्णय-निर्माण के मॉडल (Decision-Making Models)

6-4-3-1साईमन का सीमित तार्किकता मॉडल

6-4-3-2-लिंडब्लाम का वृद्धिशील मॉडल-

6-4-3-3-एटजियोनी का मिश्रित अवलोकन मॉडल

6-4-3-4 ड्रॉर का ईष्टतम मॉडल

6-4-3-5-कोहेन, मार्श तथा ऑल्सनः निर्वत्य डिब्बा मॉडल

6-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

6-6-सारांश (Summary)

6-7-सूचक शब्द (Key Words)

6-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

6-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

6-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

6-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

(i) निर्णय-निर्माण प्रक्रिया से अवगत करवाना।

(ii) निर्णयके प्रकार,स्वरूप से अवगत करवाना।

(iii) निर्णय-निर्माण के विभिन्न प्रतिमानों से अवगत करवाना।

6-2-परिचय (Introduction)

निर्णय-निर्माण किसी भी संगठन में एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया मानी जाती है। किसी संगठन की प्रकृति का निर्धारण उसमें लिए गए निर्णयों द्वारा होता है, यह सरकारी संगठन के लिए भी लागू होता है। अतः लोक प्रशासन के विषय में भी, निर्णय-निर्माण दृष्टिकोण या पद्धति काफी तर्क संगत या प्रासंगिक है, क्योंकि यह पद्धति ऐसी इष्टतम सुझाव प्रदान करती है, जो प्रशासनिक या नीतिगत निर्णय-निर्माण को सुगम बनाते हैं।

वेबस्टर (Webster) शब्दकोष के अनुसार, निर्णय किसी एक राय या क्रिया मार्ग के बारे में स्वयं के मस्तिष्क में निश्चय करने का कार्य है। निर्णय-निर्माण, इस प्रकार विभिन्न विकल्पों की छानबीन या जाँच पड़ताल के बाद सर्वोत्कृष्ट समाधान पर पहुँचने की प्रक्रिया के बारे में है। लोक प्रशासन तथा प्रबंध के विद्वान निर्णय निर्माण में संलग्न रहे हैं। उन्होंने निर्णय निर्माण के दृष्टिकोण में अपना-अपना योगदान किया है।

6-3-1 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

6-3-1-निर्णय-निर्माण का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of decision making)

निर्णय-निर्माण की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग रूप में दी है, सामान्यतः निर्णय निर्माण किसी कार्यकलाप का अंतिम भाग नहीं है, अपितु संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति का एक मार्ग या साधन है।

चेस्टर बनार्ड के अनुसार-निर्णय-निर्माण संगठनात्मक कार्यवाही की एक आवश्यक प्रक्रिया है।

फैलिक्स ए. नीगरो (Felix A. Negro) के अनुसार- "संगठन में वास्तव में क्या होता है, उस समय तक नहीं समझा जा सकता है, जब तक कि व्यक्ति को यह पता न हो कि किस प्रकार के निर्णय लिए जाते हैं, और उनके निर्माण में किस-किस की भागीदारी होती है। जिसका उद्देश्य समस्या का समाधान करना होता है।

राबॅट तानेनबॉम (Robert Tannenbaum) के अनुसार- निर्णय-निर्माण का संबंध दो या अधिक व्यवहार विकल्पों में से एक व्यवहार विकल्प का जानबूझकर किये जाने वाले चयन से होता है"

वास्बी के अनुसार- "निर्णय निर्माण की परिभाषा क्रियाकलापों की उस प्रक्रिया (Sequence) के रूप में दी जाती है, जो समस्या की पहचान, सूचना की खोज, विकल्पों की परिभाषा तथा श्रेणीबद्ध वरीयताओं के अनुसार दो या अधिक विकल्पों में एक विकल्प को एक कर्ता द्वारा चयन के स्तरों से संलग्न होती है""

हरबर्ट साईमन के अनुसार- "निर्णय-निर्धारण या निर्माण प्रशासन का हृदय है, और प्रशासनिक सिद्धांत की (Vocabulary) शब्दकोष मानवचयन के मनोविज्ञान तथा तर्कशास्त्र से लिया जाना चाहिए,निर्णय निर्माण प्रशासनिक कार्य का मूल या केन्द्र है तथा संगठन को वे निर्णय-निर्माण की संरचना या ढांचे के रूप में देखते हैं।

सैकलर हडसन (Seckler Hudson,) के अनुसार, सरकार में निर्णय निर्माण एक बहुल गतिविधि या क्रिया है । यद्यपि निर्णय की घोषणा एक व्यक्ति के द्वारा हो सकती है, लेकिन उस निर्णय तक पहुचने की प्रक्रिया में अनेक लोगों का योगदान होता है। वह राजनीति व्यवस्था का भाग है"

सप्रू के अनुसार, नीति निर्माण में निर्णय-निर्माण शामिल है, लेकिन एक निर्णय आवश्यक रूप से एक नीति का हिस्सा नहीं होता। निर्णय-निर्माण के प्रायः समस्या की पहचान की

जाती है, व उसमें संभावित विकल्पों का सावधानी पूर्वक विश्लेषण तथा कार्यवाही के लिए एक विकल्प का चयन शामिल होता है।

टैरी (Terry) के अनुसार-एक निर्णय प्रायः नीति के द्वारा स्थापित मार्गदर्षिकाओं के भीतर लिया जाता है। एक नीति अपेक्षाकृत (Relatively) व्यापक होती है, अनेकों समस्याओं को प्रभावित करती है, तथा उसका प्रयोग बार-बार किया जाता है। इसके विपरीत, एक निर्णय का प्रयोग किसी विशेष समस्या के संदर्भ में किया जाता है, तथा उसके प्रयोग का रूप निरंतरता वाला नहीं होता है। निर्णय निर्माण संगठन के वातावरण को बदलने की क्षमता रखने वाली गतिशील (Dynamic) व्यवस्था है।

6-3-2-निर्णयों के प्रारूप (Types of Decisions)

विद्वानों ने निर्णयों को कुछ रूपों में वर्गीकृत किया है

- **योजनाबद्ध तथा गैर-योजनाबद्ध निर्णय**

हरबर्ट साईमन (1997) ने योजनाबद्ध व गैर-योजनाबद्ध निर्णयों में भेद स्थापित किया है। उनके अनुसार कार्यात्मक या योजनाबद्ध निर्णय दिन-प्रतिदिन के होते हैं, जिन्हें सम्पादित करने के लिए पुनरावृति होती रहती है तथा जिनके लिए एक निश्चित कार्यक्रम या प्रक्रिया निर्धारित की जाती है, ताकि प्रत्येक बार उन्हें नये सिरे से शुरू करने की आवश्यकता उनकी उपस्थिति होने पर न हो।

कार्यात्मक निर्णयों में समस्या के बारे में आदतों, कौशल तथा ज्ञान महत्वपूर्ण है। ऐसे निर्णय में, गणितीय प्रारूप तथा संगणक निर्णय निर्माता को तार्किक निर्णयों तक पहुँचने में सहायता कर सकते हैं। उदाहरण के लिए एक संगठन के लिए वित्तीय नियमों मानव संसाधन आदि एक सामान्य या दिन-प्रतिदिन के क्रियाकलाप है, जो एक संगठन में घटित होते रहते हैं। यदि इन सब से निपटने के लिए एक निश्चित प्रक्रिया निर्धारित कर दी जाती,तब संगठक

तथा स्थित प्रक्रियाओं को सहायता से वेतन निधि, कर्मचारी की उपस्थिति आदि को आसानी से निर्णीत किया जा सकता है। दूसरी तरफ, अकार्यात्मक या गैर-योजनाबद्ध निर्णय उन मामलों को निपाटने हेतु लिए जाते हैं जो नवीन असंचरित / असंगठित तथा असाधारण परिणाम वाले होते हैं। कोई करो या डूबो (Cut and Tried) पद्धति पहले से उपस्थित या प्राप्त नहीं होती तथा प्रत्येक प्रश्न का निपटारा अलग- अलग रूप से किया जाता है। उपयुक्त एवं प्रासंगिक निर्णय लेने के लिए क्षमता विकसित करने के उद्देश्य से भावनाए योग्यता तथा कार्य के लिए उपयुक्त कौशलों में प्रशिक्षण महत्वपूर्ण तथा प्रासंगिक बन जाते हैं। उदाहरण के लिए सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन के कारण संगठन में वित्तीय संकट उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार के मुद्दे एक संगठन के लिए नई चुनौतियाँ होती हैं और संगठन के कल्याणहित की रक्षा के लिए निर्णय तक पहुँचने के लिए एक नवीन सोच की आवश्यकता होती है।

- **संगठनात्मक तथा व्यक्तिगत निर्णय**

चैस्टर बर्नाड निर्णयों को संगठनात्मक तथा व्यक्तिगत निर्णयों में वर्गीकृत करता है। उनका कहना है कि व्यक्तिगत निर्णयों को सामान्यतः दूसरों को नहीं सौपा जा सकता है, जब कि संगठनात्मक निर्णय यदि सदैव नहीं तो, प्रायः प्रदत्त किए जा सकते हैं। संगठनात्मक निर्णक संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं, जिन्हें ऊपर से नीचे के स्तरों तक प्रदत्त किया जा सकता है, जब कि व्यक्तिगत या एकाकी निर्णय एक व्यक्ति द्वारा उसके लिए निर्मित किए जाते हैं, जो संगठनों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं कर सकते।

- **सामान्य तथा विशेष निर्णय**

सामान्य तथा विशेष निर्णयों का वर्गीकरण पीटर ड्रकर ने अपने लेख "The Effective Decision" (1967) में किया था। सामान्य निर्णय कार्यात्मक निर्णयों की तरह होते हैं,

जिनमें भूतकालीन परिस्थितियों या स्थितियों पर विचार किया जाता है, तथा पूर्ण में लिए निर्णय की पुनरावृति कर दी जाती है, उसी प्रकार, विशेष निर्णय अकार्यात्मक निर्णयों से संबंधित हैं, जिनमें नये निर्णय एकाकी रूप से समस्या के समाधन के लिए बनाए जाते हैं जिनका पूर्व में कोई दृष्टान्त नहीं होता है।

- **सामान्य तथा सामरिक निर्णय**

सामान्य तथा सामरिक निर्णयों को कार्यात्मक तथा अकार्यात्मक या सामान्य तथा विशेष निर्णयों के साथ क्रमशः जोड़ा जा सकता है। सामान्य निर्णय संगठक के दिन प्रतिदिन संचालक के लिए प्रायः लिए जाते हैं, तथा सामान्य निर्णय संगठन पूर्ण स्थित नियमों, प्रक्रियाओं तथा नीतियों के आधार पर लिये जाते हैं। ऐसे निर्णय प्रकृति से गतिमान नहीं होते तथा यह संगठन को प्रभावित नहीं कर सकते, क्योंकि ये निर्णय प्रकृति नियमित होते हैं, इसलिए निर्णयन की शक्ति यद्य तथा निम्न स्तरीय कर्मचारियों या कार्मिको को प्रदत्त कर दी जाती है। दूसरी तरफ सामरिक निर्णय संगठन के लिए अति महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि ऐसे निर्णयों का संबंध संगठनात्मक लक्ष्यों, उद्देश्यों, बजट तथा वांछित नीतिगत मसलों के साथ होता है। निर्णय असमान्य या पुनरावृति-रहित प्रकृति का होता है, तथा इसका निर्णय विभिन्न विकल्पों के विश्लेषण के माध्यम से हो सकता है। क्योंकि इस प्रकार का निर्णय संगठन की सतता या सब्धता को सीधे रूप में प्रभावित कर सकता है, इसलिए ये निर्णय उच्च स्तरीय प्रबंधकों द्वारा ही लिए जाते हैं।

- **नीति तथा संचलित निर्णय**

एक अन्य वर्गीकरण नीतिगत निर्णयों का तथा संचलित निर्णयों के रूप में किया जाता है। तथा निर्णयों के इस वर्गीकरण को भी सामरिक एवं सामान्य निर्णयों से जोड़ा जा सकता है। नीतिगत निर्णय संगठन के नीतिगत मुद्दों के साथ प्रत्यक्षतः जुड़े हैं और वे केवल उच्च प्रबंध

के द्वारा ही किए जाते हैं। इन निर्णयों का प्रभाव संगठन के संपूर्ण ढाँचे पर होगा। दूसरी ओर संचलित निर्णय संगठन के वे सामान्य या नियमित निर्णय होते हैं, जो संगठन के नीतिगत मुद्दों को कार्यान्वित करने के खातिर लिये जाते हैं। इस प्रकार का निर्णय संगठन के निम्न स्तरीय प्रबंध द्वारा किया जाता है, तथा इस प्रकार के निर्णयों को कार्यनीतिक या सामरिक निर्णय भी कहा जाता है।

6-3-3-निर्णय-निर्माण प्रक्रिया (Decision Making Process)

(i) समस्या का निर्धारण ।

(ii) समस्या की पृष्ठभूमि की सामान्य जानकारी और उसके बारे में विभिन्न उपागम जानना ।

(iii) जो कार्यवाही का सर्वश्रेष्ठ तरीका लगे, उसे बताना ।

(iv) साध्य और अस्थायी निर्णयों की पहचान करना ।

(v) अस्थायी निर्णयों का मूल्यांकन करना ।

(vi) निर्णय लेना और उसे लागू करना ।

(vi) निरंतर काम में जुटे रहना और अगर जरूरी हो, तो प्राप्त परिणामों के प्रकाश में निर्णय को संशोधित करना ।

6-3-4-निर्णय-निर्माण का आधार या कारक (Bases or Factors of Decision Making)

सेकलर-हडसन ने बारह ऐसे कारकों की सूची दी है जिन पर निर्णय-निर्माण में विचार किया जाता है:

- कानूनी सीमाएँ,
- बजट,

- लोकनीति,
- तथ्य,
- इतिहास,
- आंतरिक उत्साह,
- पूर्वानुमानित भविष्य,
- श्रेष्ठतर,
- दबाव समूह,
- स्टाफ,
- कार्यक्रम की प्रकृति और
- अधीनस्थ ।

6-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

6-4-1-निर्णय-निर्माण के मॉडल (Decision-Making Models)

निर्णय निर्माण के अनेक मॉडल या प्रारूप हैं; लगभग सभी प्रारूप संगठन में निर्णय लेने से संलग्न व्यक्ति पर संगठन की तार्किकता के महत्व को स्पष्ट करते हैं। अन्य प्रारूप एक क्रमिक रूप में निर्णय पर पहुँचने के महत्व पर बल देते हैं। निर्णय निर्माण के कुछ महत्वपूर्ण प्रारूप (Models) निम्न है:-

6-4-1-1-साईमन का सीमित तार्किकता मॉडल

हरबर्ट साईमन की पुस्तक "एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर" (Adninistrative Behaviour, 1957) निर्णय निर्माण के क्षेत्र में मौलिक कार्य है। उनका विश्वास था कि निर्णय-निर्माण में तार्किकता मॉडल अवास्तविक है तथा इसके सिद्धांत अप्राप्तनीय हैं । उनका संगठन का विचार आदर्श न होकर वास्तविक है । उन्होंने यह बल दिया कि निर्णय तार्किक चयनों पर

आधरित होना चाहिए। उनके अनुसार, "तार्किकता का संबंध आचरण के परिणामों की समीक्षा व योग्य मूल्यों की किसी व्यवस्था के संदर्भ में अकिंत विकल्पों के वरीयता युक्त आचरण के चयन से होता है। इसकी प्रथम शर्त है कि निर्णय निर्यातन को सभी आचरण के चयन से होता है। इसकी प्रथम शर्त है कि निर्णय निर्यातन को सभी उपलब्ध विकल्पों का ज्ञान होना चाहिए और द्वितीय निर्णय निर्मातन इनमें से प्रत्येक विकल्प किता को विभिन्न रूपों में वर्गीकृत का अनुमान लगाने में सक्षम होना चाहिए। यह तार्किकता को विभिन्न रूपों में वर्गीकृत करता है, जिसमें निर्णयः-

- निष्पक्ष रूप से तार्किक होना चाहिए: यह एक दी गई या वर्तमान स्थिति उपस्थित मूल्यों में अधिकतम वृद्धि करने के लिए सही आचरण होता है।
- व्यक्तिपरक (Subjectivity) तार्किकः एक निर्णय विषय के ज्ञान की तुलना में उपलब्धि को अधिकाधिक (Maximise) करता है।
- सचेत तार्किक (Consciously Rational): साधन तथा साध्य के बीच तालमेल एक जानबूझकर की जाने वाली प्रक्रिया होती है।
- सुविचारित (Deliberately) तार्किक: साधन और साध्य के बीच तालमेल पूर्ण से सोच समझ कर किया जाता है।
- संगठनात्मक रूप से (Organisationally) तार्किकः संगठनात्मक लक्ष्योन्मुख होता है।
- व्यक्तिगत रूप (Personally) से तार्किकः व्यक्तिगत उद्देश्यों की ओर निर्देशित होता है।

साईमन पूर्ण तार्किकता (आर्थिक व्यक्ति) अवधारणा को नकारते हैं, क्योंकि यह पूर्णतः अवास्तविक पूर्ण मान्यताओं पर आधारित है । साधारण शब्दों में एक व्यक्ति एक निर्णय पर पहुँचने के लिए प्रत्येक विकल्प को जानने के लिए एक मुद्दे के सभी पक्षों की पूर्ण जानकारी नहीं रख सकता है। इसके विपरीत पूर्ण तार्किकता इस विश्वास पर आधारित है कि

निर्णय निर्माता सर्वज्ञाता है तथा सभी उपलब्ध विकल्पों तथा उनके परिणामों का ज्ञान उन्हें प्राप्त है।

दूसरी मान्यता यह है कि निर्णय एक असीमित संगठकीय क्षमता रखता है । अंततः इसका विश्वास है कि निर्णय लेने वाला सभी संभावित परिणामों को व्यवस्था पूर्णक रखने में सक्षम होता है। ये मान्ताएं, साईमन कहते हैं. मूलतः गलत हैं, कौशल, आदतें, मूल्य तथा उदेश्य की अवधारणा तथा कार्य से जड़ी जानकारी की हद नामक अनेक सीमाएं निर्णय निर्माता की अवधारणा तथा कार्य से जुड़ी जानकारी की हद नामक अनेक सीमाएं निर्णय निर्माता के हाथ में नहीं होती हैं । इसलिए यह समझना आवश्यक है कि एक संगठन एक निर्णय लेने में पूर्ण तार्किक नहीं हो सकता और इस प्रकार एक व्यक्ति को पूर्ण तार्किकता के साथ काम करने में मनुष्य की सीमओं को स्वीकारना चाहिए, और इस प्रकार निर्णय संगठन के लोगों को सीमित तार्किकता पर आधारित होना चाहिए। सीमित तार्किकता की अवधारणा पर चर्चा करते समय, साईमन ने संतुष्टीकरण या लगभग संतोषजनक (Satisficing) की अवधारणा को भी विकसित किया। संतुष्टीकरण की अवधारणा संतुष्टी तथा पर्याप्रता नामक शब्दों से ली गई है। संतुष्टी वाला निर्णय समस्या के समाधानकर्ता को अपने मुख्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनुमति देता है, परन्तु प्रक्रिया सभी संभावानाओं के न्यायक विश्लेषण को सम्मिलित नहीं करती तथा पूर्ण सूचना को भी आवश्यक नहीं मानती है, क्योंकि पूर्ण तार्किकता अकल्पनीय है तथा कार्यपालिका सही चयन पर विकल्प से संतुष्ट हो जाती है। निर्णय निर्माता या तो अधिकता या सामान्यता अच्छे समाधानों पर पहुँचने का प्रयास करता है तथा सभी संभव विकल्पों की खोज करने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता है। संतुष्टीकरण निर्णयों तक जाने में सीमित तार्किकता के लिए निम्न कारक उत्तरदायी हैं:-

- संगठनात्मक उद्देश्यों या लक्ष्यों की गतिशील (Dynamic) प्रकृति |

- अपूर्ण सूचना और साथ ही उपलब्ध सूचना को संसाधित (Process) करने की सीमित क्षमता।
- समय तथा कीमत की सीमाएं।
- परिस्थितियों की शक्तियाँ या बाहरी कारक ।
- निर्णय निर्माता के लिए सभी संभव विकल्पों और उनके परिणामों के बारे में जानकारी न होना संभव है।
- पूर्व निर्धारित या पूर्व कल्पित (pre-conceived) मूल्य या नियम, आदतें आदि व्यक्तिगत कारक, तथा
- संगठनात्मक कारक जैसे प्रक्रियाएं, नियम, संचार के माध्यम आदि ।

6-4-1-2-लिंडब्लाम का वृद्धिशील मॉडल-

चार्ल्स ई. लिंडब्लॉम (Charles E. Lindblom) ने अपने लेख 'द साईंस ऑफ मडलिंग थ्रू (The Science of Muddling Through, 1959) निर्णयन के क्रमीय मॉडल की वकालत की है। क्रमीय मॉडल पूर्णतः आलोचनात्मक है तथा साईमन के तार्किक मॉडल के विपरित है। उसका तर्क है कि निर्णय निर्माण की वास्तविक प्रक्रिया सिद्धांतो से बिल्कुल भिन्न है। लिंडब्लॉम के अनुसार, निर्णय-निर्माण प्रक्रिया का संबंध वर्तमान स्थिति से एक के पश्चात् एक कदम तथा छोटे रूप से (Degree) निरंतर निर्माण (Build) करने से होता है।

लोक प्रशासन या नीति अध्ययनों के संदर्भ में क्रमिकवाद का अर्थ है वर्तमान कार्यक्रमों तथा नीतियों को अंश बदलाव के साथ लागू करना। लिंडब्लॉम आगे कहते हैं कि निर्णय-निर्माता भावी निर्णयों को लेने के लिए पुराने या भूतपूर्व क्रियाओं तथा अनुभवों का प्रयोग करते हैं। इसे ब्रांच तकनीक (Branch Technique). या निरंतर सीमित तुलनाओं का मॉडल या पदानुक्रम निर्णय-निर्माण मॉडल के नाम से भी जाना जाता है ।

वृद्धिशील (Incremental) मॉडल की विशेषताएँ

- क्रमीय मॉडल की निम्न विशेषताएँ है- यह एक एक कर क्रमीय या क्रमिक परिवर्तनों के आधार पर चलता है। नीति-निर्माता वर्तमान में उपस्थित नीतियों की वैधता को स्वीकार करते हैं, क्योंकि नयी नीतियों के परिणाम अनिश्चित होते हैं।
- इसमें आपसी तालमेल (Adjustment) एवं समझौता (Negotiation) होता है। एक अच्छे निर्णय का परीक्षम उद्देश्य प्राप्ति के स्थान पर सहमति होता है। नीति-निर्माण में सहमति आसानी से बन जाती है जब विवाद का मुद्दा बजट को बढा या घटा देता है, या उपस्थित या वर्तमान कार्यक्रमों में संशोधनों को बढाता या घटाता है। इस प्रकार क्रामिक या पदक्रमवाद राजनातिक तनाव का कम करने में महत्वपूर्ण होता है, तथा स्थायित्व बनाए रखता है।
- इसमें 'गलती करो और सीखो' (Trial and Error) पद्धति का अनुसरण किया जाता है। यह दैविक या मनुष्य की शक्ति से ऊपर व्यापकता के व्यर्थ प्रयास से अच्छा है। मनुष्य बहुत कम अपने सभी मूल्यों को उच्चतम सीमा तक ले जाने (Maximise) के लिए क्रिया करते हैं, अपितु निश्चित मांगों को पूरा करने के लिए व्यर्थ करते हैं। वे यदा-कदा ही एक सर्वोत्तम तरीके या पद्धति को खोज करते हैं, अपितु इसके स्थान परिणाम दें। ऐसे रास्ते की खोज करते हैं, जो कार्य करे या परिणाम दे । यह खोज प्रायः परिचित से प्रारंभ होती है ।
- नीति सदैव के लिए नहीं बनाई जाती है। जैसा कि जैन-एरिक-लेन (Jan-Erik-Lane) ने कहा है, इस प्रकार वृद्धिशील मॉडल की दृष्टि से अधिक संतोषप्रद है, क्योंकि अनुकूलतम / संबद्धता तथा सादगी जैसे मानदंडों पर उच्च अंक प्राप्त करता है। लिंडब्लॉम का तर्क है कि अनेक तथा विरोधी लक्ष्यों का निपटारा करने वाले विकल्पों के सरलीकरण के उद्देश्य से क्रमिक या पदक्रम मॉडल तार्किक मॉडल से अच्छा है और यह भी कहते हैं कि इस

मॉडल के भीतर निर्णय असली दुनिया को परछाई देने वाले या परावर्तक होते हैं। परन्तु दूसरे विद्वानों ने इस मॉडल की आलोचना आवश्यकता से अधिक सरलीकरण मॉडल के रूप में की हैं, क्योंकि यह केवल अविरल नीतियों तथा कार्यक्रमों के लिए कार्य करता है, परन्तु युद्ध जैसी परिस्थितियो के लिए नहीं ।

6-4-3-3-एटजियोनी का मिश्रित अवलोकन मॉडल

अमिताई एटजियोनी (Amitai Etzioni) ने अपने लेख "मिक्सड स्कैनिंगः ए थर्ड एप्रोच टू डिसीयन मैंकिंग" (Mixed Scanning: A Third Approach to Decision Making) में मिश्रित अवलोकन या मिक्स्ड स्कैनिंग मॉडल का प्रतिपादन किया है। एटजियोनी ने तार्किक एवं क्रमिक या पद्क्रम मॉडल, के कुछ पक्षों की आलोचना की और इस प्रकार मिश्रित अवलोकन मॉडल तार्किक तथा क्रमिक मॉडलों के कुछ तत्वों के मिश्रण का परिणाम है। यह आधारभूत दशाओं को स्थापित करने वाले उच्चस्तरीय, मौलिक नीति निर्माण प्रक्रियाओं की तार्किकता को क्रमिक या पदक्रमों के साथ, जो मौलिक निर्णयों के लिए तैयारी करते हैं तथा उनको प्राप्ति के बाद प्रयोग में लाते हैं, जोड़ते हैं। एटजियोंनी के अनुसार, "मिश्रित अवलोकन या मिक्स्ड स्कैनिंग निर्णयन के प्रति वह तार्किक दृष्टिकोण है, जिसमें निर्णय निर्माता को उपलब्ध अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। क्रमिक कार्यविधि, जो कर्त्ताओ की सीमित क्षमता को ध्यान में रखती है, एवं सामाजिक विचारों की अनदेखा करने वालो निर्णयों को प्रोत्साहित करती है। मिश्रित अवलोकन मूलभूत निर्णयो अपेक्षित (Details) को सीमित करके तर्कवाद के आवास्तविक पक्षों को कम करता है और दीर्घावधि विकल्पों की खोज करके क्रयिकवाद के परम्परावादी या दकियानूसी मुकाव वृद्धिवर्ता के ऊपर विजय प्राप्त करने में मदद करता है।

इस प्रकार एटजियॉनी ने कहा है कि मिश्रित अवलोकन मॉडल निर्णय निर्माण विधियों की वास्तविकता का एक वर्णन है तथा यह अच्छे निर्णय-निर्माण का भी एक मॉडल है। यह स्वीकारता है कि निर्णय निर्माताओं के लिए ज्ञान की कीमत को ध्यान में रखना होता है, क्योंकि प्रत्येक वस्त का अवलोकन नहीं किया जा सकता है।इसलिए एक नीति का निर्णय करते समय प्रमुख क्षेत्रों का पूर्णतः एवं तर्कवाद स्कैन करने का प्रयास होना चाहिए तथा अन्य क्षेत्रों को एक अधिक संक्षिप्त रूप में देखा जा सकता है।

6-4-3-4 ड्रॉर का ईष्टतम मॉडल

ड्रॉर (Dror) ने अपनी पुस्तक पब्लिक पॉलिसी मेकिंग रीविजिटेड" (Public Policy Making Revisited, 1989) में नीति निर्माण के अधिकता या इष्टतम मॉडल की वकालत की है। उन्होंने क्रमवादी दृष्टिकोण के विचार को नकारा तथा क्रमवादी एवं तर्कवादी मॉडलों के विकल्प सुझाये। ड्रॉर ने दावा किया है कि अधिकता मॉडल अन्य सभी वर्तमान मॉडलों से श्रेष्ठ है, जो कि आर्थिक रूप से तर्कयुक्त तथा अतिरिक्त तर्कसंगत मॉडल हैं। ईष्टतम लिखित विशेषताएं है (Incremental) मॉडल की निम्नलिखित विशेषताएं हैं:

- यह संस्थात्मक न होकर गुणात्मक है।
- इसके भीतर तार्किक व अतिरिक्त तर्कसंगत दोनों तत्व है।
- यह शून्यमूत तार्किक से आर्थिक तार्किक है
- यह मेटा (Meta) नीति-निर्माण से संबंधित हैं।
- इसमें काफी अन्तर्निहित प्रतिक्रिया या फीडबैक (Feedback) होते हैं।

ड्रॉर (1989) का मुख्य उद्देश्य सरकार के तर्क सामग्री में वृद्धि करना था तथा अपने मॉडल में निर्णय निर्माण के अतिरिक्त तर्कसंगत आयामों का निर्माण करना था, जिसे आदर्शवादी या निर्णयकारी आदर्शवादिता का नाम दिया गया है। उनका विश्वास था कि तर्कयुक्त मॉडल का

यह संशोधित रूप नीति-निर्माण को एक अधिक तर्कसंगत उन्मुख रूप की ओर ले जायेगा। इसके साथ उनकी मान्यता थी कि नीति विश्लेषण में व्यक्तिगत अनुभव तथा उपलक्षित ज्ञान पर आधारित तर्केत्तर समझा का क्षेत्र होता है।

इष्टतम मॉडल को तीन चरणों में विभाजित किया गया है, जो हैं

- मेटा नीति-निर्माण तथा उत्तर नीति-निर्माण। इन तीन चरणों में तर्क तथा अतिरिक्त तर्कसंगत पक्षों के 18 चरण शामिल है -

मेटा नीति निर्माण

मेटा नीति निर्माण (Meta Policy Making) वह चरण है, जो नीति बनने से भी पहले आता है। यह वह तैयारी करने का चरण है जिसमें नीति से सम्बद्ध अनेकों पक्षों को समझने के लिए कदम उठाए जाते हैं, तथा इसमें निम्नलिखित 7 चरण शामिल होते

- मूल्यों का मूल्यांकन करना ।
- वास्तविकता का मूल्यांकन करना ।
- समास्याओं का मूल्यांकन करना ।
- संसाधनों का सर्वेक्षण, आंकलन तथा विकास करना ।
- नीति-निर्माण प्रणाली को निर्मित करना, आंकलन करना तथा पुनः निर्मित करना ।
- समस्याओं, मूल्यों तथा संसाधनों का आबंटन करना ।
- नीति-निर्माण निधि निश्चित करना ।

नीति-निर्माण चरण

दूसरे चरण में नीति वास्तव में बनाई जाती है, जिसमें पुनः 7 चरण या स्तर संलग्न होते हैं। इस चरण में, उपस्थित नीति के अन्तर्गत विभिन्न प्रक्रियाओं के लिए संसाधनों का उप-

आंबटन किया जाता है, जिसमें नीति का वास्वतिक निर्माण, उद्देश्यों के निर्धारित करने से लेकर विभिन्न विकल्पों की कीमत एवं लाभो का विश्लेषण करना और इस प्रकार अंत में सर्वोत्तम विकल्प तक पहुँचना तक शामिल होता है।

इस चरण में विभिन्न स्तर निम्न है:

- संसाधनों का उप-आंबटन (Sub-allocating)
- वरीयता के आधार पर कार्यान्वयन या व्यवहारिक लक्ष्य तय करना ।
- कुछ महत्वपूर्ण मूल्यों को वरीयता क्रम में तय करना ।
- एक समूह कुछ अच्छी नीतियों को शामिल करते हुए मुख्य नीति-विकल्पों का एक समूह तैयार करना ।
- विभिन्न विकल्पों के महत्वपूर्ण लाभों तथा कीमतों की विश्वसनीय भविष्यवाणियां तैयार करना ।
- सर्वोत्तम विकल्पों के लाभों एवं लागतों की समीक्षा करना तथा यह निर्णय करना कि क्या वे अच्छे है या नहीं ।

उत्तर-नीति-निर्माण चरण

यह अंतिम चरण होता है, जिसमें विभिन्न नीति का प्रचार किया जाता है और इसमें भी अनेक स्तर या चरण सम्मिलित होते हैं जैसे:

नीति के कार्यान्वयन के रूप का निर्णय करना कार्यान्वयन की वास्तविक प्रक्रिया कार्यान्वयन पश्चात के प्रभावों की समीक्षा करना तथा अंत की नीतियों को सुदृढ़ करने में प्रायः प्रतिक्रिया पर विचार करते हुए सुधारात्मक कदम उठाना।

तृतीय चरण में सम्मिलित स्तर निम्न हैं:

- व्यवहारात्मक प्रणाली व सामाजिक-मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य
- नीति कार्यान्वयन को उत्प्रेरण देना ।
- नीति को क्रियान्वित करना।
- नीति कार्यान्वयन के नीति-निर्माण की समीक्षा करना।
- सभी चरणों को अंतरबद्ध करने वाले संप्रेषण तथा फीडबैक माध्यम ।

नीति-निर्माण के ड्रॉर मॉडल का सबसे अच्छा उदाहरण 'नई शिक्षा नीति' (New Education Policy) को दिया जा सकता है, जिसका निर्माण 2015 से हो रहा है। नीति-निर्माण करने से पूर्व, मेटा नीति-निर्माण स्तर में अनेकों प्रक्रियाएं सम्मिलित की जिसमें विभिन्न समूहों, शिक्षाविदों, गैर-सरकारी संगठनों, सक्रिय प्रतिभागी (Activists) तथा सामान्यजनों आदि से विभिन्न सलाहें एवं अलग-अलग सुझाव लिए गए, जिससे नई शिक्षा नीति के लिए क्या आवश्यक है पर उनके विचार लिए गए। इसमें अनेकों चरम शामिल थे। नीति-निर्माण के दूसरे चरण में शिक्षा नीति की प्रमुख समिति ने शिक्षा नीति का मसौदा तैयार किया। वर्तमान में शिक्षा नीति अपने अंतिम चरण में है, जिसमें शिक्षा नीति के मसौदे सार्वजनिक किये गये, जिस पर नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों ही रूप से प्रतिक्रियायें प्राप्त हुई। वर्तमान में इसे अंतिम रूप देने के लिए जनता से प्राप्त प्रतिक्रिया पर काम किया जा रहा है। ड्रोर के उपरोक्त वर्णित 18 चरण तार्किक कारकों के साथ, अतिरिक्त तर्कसंगत मॉडल के केन्द्रीय अवयनों का मिश्रण है। इस प्रकार ड्रोर का निर्णयन संबंधी दृष्टिकोण सरकार की तार्किक सामग्री में सुधार लाने का उपाय है।

6-4-3-5-कोहेन, मार्श तथा ऑल्सनः निर्वत्य डिब्बा मॉडल

माईकल कोहन, जेम्स मार्श तथा जॉन ऑलसन (Michael Kohen, James March and John Olsen, 1972) द्वारा प्रतिपादित निर्वत्य डिब्बा या कैन (Garbage Can) मॉडल

संगठनात्मक निर्णयन पर ध्यान केन्द्रित करता है, यह दृष्टिकोण संस्थागत व्यवहार को 'संगठित अराजकताओं' का नाम देता है। इसे दृष्टिकोण वास्तविक समझा जाता है, क्योंकि यह अनुप्रियाशीलना असक्रिय निर्णयों के स्थान पर प्रतिक्रियात्मक निर्णयों को उत्पन्न करने में सक्षम हैं। इसको निर्णयन के तार्किक, व्यापाक तथा क्रमिकवादी मॉडलों से उधार लिया गया था। निर्वत्य डिब्बा या गार्बेज कैन मॉडल के अनुसार एक संगठन विकल्पों (Choices) का संग्रह है, जिसे समस्याओं, मुद्दों तथा भावनाओं की तलाश है, उन निर्णय स्थितियों की खोज है, जिनमें उन्हें उठाया जा सके, ऐसे समाधान जो ऐसे मुद्दों की तलाश करता है,

जिनका वे संमानित उत्तर हो तथा काम की तलाश में निर्णय निर्माता हों। समस्याएं, समाधान, निर्णय-भागीदार तथा विकल्प के अवसर इस मॉडल की प्रमुख धाराएं (Streams) हैं, जिसमें विकल्प-अवसरों को निर्वत्य डिब्बा कहा गया है। यह मॉडल निर्णयन को समस्या से प्रारंभ तथा एक समाधान के अंत होने वाले क्रियाओं की लड़ी के रूप में नहीं देखता है।

गारबेज कैन (निर्वत्य डिब्बा) मॉडल में समस्याएं, समाधान तथा भागीदार नामक तीन धाराएँ (Streams) है, तथा इस मॉडल में समस्याओं की खोज में लगे समाधान हैं, तथा इन समास्याओं तथा समाधानों को एक साथ लाने में भागीदारी के एक माध्यम या रास्ते की खोज में इधर-उधर घूमते भागीदार होते हैं। इस प्रकार इस मॉडल में सभी धाराएँ (Streams) उदाहरण के लिए समस्याएं, समाधान तथा भागीदार एक साथ घुले होते हैं। समस्याओं की पहचान करने के स्थान पर ये भागीदार यह निर्णय कर सकते हैं कि किन समास्याओं का समाधान करना है, और कौन से समाधानों के चयन का निर्णय करना है। लेकिन इस मॉडल की आलोचना यह कहकर की गई कि यह निर्णयन का अतार्किक (Irrational) मॉडल है।

6-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

I. गार्बेज कैन निर्णय-निर्माण मॉडल किसने दिया।

II. मिश्रित अवलोकन या मिक्स्ड स्कैनिंग मॉडल का प्रतिपादन किसने किया।

III. “निर्णय-निर्धारण या निर्माण प्रशासन का हृदय है,” किसने कहा था ।

IV. लेख "The Effective Decision" (1967) किसने लिखा था।

V. मेटा नीति निर्माण में कितने चरण होते हैं।

6-6-सारांश (Summary)

दो या अधिक संभाव्य विकल्पों में से एक व्यवहार विकल्प को चुनने” के रूप में परिभाषित करते हैं । इस तरह, निर्णय-निर्माण का अर्थ है- तमाम विकल्पों में से एक विकल्प चुनाव । यह प्रकृति से मूलत: समस्या का समाधान करने वाला है । निर्णय-निर्माण, नीति-निर्माण से काफी निकटता से जुड़ा है, मगर व एक नहीं है ।निर्णय-निर्माण के चरणों (i) समस्या का निर्धारण ,(ii) समस्या की पृष्ठभूमि की सामान्य जानकारी और उसके बारे में विभिन्न उपागम जानना ,जो कार्यवाही का सर्वश्रेष्ठ तरीका लगे, उसे बताना ,(iv) साध्य और अस्थायी निर्णयों की पहचान करना,(v) अस्थायी निर्णयों का मूल्यांकन करना ,(vi) निर्णय लेना और उसे लागू करना ,(vii) निरंतर काम में जुटे रहना और अगर जरूरी हो, तो प्राप्त परिणामों के प्रकाश में निर्णय को संशोधित करना , आते हैं। निर्णय-निर्माण के साइमन का परिसीमित तार्किकता मॉडल; लिंडब्लूम का वृद्धिशील मॉडल; एत्जीऑनी का मिश्रित स्कैनिंग मॉडल और ड्रॉर का ऑप्टिमल मॉडल , कोहेन, मार्श तथा ऑल्सनः निर्वत्य डिब्बा मॉडल **,**मॉडल हैं।

6-7-सूचक शब्द (Key Words)

I. **निर्णय-**औचित्य और अनौचित्य आदि का विचार करके किसी विषय के दो पक्षों में से एक पक्ष को ठीक ठहराना

II. **अवलोकन-** अवलोकन शब्द अंग्रेजी के 'observation' शब्द का हिंदी रूपान्तरण है, जिसका अर्थ है 'देखना', 'प्रेक्षण' और ' अवलोकन करना'। दूसरे शब्दों में, कार्य-कारण या पारस्परिक संबंधों को जानने के लिए प्राकृतिक रूप से होने वाली घटनाओं को बारीकी से देखना अवलोकन है।

III. **वृद्धिशील** -वृद्धिशील का उपयोग किसी ऐसी चीज का वर्णन करने के लिए किया जाता है जो मूल्य या मूल्य में वृद्धि करता है।

6-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

I. निर्णय-निर्माण प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

II. निर्णयके प्रकार,स्वरूप का वर्णन कीजिए।

III. निर्णय-निर्माण के विभिन्न प्रतिमानों का वर्णन कीजिए।

6-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

I. मार्श तथा ऑल्सन
II. अमिताई एटजियोनी
III. हरबर्ट साईमन के अनुसार
IV. पीटर ड्रकर ने
V. 07

6-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा,डॉ हरी चंद्र शर्मा ,त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv)डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन ,साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) विष्णु भगवान, विद्याभूषण लोक के प्रशाशन सिद्धांत एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi)डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

Subject: Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 7	Updated By: Dr. Shakuntla Devi
नारीवाद Feminism	

अध्याय की संरचना-

7-1-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

7-2-परिचय (Introduction)

7-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

7-3-1 नारीवाद का अर्थ (Meaning of feminism)

7-3-2-नारीवाद की विशेषताएँ या लक्षण (features or characteristics of feminism)

7-3-3-नारीवाद के प्रकार (Types of Feminism)

7-3-4-नारीवाद का विकास (Development of Feminism): -

7-4- **पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)**

7-4-3-भारत में नारीवाद (Feminism in India)

7-4-2-चुनौतियाँ (Challenges)

7-4-7-नारीवाद के प्रभाव (Effects of Feminism)

7-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

7-6-सारांश (Summary)

7-7-सूचक शब्द (Key Words)

7-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

7-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

7-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

7-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

i. लैंगिक असमानता की प्रकृति एवं कारणों से अवगत करवाना ।

ii. नारीवाद के कारणों, विकास से अवगत करवाना।

iii. महिलाओं के लिए पुरुषों के समान शैक्षिक और पेशेवर अवसर की आवश्यकता से अवगत करवाना।

iv. नारीवादी सिद्धांतो का उद्देश्य, लैंगिक असमानता की प्रकृति एवं कारणों से अवगत करवाना ।

7-2-परिचय (Introduction)

नारीवाद Feminism एक ऐसी विचारधारा या सोच हैं जो नारी के अधिकारों और न्याय की बात करती हैं। ऐसी विचारधारा जो नारी और पुरुष को समान दृष्टि और समान अधिकार देने की बात करती है नारीवाद विचारधारा कहलाती है। इस विचारधारा के समर्थक मानते हैं कि नारी को भी पुरुषों के समान अधिकार मिलने चाहिए और नारी पर हो रहे अत्याचारों को दमन करने हेतु नारियों को स्वतंत्रता एवं व्यवसाय के समान अवसर प्रदान करने चाहिए। नारीवाद विचारधारा को प्रतिपादित करने का प्रथम श्रेय ब्रिटिश की महिला मेरी वोल स्टोनक्राफ्ट (M.Woll Stoncraft) को दिया जाता हैं। इन्होंने अपनी पुस्तक (Vendication of the Right of Women) में नारियों के अधिकार की बात कही थी जो वर्ष 1978 में प्रकाशित हुई थी। इसके पश्चात नारीवाद Feminism की विचाधारा का विकास करने का उत्तरदायित्व J.S Mill ने उठाया। इन्होंने अपनी पुस्तक (Subjection of Women) में नारीवाद की विचारधारा को पूर्ण रूप से विकसित करने का कार्य किया, जो वर्ष 1869 में प्रकाशित हुई। J.S Mill ने इस पुस्तक में नारी और पुरुष के समान अधिकारों की बात कही। इस पुस्तक के माध्यम से इन्होंने माना कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे के सहचर है एवं कोई किसी पर प्रभुत्व स्थापित करने की बात नही कर सकता। इस पुस्तक के माध्यम से J.S Mill नारी के मताधिकार का समर्थन किया था और कहा कि नारी को भी पुरुष के समान

अधिकार प्राप्त होने चाहिए। नारीवाद के समर्थक साइमन डी. बिवेयर ने अपनी पुस्तक (Second Sex) में नारियों की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा कि स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि उसे बना दिया जाता हैं। इस पुस्तक के माध्यम से इन्होंने नारी को आत्मनिर्भर बनाने की भी बात कहीं थी। नारीवाद महिलाओं के विकास की बात करने वाली विचारधारा हैं जो सदैव महिला_सशक्तिकरण की बात करते आई है। वर्तमान समय मे नारियों पर हो रहे अत्याचारों और शोषण को देखते हुए यह आवश्यक हैं कि प्रत्येक स्थिति चाहें वह पढ़ी लिखी हो या पढ़ी लिखी नहीं हो, चाहें वह गरीब हो या अमीर उसे आत्मनिर्भर होना अनिवार्य हैं। तभी नारियों का अस्तित्व एवं उनकी स्थिति को सुधारा जा सकता हैं। इसी के साथ अनेकों नारीवादी विचारकों ने हमेशा नारी के विचारों एवं अधिकारो का समर्थन किया हैं।

7-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

7-3-1-नारीवाद का अर्थ (Meaning of feminism)

नारीवाद शब्द का प्रयोग सामान्यतया उस विचारधारा और आन्दोलन के लिये किया जाता है जिसका उद्देश्य सदियों से चले आ रहे पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं को मुक्ति दिलाना है। नारीवाद एक ऐसा विश्वव्यापी आन्दोलन है जो समकालीन में नारी की अधीनस्थ और अवपीड़ित स्थिति को समाप्त करके उन्हें पुरुष के समकक्ष स्थान दिलाने का आकाँक्षी है। नारीवादी अवधारणा का आरंभ इस विश्वास के साथ होता है कि स्त्रियां पुरुषों की तुलना में अलाभ और हीनता की स्थिति में हैं। नारीवादी विचारधारा मुख्य रूप से स्त्री-पुरुष भेदभाव से जुड़ी है तथा यह स्त्रियों की भूमिका और अधिकारों से संबंधित है। यह अवधारणा स्त्रियों की पराधीनता और उनके प्रति होने वाले अन्याय पर ध्यान केंद्रित करते हुए इनके प्रतिकार के उपायों पर विचार करती है। नारीवाद स्त्री-पुरुष भेदभाव की पड़ताल के लिए मुख्य रूप से 'सेक्स' और 'जेंडर' को आधार बनाता है। नारीवादियों का मानना है कि सेक्स एक 'जीव

वैज्ञानिक तथ्य' है तथा जेंडर एक 'समाजवैज्ञानिक तथ्य' । नारीवादियों का मानना है कि प्रकृति ने स्त्री और पुरुष की शारीरिक बनावट में जो अंतर स्थापित किया है उसी को सामाजिक स्थिति का आधार बना लिया गया जो कि तर्कसंगत नहीं है। प्राचीन काल से ही स्त्रियों को सामाजिक जीवन में उपयुक्त मान्यता नहीं दी गई और उन्हें हीन स्थिति में रखा गया। नारीवादी विचारक जैविक-निर्धारणवाद(Biological determinism) के विचार को खारिज करते हुए बताते हैं कि पुरुष और स्त्री की भिन्न छवि उनके जीव वैज्ञानिक अंतर पर आधारित नहीं है बल्कि यह हमारी संस्कृति की देन है। यह अधीनता सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों, विचारधाराओं और संस्थाओं की उपज है जो महिलाओं की भौतिक और विचारधारात्मक अधीनता यानी जेंडर के प्रभुत्व को सुनिश्चित करती है। ये मान्यताएं सामाजिक जीवन में स्त्री के संपूर्ण जीवन पर पुरुष के नियंत्रण को बढ़ावा देती हैं जिससे पितृसत्ता स्थापित होती है और यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था ही स्त्रियों के शोषण का कारण है। इस प्रकार से नारीवादियों का मानना है कि स्त्रियों की हीन स्थिति का कारण कृत्रिम है और यह समाज द्वारा निर्मित है जिसे चुनौती दी जानी चाहिए।नारीवाद की अवधारणा का प्रयोग निम्नलिखित संदर्भो में किया जाता है-

i. यह एक सामाजिक राजनीतिक सिद्धान्त और व्यवहार है जो समस्त महिलाओं को पुरुषों के प्रभुत्व और शोषण से मुक्त कराने का आकाँक्षी है।
ii. यह एक विचारधारा है जो सभी नारी द्वेषी विचारधाराओं और व्यवहारों के विपरीत है।
iii. यह महिला की पुरुष के प्रति अधीनता और महिला के विश्वव्यापी उत्पीड़न की प्रकृति से सम्बन्धित एक दार्शनिक सिद्धान्त है।
iv. यह एक सामाजिक आन्दोलन है जिसका आधार स्त्री-पुरुष संघर्ष है।

7-3-2-नारीवाद की विशेषताएँ या लक्षण (Features or characteristics of feminism)

i. नारीवाद के प्रमुख लक्षण या विशेषताएँ निम्नलिखित हैं- नारीवाद मैरिज सिस्टम या विवाह संस्कार (एक स्त्री और एक पुरुष के बीच काम सम्बन्धों को मर्यादित करने की व्यवस्था) और परिवार संस्था का विरोधी नहीं है वरन् इस बात पर बल देता है कि परिवार का मूल आधार पुरुष के प्रति स्त्री का समर्पण नहीं वरन् पुरुष और स्त्री दोनों का एक-दूसरे के प्रति-समर्पण और पति-पत्नी के बीच समानता या स्त्री-पुरुष की समानता होनी चाहिए नारीवाद पुरुष को धिक्कारना नहीं है, पुरुष को अस्वीकार करना नहीं है पुरुष को केवल समानता, पूर्ण समानता के आधार पर स्वीकार करना है। नारीवाद विवाह विरोधी या परिवार विरोधी तो नहीं है, लेकिन इस बात पर अवश्यक ही बल देता है कि विवाह और परिवार नारी के लिए केवल उतनी ही सीमा तक आवश्यक है, जितना सीमा तक यह पुरुष के लिए आवश्यक है।

ii. नारीवाद इस बात पर बल देता है कि योग्यता और क्षमता की दृष्टि से, नारी किसी भी पुरुष से कम श्रेष्ठ नहीं है तथा उसे आवश्यक शिक्षा, ज्ञान और प्रशिक्षण प्राप्त कर प्रतियोगी जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समान स्तर पर कार्य करने का अधिकार होना चाहिए। वह पुरुष से प्रतियोगिता करने की क्षमता रखती है तथा उसे यह अधिकार प्राप्त है।

iii. नारीवाद इस बात पर बल देता है कि राजनीति में नारी को लगभग बराबरी की भागीदारी (कम से कम एक-तिहाई भागीदारी अवश्य ही) प्राप्त होनी चाहिए। महिलाएँ न केवल राजनीति में भाग लेने की योग्यता और क्षमता रखती है वरन् वे इस कार्य के लिए पुरुषों की तुलना में अधिक योग्य और सक्षम हैं। राजनीतिक क्षेत्र में श्रीमति गांधी, श्रीमती

भण्डारनायके, माग्रेट थैचर और गोल्डा मायर आदि महिलाओं ने जिस सुयोग्य नेतृत्व का परिचय दिया, उससे यह बात प्रमाणित हो जाती है।

iv. नारीवाद इस बात पर बल देता है कि यदि नारी को उत्थान और विकास कि दिशा में आगे बढ़ना है तो यह कार्य नारी एकता और संगठन तथा स्थानीय प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी-नारी सहयोग के आधार पर ही सम्भव है।

i. नारीवाद महिलाओं को समान सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकार और अवसर दिए जाने चाहिए। नारीवाद का उद्देश्य यह बिल्कुल नहीं है कि हमें किसी एक लिंग से सत्ता को छीनकर दूसरे लिंग को सौंप देनी चाहिए। नारीवाद का एक अर्थ यह भी है कि एक महिला जो करना चाहती है, जीवन में जो बनना चाहती है उसे वह सब करने की आज़ादी मिले।

ii. नारीवाद एक आंदोलन है स्त्री-द्वेष और महिलाओं के शोषण के खिलाफ।

iii. नारीवाद केवल महिलाओं के लिए समानता प्राप्त करने के विषय में नहीं है। नारीवाद सभी के लिए समानता चाहता है। यह सिर्फ एक लिंग तक सीमित नहीं है बल्कि यह सभी धर्मों, वर्गों, जातियों के लोगों के बीच भी समानता की मांग करता है।

iv. नारीवाद प्रत्येक व्यक्ति के लिए जीवन को स्वतंत्रता, समानता और गौरव के साथ जीने का अधिकार मांगता है।

v. **नारीवादी आंदोलन का** उद्देश्य पितृसत्ता को जड़ से समाप्त करना है क्योंकि पितृसत्ता से सिर्फ महिलाओं को ही नहीं बल्कि पुरुषों को भी नुकसान होता है।

vi. नारीवाद का उद्देश्य पितृसत्ता को समाप्त करना है। इसका उद्देश्य पितृसत्ता को खत्म करके **<u>मातृसत्ता स्थापित करना</u>** कतई नहीं है। इसका सीधा सा उद्देश्य है पुरुष और महिला दोनों के लिए समान अधिकार की वकालत करना।

vii. नारीवाद समानता पर ध्यान केंद्रित करता है न कि महिला श्रेष्ठता पर। नारीवाद यह बिल्कुल नहीं मानता कि महिला होना पुरुष होने की तुलना में महान या बेहतर है। नारीवाद का उद्देश्य पुरुषों को नीचा दिखाना उनको अनदेखा करना बिल्कुल नहीं है।

viii. समाज में महिलाओं की स्थिति के विशेष कारणों का पता लगाना और उनकी बेहतरी के लिए वैकल्पिक समाधान प्रस्तुत करना है।

ix. नारीवाद का उद्देश्य लैंगिक समानता प्राप्त करना है। नारीवादियों का तर्क है कि यह जरूरी नहीं कि पुरुषों और महिलाओं की जैविक संरचना और पुरुषत्व और नारीत्व की विशेषताओं में कोई सीधा जुड़ाव हो। बचपन में पालन-पोषण के समय से ही पुरुषों और महिलाओं के बीच कुछ खास तरह के अंतरों की नींव डालने की कोशिश की जाती है और उन्हें बरकरार रखा जाता है। नारीवाद का उद्देश्य लिंग आधारित इस भेदभाव को खत्म करना भी है।

x. कई लोगों का यह भी मानना है कि नारीवादी धर्म के खिलाफ होती हैं नारीवादी धर्म और संस्कृति के खिलाफ नहीं हैं, बशर्ते वह समानता की बात करता हो।

xi. कई लोगों का यह भी मानना है कि नारीवादी परिवारों को तोड़ती है। जबकि नारीवादी परिवारों को तोड़ना नहीं चाहते बल्कि वे परिवारों के बीच बराबरी का दर्ज़ा चाहते हैं।

xii. कई लोग यह भी का मानते हैं कि नारीवादी विचारधारा पाश्चात्य संस्कृति की उपज है। नारीवादी पश्चिम से आई विचारधारा नहीं है, बल्कि यह वह विचारधारा है जिसे समय-समय पर अलग-अलग वर्ग और समुदायों ने अपनाया है।

विभिन्न देशों के अधिकार पत्रों में नारी-पुरुषों के लिये समान अधिकार की बात कही गयी है। संयुक्त राष्ट्र शंघ द्वारा मानवीय अधिकारों का सार्वलौकिक घोषणापत्र स्वीकार किये हुए इतना अधिक समय व्यतीत हो चुका है लेकिन आज तक भी महिला वर्ग के हित और अधिकार सुरक्षित नहीं है। महिला वर्ग की इस गिरी हुई स्थिति के मूल कारण महिलाओं में शिक्षा का अभाव तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता का अभाव है। इसके अतिरिक्त महिलाओं की स्थिति में सुधार के मार्ग में एक प्रमुख बाधक तत्व है-सामाजिक कट्टरता, धार्मिक कट्टरता, और अन्धविश्वास।

7-3-3-नारीवाद के प्रकार (Types of Feminism)

नारीवादी आंदोलन के अंतर्गत अनेक प्रकार के विचार और कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए हैं। स्त्रियों की असमानता, दमन और अधीनता के कारणों, प्रकारों और समाधानों के बारे में नारीवादियों की अलग-अलग राय है। नारीवाद के निम्न प्रकार मने जातें हैं:-

i. **उदारवादी नारीवाद: -** उदार नारीवाद, नारीवाद से जुड़ी आरंभिक विचारधारा है जो उदारवाद से जुड़ी मान्यताओं के आधार पर स्त्रियों के अधिकारों की वकालत करती है। यह विचारधारा क्रांति के विपरीत क्रमिक और कानूनी सुधार का समर्थन करती है। इससे जुड़े विचारक सार्वजनिक क्षेत्र में समानता का समर्थन करते हैं। एक प्रकार से यह सुधारवादी आंदोलन है। मेरी वोल्स्टनक्राफ्ट, जे. एस. मिल, बेट्टी फ्रीडन, कैरोल पेटमैन प्रमुख उदारवादी नारीवादी विचारक हैं। 18 वीं शताब्दी के अंतिम दशक में मेरी वोल्स्टनक्राफ्ट ने अपनी चर्चित कृति 'विंडीकेशन ऑफ द राइट्स ऑफ वीमेन'(1792) में सामाजिक ढाँचे की आलोचना करते हुए कहा कि स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखा गया है और वे सार्वजनिक जीवन में भी अनुपस्थित हैं। अतः स्त्रियों को विवेकशील प्राणी मानते हुए स्त्री-पुरुष में बुनियादी समानता स्थापित करने की दिशा में प्रयास करना चाहिये।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जॉन स्टूअर्ट मिल ने अपनी रचना 'सब्जेक्शन ऑफ वीमेन' (1869) के अंतर्गत भी स्त्री अधिकारों का समर्थन किया। मिल ने कहा कि स्त्री-पुरुष का संबंध आधिपत्य के बजाय साहचर्य पर आधारित होना चाहिये। उसने स्त्रियों की शिक्षा, नागरिकता तथा संपत्ति में अधिकार की वकालत की। बेट्टी फ्रीडन जिन्हें 'महिला मुक्त की जन्मदाता' भी कहा जाता है ने अपनी रचना 'द फेमिनिन मिस्टीक'(1963) में कहा कि स्त्रियों को भी स्वायत्तता और आत्मनिर्णय का अधिकार मिलना चाहिये। इस सिद्धांत की काफी आलोचना भी की गई है जो निम्नलिखित है-

- यह सिद्धांत एक व्यक्तिवादी सिद्धांत है । अतः पितृसत्तात्मकता की आलोचना करने की वजह है, व्यक्ति बात पर ज्यादा बल देता है । इसका मुख्य उद्देश्य गौण हो जाता है ।
- व्यक्तिवाद आधार पर अधिक बल देने से सभी अधिकारियों हेतु एकजुट नहीं हो पाते। इससे सामूहिक कार्य विधि में बाधा आती है । जिसके कारण यह आंदोलन कमजोर हो जाता है ।
- यह सिद्धांत महिला पुरुष समानता में विश्वास करता है। इसके विरुद्ध आप एक आक्षेप लगाया जाता है कि यदि हम स्त्री पुरुष को समान देखते हैं, तो कहीं ना कहीं हम महिलाओं को पुरुष बनाना चाहते हैं, जो उचित नहीं है।

ii. **आमूलपरिवर्तनवादी नारीवाद:-** आमूल परिवर्तनवादी या उत्कट नारीवादी विचारधारा की शुरुआत मुख्य रूप से द्‌वितीय विश्व युद्ध के पश्चात हुई। यह विचारधारा सामाजिक व्यवस्था की यथास्थिति में आमूल परिवर्तन की मांग करती है। यह विचारधारा निजी जीवन में समानता की समर्थक है। इस धारा की प्रमुख विचारक सिमोन द बुआ, शुलामिथ फायरस्टोन, केट मिलेट, वर्जीनिया वूल्फ, एलस्टीन, आयरिश मेरियम यंग हैं। फ्रांसीसी नारीवादी लेखिका सिमोन द बुआ ने अपनी चर्चित कृति 'द सेकंड सेक्स' (1949) में कहा कि, "स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि उसे ऐसा बना दिया जाता है" ("A woman is not born but made") सिमोन ने कहा कि पुरुष प्रधान समाज में स्त्री को

'द्वितीय लिंग' का दर्जा दिया जाता है। वर्जीनिया वूल्फ ने महिलाओं की पराधीन स्थिति को देखते हुए कहा कि,"महिला होने के नाते मेरा कोई देश नहीं है।" फायरस्टोन ने अपनी चर्चित कृति 'डायलेक्टिक आफ सेक्स'(1970) के अंतर्गत नारीवाद की नई व्याख्या देकर इससे जुड़े आंदोलन को एक नई दिशा प्रदान की। उन्होंने तकनीकी के विकास को स्त्री मुक्ति का साधन बताया। केट मिलेट ने अपनी पुस्तक 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स'(1970) के अंतर्गत बताया कि नारीवाद को एक राजनीतिक आंदोलन का रूप देने की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि स्त्री-पुरुष का संबंध प्राकृतिक न होकर राजनीतिक है। उन्होंने कहा कि स्त्री पर पुरुष का जो नियंत्रण है वह जीव वैज्ञानिक अंतर की देन नहीं बल्कि सामाजिक संरचना का परिणाम है । केट मिलेट की उपर्युक्त पुस्तक अमेरिका में नारी मुक्ति आंदोलन को बढ़ावा देने में विशेष रूप से उपयोगी साबित हुई।

- पितृसत्तात्मकता के प्रभाव के कारण पुरुषों ने स्त्रियों को सभी क्षेत्रों में अपने अधीन बना लिया
- इन सभी विचारकों ने विवाह को अधीनता का प्रमुख कारण मानकर विवाह का ही विरोध किया
- महिलाओं की स्वतंत्रता के लिए पितृसत्तात्मक प्रणाली को नष्ट करना होगा । पितृसत्तात्मक प्रणाली का आधार परिवार है । अतः परिवार को नष्ट करना होगा ।
- फायर स्टोन का मानना है कि महिला तथा पुरुष में जैविक अंतर (बायोलॉजिकल डिफरेंसेस) हैं । यदि महिलाओं को बच्चे पैदा करने से मुक्त कर दिया जाए तो, उन पर से पुरुषों का वर्चस्व समाप्त हो जा सकेगा। महिलाओं की जनन क्षमता ही उनके अधीनता का मूल कारण हैं ।
- उग्रवादी नारी वादियो ने वूमेन बायोलॉजिकल टर्म के स्थान पर जेंडर कल्चरल धर्म का प्रयोग करने पर बल दिया है।

iii. **उत्तर नारीवाद (Post Feminism): -**उग्रवादी नारीवादियों ने ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें पुरुषों का कोई हस्तक्षेप ना हो । परंतु इससे स्थिति और भी खराब होने लगी। इसके कारण परिवार में बिखराव, तलाक, नशाखोरी तथा ड्रग्स आदि अपराधिक कार्य में वृद्धि हुई है। दोबारा से उन्हीं लेखकों तथा विचारकों ने जिन्होंने की रेडिकल नारीवाद का समर्थन किया था तथा उन्होंने ही परिवार का समर्थन करना प्रारंभ कर दिया। इसमें मुख्य रूप से बेट्टी फ्रीडन, जर्मेन ग्रीयर आदि हैं।

iv. **समाजवादी नारीवाद:-** समाजवादी नारीवादी विचारधारा समाजवाद से जुड़ी मान्यताओं को आधार बनाकर महिलाओं के उत्थान का समर्थन करती है। समाजवादी नारीवादी यह नहीं मानते कि स्त्रियों की समस्या राजनीतिक और कानूनी रूप से समाप्त हो सकती है। उनके अनुसार स्त्री-पुरुष की असमानता का मूल कारण सामाजिक-आर्थिक संरचना है जो एक सामाजिक क्रांति के द्वारा ही समाप्त की जा सकती है। समाजवादी नारीवादी मुख्य रूप से पूंजीवादी व्यवस्था को स्त्रियों के शोषण का कारण मानते हैं। इस धारा के प्रमुख विचारक चार्ल्स फ्यूरिए, फ्रेडरिक एंगेल्स और शीला रोबाथम हैं।फ्रेडरिक एंगेल्स का मानना है कि स्त्रियों का दमन परिवार की संस्था से आरंभ होता है क्योंकि बुर्जुआ परिवार की संरचना पितृसत्तात्मक होती है। फ्रेडरिक एंगेल्स ने अपनी पुस्तक 'द ओरिजिन ऑफ द फैमिली, प्राइवेट प्रॉपर्टी एंड स्टेट' (1884) में यह तर्क दिया कि समाजवाद के आगमन से निजी संपत्ति का अंत हो जाएगा जिससे स्त्रियों को गृह कार्य के भार से मुक्ति मिल जाएगी और समानता स्थापित होगी। शीला रोबाथम प्रमुख समाजवादी नारीवादी विचारक हैं। इन्होंने मुख्य रूप से स्त्रियों के इतिहास का पता लगाने की कोशिश की। इन्होंने अपनी चर्चित कृति 'विमेन रेजिस्टेंस एंड रिवॉल्यूशन' के अंतर्गत बताया कि स्त्रियों के अतीत की जानकारी से हमें उनके भविष्य के लिए दिशा दृष्टि मिल सकती है। शीला रोबाथम का मानना था कि नारी मुक्ति का संघर्ष वस्तुतः पूंजीवाद विरोधी संघर्ष का एक हिस्सा है।

v. **उत्तर आधुनिक नारीवाद(Post Modern Feminism):-**अगर हम प्राचीन परंपरा तथा रूढ़िवादी मान्यताओं को प्राचीनता तथा परंपरागतता के साथ जोड़ते हैं तो आधुनिकता से तात्पर्य विज्ञान व तकनीकी विकास धर्मनिरपेक्षता तथा नगरीकरण आदि शामिल है। परंतु आज एक नए प्रकार की धारा चल रही है, जो परंपरा तथा आधुनिकता को एक साथ जोड़ कर चलती है, तो इसी को उत्तर आधुनिकता की संज्ञा प्रदान की जाती है। उत्तर आधुनिक नारीवादियों के अनुसार इनके विचारों को तीन प्रकार की श्रेणियों में रखा जा सकता है ।उत्तरआधुनिक नारावादियों के अनुसार इनके विचारों का तीन प्रकार का श्राणयों में रखा जा सकता है । प्राचीन Ancient ,मध्यकालीन Medival तथा,आधुनिक Modern उत्तर आधुनिकता यह मानकर चलता है कि कुछ भी सार्वभौमिक (Universal) नहीं है, क्योंकि समय तथा परिस्थितियों के साथ साथ सभी विचार और धारणाएं बदलती हैं। इसका तात्पर्य है कि एक शब्द का अर्थ भी समय और परिस्थितियों के हिसाब से अलग-अलग हो सकता है । वही उत्तर आधुनिक नारीवाद की मान्यता है कि दुनिया की सभी महिलाओं को एक वर्ग के रूप में शामिल करना ठीक नहीं है, क्योंकि दुनिया के विभिन्न भागों के महिलाओं की समस्याएं एक समान नहीं होती । जैसे अमेरिकन महिलाओं और अफ्रीकन महिलाओं की समस्याएं अलग-अलग होती हैं। अतः सभी महिलाओं को एक वर्ग के अंतर्गत रखकर उनके अधिकारों की रक्षा नहीं की जा सकती है।

vi. **सांस्कृतिक नारीवाद (Cultural Feminism):-**दूसरे नारीवादी सिद्धांत सभी स्थित स्त्रियों को एक वर्ग के रूप में देखते हैं। इस प्रकार इन समस्याओं को समझने हेतु हमें सांस्कृतिक सापेक्षवाद (Cultural) के सहारे अलग-अलग वर्ग की महिलाओं की समस्याओं का विश्लेषण करके उनको दूर करने का प्रयास करना पड़ेगा। जैसे अमेरिकन महिलाओं की समस्या क्लब जाने की होती है तथा एक अफ्रीकन महिला की समस्या शिक्षा पाने की

होती है ।जिस तरह से दुनियां में हर देश की अपनी संस्कृति होती है, उसी तरह से हर देश की महिलाओं की अपनी समस्याएँ भी अलग अलग हो सकती **हैं।**

vii. **पर्यावरणीय नारीवाद (Eco-Feminism):-**प्रकृति और महिलाओं में समानता अनेक नारीवादी लेखिका एवं विचारक द्वारा बताये गए हैं। जैसे वंदना शिवा, सुनीता नारायण, मेघा पाटेकर आदि। इनका मानना है कि प्रकृति तथा महिलाओं में काफी समानता है। महिलाएं प्रकृति के सर्वाधिक निकट होती हैं। अतः पर्यावरण का सर्वाधिक प्रभाव महिलाओं पर ही पड़ता है । अतः पर्यावर्धनीय प्राकृतिक उत्थान द्वारा नारी की स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है। प्रकृति को स्त्री माना गया है। धरती को तथा नदियों को मां का दर्जा दिया गया है । इस तरह नारी तथा प्रकृति में समानता है ।

7-3-4-नारीवाद का विकास (Development of Feminism): -

पाश्चात्य नारीवादी विद्वान मैगी हुॅम्म और रिबेका वालकर के अनुसार नारीवादी इतिहास को तीन कालखण्डों में बांटा जा सकता है। पहला कालखण्ड 19वी सदी से 20वी सदी के प्रारंभ तक । दूसरा कालखण्ड 1960 से 1970 तक तथा तीसरा कालखण्ड 1990 से वर्तमान तक। नारीवाद के इतिहास का उदय इन तीनों कालखण्डों के दौरान हुये नारीवादी आन्दोलनों से हुआ है। 20वी सदी का प्रभातकाल नारी में आये जबरदस्त परिवर्तन का साक्षी रहा है । इस परिवर्तन ने समाज में नारी की स्थिति को घरेलू वातावरण से लेकर सार्वजनिक जीवन तक के समस्त पहलुओं को प्रभावित किया । नारीवादी आन्दोलन की समान अधिकारों के प्रति वकालत, नारीवादी संस्थाओं, नई पीढ़ी के कलाकारों, नारीवादी बुद्धिजीवियों तथा कामकाजी महिलाओं ने सम्पूर्ण विश्व की परंपरागत समाजिक संरचना को रूपांतरित कर दिया । प्रथम महायुद्ध के पश्चात का काल महिलाओं के लिए एक नई सुबह लेकर आया । इस काल में महिलायें एक महान कार्यबल के रूप में उभरकर सामने आई, जिसने पुरुष प्रधान वैश्विक आर्थिक ढांचे को हिलाकर रख दिया । यह वह काल था जिसमें घर व समाज में नारी की

भूमिका में क्रान्तिकारी बदलाव आये । इसके पूर्व 19वी सदी के अंत में पश्चिमी विश्व में अनेक नारीवादी आन्दोलन हुये जो कि महिलाओं के लिए राजनीतिक अधिकारों की मांग कर रहें थे । यह आन्दोलन विशेष कर अमेरिका और इंग्लैण्ड में हुये । 20वी सदी में पश्चिम के नारीवादी आन्दोलनों के बीच सर्वाधिक महत्वपूर्ण आन्दोलन अमेरिका में हुये इन आन्दोलनों ने ही आधुनिक युग में सम्पूर्ण विश्व की महिलाओं को प्रभावित किया और इन आन्दोलनों से प्रेरित होकर अन्य महिला आन्दोलन प्रारंभ हुये । अमेरिका में आन्दोलन वास्तव में समाजिक - राजनीतिक आन्दोलन था जो समाज में नारी की समानता को स्थापित करने का प्रयास कर रहा था । 20वी सदी के प्रथम दो दशकों के दौरान नारीवादियों का मुख्य लक्ष्य महिलाओं के लिये मताधिकार प्राप्त करने का था और वह इसमें सफल भी रहा। 1920 में अमेरिका के संविधान में संशोधन करके महिला मताधिकार को सुरक्षित किया गया। 20वी सदी के उत्रार्द्ध में महिलाओं के लिए समान अधिकारों हेतु संघर्ष चलाया गया। यह संघर्ष तुलनात्मक रूप से लम्बा चला और यद्‌यपि 1970 तक समान अधिकार संशोधन को संवैधानिक स्वीकृति नहीं मिल पायी तथापि यह आन्दोलन पश्चातवर्ती नारीवादियों के लिए प्रेरणास्त्रोत बना रहा और इसने राष्ट्र का ध्यान अपनी ओर खिंचा। **1917 से 1960** तक कालखण्ड दो महायुद्‌वों के साथ-साथ आर्थिक तेजी का दौर था । जिसने विश्व के अनेक देशों की महिलाओं को कार्य स्थल पर जाने के लिए प्रेरित किया । इसका प्रभाव यह हुआ कि इन कार्यस्थलों पर कामकाज करनेवाली महिलाओं में अपने असमान समाजिक और आर्थिक अधिकारों के प्रति सजगता बढ़ी । 1960 के नागरिक अधिकार आन्दोलन एवं छात्र आन्दोलनों के लक्ष्य अलग-अलग थे किन्तु इन्होने के अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं को अपने अधिकारों के लिये लड़ाई लड़ने के प्रेरित किया। 1966 में राष्ट्रीय महिला संगठन (National Organization For Women) की स्थापना की गई । यह प्रथम ऐसी संस्था थी जो अधिकृत रूप से महिलाओं से संबंधित मुद्दों का प्रतिनिधित्व करती थी । इस संस्था के पश्चात अन्य संस्थायें जैसे राष्ट्रीय गर्भपात एवं प्रजनन अधिकार लीग (National Abortion &

Reproductive Rights Action League), नारी समानता लीग (Women's Equity Action League), महिला रोजगार संगठन (Women Organization For Employment) आदि संस्थायें अस्तित्व में आई जिन्होने ने अमेरिकी समाज का महिलाओं की समस्याओं के प्रति ध्यान आकर्षित किया । नारीवादी नेता जैसे फ्रेडन, बेला एब्जग, शिर्ले किसॉल्म, और ग्लोरिया स्टीनेम आदि के सतत प्रयासों के बाद आखिरकार 1975 में राष्ट्रपति गेराल्ड फोर्ड के समक्ष महिला एजेण्डा (Women Agenda) प्रस्तुत किया गया । 1977 में नारीवादियों ने हॉस्टन नगर में एक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया और महिलाओं से संबंधित मुद्दों के समाधान के लिए एक कार्य योजना तैयार की ।1980 के दशक में नारीवादी आन्दोलन को अमेरिका एवं पाश्चात्य विश्व में कुछ अन्तरविरोधों का सामना करना पड़ा। नारीवादी आन्दोलन पर श्पाश्चात्य श्वेत महिलाओं के प्रभुत्वश् के लिए इसकी आलोचना की गई । इसकी असफलता के लिये इसके उच्चवर्गीय स्वरूप और गरीब अफ्रो-अमेरिकन, हिस्पेनिक महिलाओं की अवहेलना को उत्तरदायी ठहराया गया। लेकिन अनेक विरोधाभासों के बावजूद नारीवादी आन्दोलन पश्चिमी देशों में एक प्रधान राजनैतिक घटना क्रम बना रहा। 1990 के दशक के बाद निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि समाज में नारी की स्थिति में विज्ञान, राजनीति, लेखन कला, मनोरंजन आदि के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन आयें है और पश्चिम की महिलाओं ने अपने आपको फिर से परिभाषित किया है ।

7-4- **पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)**

7-4-3-भारत में नारीवाद (Feminism in India)

भारत मे सदैव ही महिलाओं के अधिकारों एवं उन पर हो रहे अत्याचारों की बात कहीं जाती रही हैं। इसके बाद भी आधुनिक समय में अनेकों कानून होने के बाद भी महिलाओं से संबंधित अपराधों में वृद्धि ही हुई हैं। किंतु पहले की तुलना में वर्तमान समय मे नारी अधिक आत्मनिर्भर बनी हैं। प्रत्येक व्यवसाय और क्षेत्र में नारी सदैव उच्च प्रदर्शन करते आयी हैं।

जिस कारण यह कहना गलत नहीं होगा कि नारी ने खुद का विकास स्वयं किया हैं।इसके बाद भी नारीवादी विचारधारा को और अधिक विकसित करने की आवश्यकता हैं। जिससे नारी के प्रति अधिकारों और न्याय प्रणाली को मजबूत किया जा सकें एवं उन पर हो रहे अत्याचारों में कमी लाये जा सकें। भारत में नारीवाद के इतिहास को मुख्य रूप से निम्नलिखित लहरों में वर्गीकृत किया जा सकता है,पहली नारीवादी लहर (1850-1915) ,दूसरी नारीवादी लहर (1915-1947), तीसरी नारीवादी लहर (1947 से लेकर आज तक)

पहली नारीवादी लहर :-भारत में पहली नारीवादी लहर समाज में विद्यमान अंधविश्वासों पौराणिक परंपराओं सती प्रथा, बाल विवाह, देवदासी प्रथा जैसी कुरीतियों को समाप्त करने के उद्देश्य पर केंद्रित थी। इस लहर में शिक्षित नेताओं, विचारकों और समाजसेवियों द्वारा महिलाओं की तत्कालीन स्थिति में सुधार करने का प्रयास किया गया। उनके द्वारा कई प्रकार के कानून का नियोजन किया गया कुछ पारित क़ानूनों का संशोधन किया गया और समाज में चेतना जागृत करने का काम किया गया। पुरुषों द्वारा कई सुधारवादी आंदोलन चलाये गए और महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु अन्य समूहों को भी संगठित किया गया। पुरुष समाज सुधारकों में प्रमुख हैं राजाराम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, दयानंद सरस्वती डॉ. धोंडो केशव में कवें स्वामी विवेकानंद सैयद अहमद खान, बदरुद्दीन तैयब जी आदि। इस सुधार के लिए अनेक संगठन यथा- आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन आदि ने भी उल्लेखनीय प्रयास किए। इन सुधारों की ओर समाज के सभी वर्गों और समूहों का ध्यान खींचने के लिए कई पत्रपत्रिकाओं में निबंधों, संपादकीय आदि का लेखन शुरू किया गया कई कुरीतियों और अंधविश्वासों का खुले तौर पर विरोध किया गया।1818 में राजाराम मोहन राय ने अपनी पुस्तिका के माध्यम से सती प्रथा और बहुविवाह के विरोध में आवाज बुलंद की। इसके साथ ही उन्होंने महिलाओं की हीन दशा और आर्थिक निर्भरता को समाप्त करने के लिए संपत्ति के अधिकार पर भी आवाज उठाई। 1828

में उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना की और इस संगठन के माध्यम से उन्होंने सती प्रथा के विरोध में आदोलन किया। उनके प्रयासों के कारण ही 1829 में सती प्रथा निषेध अधिनियम पारित हो पाया। उन्होंने महिलाओं की स्थिति में सुधार करने की दृष्टि से संपत्ति के अधिकार बाल विवाह निषेध, स्त्री शिक्षा आदि पहलुओं की वकालत की। ब्रह्म समाज अंतर्जातीय विवाह को भी मान्यता देता है। इसने महिलाओं के लिए बोधिनी पत्रिका का संपादन किया। इस संगठन के प्रयासों के परिणामस्वरूप ही नागरिक विवाह कानून 1872 पारित किया गया, जिसमें अंतर्जातीय विवाह और तलाक को कानूनी रूप से मान्यता प्रदान की गई। साथ ही विवाह की आयु महिला के लिए 14 वर्ष और पुरुष के लिए 18 वर्ष निर्धारित की गई। एम.जी. रानाडे और भंडारकर द्वारा 1867 में प्रार्थना समाज की स्थापना की गई और यह संगठन श्री शिक्षा पर विशेष जोर देता था। इंडियन नेशनल सोशल कान्फ्रेंस की स्थापना 1887 में होती है और इसने भी महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु महत्वपूर्ण अस किए) ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों के फलस्वरूप 1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम लागू हुआ। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से विधवा पुनर्विवाह बहुपत्नी विवाह का विरोध और स्त्री शिक्षा पर जोर दिया। जब उन्होंने पहली बार एक विधवा का पुनर्विवाह कराया था तब उन्होंने इसके समर्थन में आवेदन पत्र पर 21,000 लोगों के हस्ताक्षर करवाए थे। दयानंद सरस्वती द्वारा 1875 में आर्य समाज की स्थापना की गई, जो बाल विवाह, पर्दा प्रथा, जाति प्रथा, सती प्रथा के विरोध से संबंधित संगठन था। केशव कर्वे द्वारा1916 में पुणे में पहला महिला विश्वविद्यालय स्थापित किया गया। 1917-18 के दौरान उनके द्वारा कर्वे प्राथमिक स्कूल शिक्षक और बालिकाओं के लिए ट्रेनिंग कॉलेज की स्थापना भी कीगई। स्वामी विवेकानंद द्वारा 1897 में रामकृष्ण मिशन और रामकृष्ण मठ की स्थापना की गई। उनका मानना था कि भारत में मूल रूप से दो बुराईयाँ पाई जाती है:- भारतीय समाज में महिलाओं का पराधीन होना ,हिंदू समाज में असमानता और जाति व्यवस्था उनका मानना था कि समग्र विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि उसमें महिलाओं की भागीदारी को

सुनिश्चित किया जाए। सैयद अहमद खान जो पहले मुस्लिम समाज सुधारक माने जाते हैंने की शिक्षा को महत्वपूर्ण माना है। बदरुद्दीन तैबन जी ने पर्दा प्रथा को समाप्त करने के प्रयास की सराहना की। 1910 के दशक के अंत में और 1920 के दशक की शुरुआत में नारीवादी आंदोलनों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को साफ तौर पर परिलक्षित किया जा सकता है।1920 के दशक के अंत तक श्रमिक आंदोलनों में भी महिलाएं शामिल होने लगी। लहौर के एक सम्मेलन में महिला श्रमिकों ने कई मांगें रखी यथा- जिन कारखानों में महिला कामगारों की संख्या अधिक है वहाँ पालनागृह, नर्सरी, प्रसूतिगृह आदि की व्यवस्था होनी चाहिए (इस माँग को बाद में मंजूरी दे दी गई। अन्य रोजगारों में भी यथा शिक्षिका, नर्स, सफाई करने वाली, खाद्य पदार्थ व हस्तकला उद्योग, भोजन पकाने वाली आदि में भी स्त्रियों की भूमिका को महत्व दिया जाने लगा। दूसरी नारीवादी लहर हालांकि पहली नारीवादी लहर ने महिलाओं को उनकी समस्याओं और उनके प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार के प्रति चेतना अवश्य पैदा की, तथापि महिलाओं को जागृत करने और स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी की दृष्टि से यह लहर काफ़ी महत्वपूर्ण थी। इस लहर ने एक ओर जहाँ महिलाओं के जीवन को क्रांतिपूर्ण तरीके से बदल दिया, वहीं दूसरी ओर कई महिला संगठनों की स्थापना भी की गई जिनमें से प्रमुख निम्न उल्लेखित हैं। भारतीय महिला संघ (1917), भारतीय महिला राष्ट्रीय परिषद (1925),अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (1927), कुछ राष्ट्रीय नेताओं के सहयोग से प्रगतिशील महिला आंदोलन ने 1929 में शारदा एक्ट (बाल विवाह नियंत्रण अधिनियम) के नियोजन में भूमिका निभाई। 1930 के दशक में विवाह और संपत्ति से संबंधित हिंदू महिलाओं के लिए कुछ कानून पारित किए गए। इसके अलावा कुछ अन्य कानून भी पास किए गए जैसे- ,मुस्लिम पर्सनल लॉ ,विनियोग अधिनियम, 1937 ,मुस्लिम विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1939 तत्कालीन समय के कुछ प्रमुख स्थानीय महिला संगठन निम्न थे-तमिल मधार संगम (1906, मद्रास),तमिल महिला संगठन,गुजरात स्त्री मंडल (1908, अहमदाबाद),

बंग महिला समाज (1909) ,भारत का स्त्री महामंडल (1910) ,नारी समिति (1910) कुछ प्रमुख स्थानीय संप्रादाय समूह निम्नवत थे-फ़ारसी महिलाओं के लिए सी जारथोशटी मंडल (1903 बॉम्बे) ,मुस्लिम महिलाओं का सम्मेलन अंजुमन ए ख्वातीन-ए-इस्लाम मंत्री,युवा महिलाओं के क्रिश्चियन एसोसिएशन 1914, YWCA)

प्रमुख महिला समाज सुधारक है सावित्री ज्योतिबा फुले, ताराबाई शिंदे पंडिता रमाबाई, स्वर्णकुमारी देवी, सिस्टर निवेदिता, सरोजिनी नायडू, एनी बेसेंट, कमला नेहरू, रोकैया सखावत हुसेन, डॉ. मुथु लक्ष्मी रेड्डी दीदी सुब्बुलक्ष्मी अरुणा आसफ अली, कमला देवी, विजय लक्ष्मी पंडित आदि। भीमराव अंबेडकर द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अथक प्रयास किए गए और उनका मानना था कि किसी भी समाज की उन्नति का मापदंड पुरुष नहीं है स्त्रियाँ होती हैं। उन्होंने 28 जुलाई 1928 को मुंबई विधान परिषद में कारखानों व अन्य स्थानों पर मजदूर महिलाओं को प्रसूति अवकाश सुविधा प्रदान करने के बिल पर सहमति जताई। 1928 में साइमन कमीशन के समक्ष उन्होंने 21 वर्ष के ऊपर के सभी नागरिकों को चाहे वह महिला हो अथवा पुरुष मतदान के अधिकार दिए जाने की वकालत की। उन्होंने संविधान के माध्यम से कई प्रावधानों व कानूनों को पारित किया जो महिलाओं के प्रति समतापूर्ण दृष्टि का प्रतिनिधित्व करते हैं। पिछली इकाई में प्रावधानों व कानूनों पर चर्चा की जा चुकी है अतः यहाँ पुनः चर्चा करना उचित नहीं होगा। महात्मा गांधी द्वारा सती प्रथा बाल विवाह, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, छुआछूत व विधवाओं के शोषण का पुरजोर विरोध किया गया। उन्होंने सदैव महिला मुक्ति और महिला विकास को महत्व दिया है। गांधी जी ने महिलाओं की भागीदारी से अनेक आंदोलनों को संपन्न कियायथा- नमक आंदोलन अस्पृश्यता विरोधी आंदोलन तथा किसान एवं श्रमिक आंदोलन महिलाओं की जागृति के संबंध में गांधी जी द्वारा महत्वपूर्ण काम किए गए

•**तीसरी नारीवादी लहर** :-इसके आरंभ को तेलंगाना में हुए महिला संघर्ष से संदर्भित किया जा सकता है। वहाँ 1948 में महिलाओं ने मार-पीट, जमीदारों, निजामों आदि द्वारा किए जाने

वाले उत्पीड़न का आक्रामक विरोध किया। इस आंदोलन में भागीदार महिलाओं में कामरेड स्वराज्य अखला कमाला देवी, जुमालुन्निसा बेगम, इलमा, चकली, सरोजिनी, प्रमिला आदि प्रमुख हैं। इनके द्वारा कुछ महिला संगठनों की स्थापना भी की गई, यथा- आंध्र महिला सभा आंध्र युवती मंडल और महिला संघमा 1950 के दशक में चलाए गए भूदान आंदोलन में भी बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी देखी जा सकती है। 1970 में महाराष्ट्र के ग्रामीण इलाकों में मूल्यवृद्धि के विरोध में चलाए गए आदोलन में यूनाइटेड विमेन्स एंटी प्राइस राइज फ्रंटा की स्थापना की गई। इस आंदोलन में थाली और बेलन का प्रयोग घोषणा चित्र के रूप में किया गया। इस विरोध में हजारों की संख्या में गृहणियाँ सम्मिलित हुई 1975 में मार्क्सवादी लेनिनवादी समूह 'स्त्री जागृति समिति अथवा स्वचेतन नारीवादियों द्वारा मुंबई में अन्नपूर्णा महिला मंडल की स्थापना की गई। इसका मुख्य उद्देश्य गृहणियों की सुरक्षा व्यवस्था करना था। अखिल भारतीय जनवादी महिला संगठन (AIDWA) महिला केंद्रित संगठन है और यह जनतंत्र समानता और महिलाओं के उद्धार की दिशा में काम करता है। यह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की महिला शाखा है। राष्ट्रीय स्तर पर इस संगठन को 1981 में स्थापित किया गया। यह संगठन स्त्री शिक्षा रोजगार महिलाओं के अधिकार आदि के लिए काम करता है और साथ ही बाल अधिकार, जातिवाद, सांप्रदायिकता व आपदा सहायता के कार्यों में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। इसके क्षेत्रीय संगठनों में पश्चिम बंगाल गणतांत्रिक महिला समिति त्रिपुरा में गणतांत्रिक महिला समिति और महाराष्ट्र में जनवादी महिला संगठन प्रमुख हैं।

माओबादियों द्वारा 1986 में आदिवासी महिला संगठन की स्थापना की गई और इसकी शाखा क्रांतिकारी आदिवासी महिला संगठन है जो भारत में प्रतिबंधित है। यह संगठन भारत के सर्वोच्च पाँच संगठनों में से एक है और इसके पंजीकृत सदस्यों की संख्या90,000 के आस-पास है। इस संगठन का प्रयोजन बलात विवाह, महिलाओं के अपहरण बहुपत्नीत्व आदि

जैसे गंभीर मुद्दों का विरोध करना है। 1975 के बाद से भारत में अनेक महिला संगठन बने जिनका मुख्य उद्देश्य महिला के उत्पीड़न के विरुद्ध उठाना था की।

7-4-6-चुनौतियाँ (Challenges)

नारीवादियों के समक्ष अलग-अलग प्रकार की चुनौतियाँ हैं। चूँकि प्रत्येक समाज की संस्कृतियाँ अलग हैं। इसलिये महिलाओं की पराधीनता और शोषण के कारण तथा संरचनाएँ भी अलग-अलग हैं। नारीवादी आंदोलन के समक्ष सबसे प्रमुख व्यवहारिक चुनौती स्त्रियों के प्रति बनी बनाई रूढ़ अवधारणाएं और पूर्वाग्रह हैं। सार्वजनिक जीवन में स्त्रियों के विरुद्ध की मानसिकता का निर्माण हजारों वर्षों का परिणाम है। असंख्य सुधारों के बावजूद भी लैंगिक भेदभाव सार्वजनिक जीवन की एक हकीकत है। नारीवादी आंदोलन की एक प्रमुख चुनौती समाज में विद्‌यमान असमानता और स्त्रियों के शोषण की समाप्ति के विचार को लेकर नारीवादी आंदोलन से जुड़े विचारकों के मध्य असहमति भी है। नारीवाद का प्रमुख उद्देश्य पितृसत्तात्मक समाज को समाप्त करना है लेकिन नारीवाद के अंतर्गत इसके तरीके पर सहमति नहीं है। जिस वजह से नारीवादी आंदोलन की गति धीमी रही है।

7-4-7-नारीवाद के प्रभाव (Effects of Feminism)

नारीवाद से जुड़े हुए विचारकों का मानना है कि आज के वैज्ञानिक चिंतन के युग में शिक्षा के विस्तार के साथ यह स्पष्ट हो चुका है कि स्त्री-पुरुष की मानसिक और शारीरिक क्षमताओं तथा उत्तरदायित्व से जुड़ी योग्यताओं में कोई अंतर नहीं है। जहां भी स्त्रियों को अवसर मिला है वहाँ वे अपने आपको साबित कर चुकी हैं। शारीरिक क्षमता से जुड़े क्षेत्रों में भी स्त्रियाँ पुरुषों से पीछे नहीं रही हैं। सेना तथा खेलकूद के क्षेत्रों में भी स्त्रियों ने नए कीर्तिमान स्थापित किये हैं। इसलिए स्त्री को सिर्फ अशक्त या अबला के रूप में देखना तर्कसंगत नहीं है। स्त्रियों की हीन स्थिति सामाजिक व्यवस्था की उपज है न कि प्राकृतिक व्यवस्था की देन। नारीवादी आंदोलन का सभी प्रकार के समाजों पर प्रभाव पड़ा है। नारीवादी

आंदोलन के कारण स्त्रियों की दशा में काफी सुधार हुआ है और कई दूरगामी परिणाम भी प्राप्त हुए हैं। वोट देने के अधिकार, शिक्षा का अधिकार, निजता का अधिकार, विवाह एवं तलाक के कानून में परिवर्तन, दहेज एवं बाल विवाह पर प्रतिबंध जैसे विभिन्न कानूनों एवं अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता से महिलाओं की दशा में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। आज भी शासन व्यवस्थाओं , सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों द्वारा महिला सशक्तिकरण के प्रयास क्रमिक रूप से जारी हैं जिसके सकारात्मक परिणाम हासिल हुए हैं और आगे ढेरों संभावनाएं भी हैं। आज नारीवादी विचारकों का उद्देश्य स्त्रियों को पुरुष के समान बनाना नहीं बल्कि प्राकृतिक अंतर को स्वीकार करते हुए उनकी सामर्थ्य का संपूर्ण उपभोग करने तथा समाज के द्वारा स्थापित कृत्रिम असमानताओं को दूर करने का प्रयास करना है क्योंकि स्त्री-पुरुष समानता स्थापित करके ही किसी भी समाज का संपूर्ण विकास संभव है।

7-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

i. नारीवाद विचारधारा को प्रतिपादित करने का प्रथम श्रेय किसको दिया जाता हैं।

ii. पुस्तक (Subjection of Women) की रचना किसने की हैं।

iii. अन्नपूर्णा महिला मंडल की स्थापना की कब गई।

iv. अमेरिका में महिला को मताधिकार कब दिया गया ।

v. राष्ट्रीय महिला संगठन (National Organization for Women) की स्थापना कब की गई।

vi. 1897 में रामकृष्ण मिशन और रामकृष्ण मठ की स्थापना कब की गई।

7-6-सारांश (Summary)

प्रारम्भिक नारीवाद की शुरूआत जॉनलॉक के प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा से होती है। जे.एस. मिल ने अनेक तर्कों के आधार पर महिलाओं को पुरुषों के समान अवसर देने का

प्रबल समर्थन किया। बूबोयर तथा बैटीफ्रीडन जैसे लेखकों ने आगे चलकर महिला आन्दोलन को प्रखर बनाया। नारीवाद सामान्यतया वह विचारधारा और आन्दोलन है जिसका उद्देश्य है जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को पुरुषों के बराबर स्थान प्राप्त हो। परम्परागत रूप से और समकालीन जीवन में भी महिलाओं को अधीनस्थ और अवपीड़ित स्थिति ही प्राप्त है। नारीवाद का लक्ष्य है इस अधीनस्थ और अवपीड़ित स्थिति को समाप्त कर उन्हें परिवार, समाज, राज्य और समूचे विश्व के स्तर पर पुरुष के समकक्ष स्थान दिलाना। इस प्रकार एक पंक्ति में नारीवाद, नारी समानता (पुरुष से समानता), नारी एकता और नारी सशक्तिकरण का आन्दोलन है। नारीवाद की मांग है कि नारी को अपना हक (समानता का हक), अपने अधिकार और अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व चाहिए। नारीवाद एक विश्वव्यापी आन्दोलन है, कुछ देशों में यह अपने विकास के उच्च स्तर पर है, कुछ देशों में अपेक्षाकृत कम विकसित स्तर पर। सिमोन दिबोवा की प्रसिद्ध पुस्तक **The Second Sex** में विस्तार में बतलाया गया है कि स्त्री-पुरुष का भेद समाजीकरण का परिणाम है। समाजीकरण (समाज से जुड़े समस्त वातावरण) से उत्पन्न इस स्थिति को दूर कर समान व्यक्तियों के लिए समान अधिकारों की अधिकार के रूप में मांग नारीवाद है।

7-7-सूचक शब्द (Key Words)

i. **नारीवाद:** नारीवाद, लिंगों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समानता में विश्वास।

ii. **लैंगिक असमानता:** लैंगिक असमानता असमानता का तात्पर्य लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव से है। महिलाओं और पुरुषों की संसाधनों, स्थिति और कल्याण तक पहुंच में अंतर, जो आम तौर पर पुरुषों का पक्ष लेते हैं और अक्सर कानून, न्याय और सामाजिक मानदंडों के माध्यम से संस्थागत होते हैं।

iii. **पितृसत्ता: -** पितृसत्ता एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें पुरुषों के पास समाज या समूह में सभी या अधिकांश शक्ति और महत्व होता है।

iv. **मातृसत्तात्मक: मातृसत्तात्मक** समाज में वे समाज व परिवार आते हैं जिनमें सत्ता व अधिकार स्त्री प्रतिनिधि के हाथ में होते हैं ।

v. **सशक्तिकरण**: सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया से है जिसके तहत शक्तिहीन लोगों को अपने जीवन की परिस्थितियों को नियंत्रित करने के बेहतर मौके मिल जाते हैं।

vi. **आत्मनिर्भर** : जो किसी काम के लिए किसी पर निर्भर न हो ।

7-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

i. नारीवाद का अर्थ, विशेषताओं का विस्तार से वर्णन कीजिए।

ii. नारीवाद के विभिन्न प्रकारो की व्याख्या कीजिए।

iii. भारत में नारीवादी आन्दोलन कब शुरू हुआ विस्तार से समझाइए।

iv. नारीवाद का असर समाज पर कितना प्रभावी रहा वर्णन कीजिए।

v. नारीवादी सिद्धांतो का उद्देश्य क्या है? नारीवाद की आलोचना पर अपने विचार प्रकट करे।

7-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

I. ब्रिटिश की महिला मेरी वोल स्टोनक्राफ्ट (M. Woll Stoncraft)

II. J.S Mill ने

III. 1975

IV. 1920 में

V. 1966 में

7-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशासन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा, डॉ हरी चंद्र शर्मा, त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, लोक प्रशासन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii)डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशासन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv)डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) लोक के प्रशासन सिद्धांत विष्णु भगवान, विद्याभूषण एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: BA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 8	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
नया सार्वजनिक प्रबंधन (एनपीएम) New Public Management (NPM)	

अध्याय की संरचना-

8-3-अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

8-2-परिचय (Introduction)

8-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

8-3-1 नवीन लोक प्रबंधन का उदय (Rise of New Public Management)

8-3-2-नवलोक प्रबन्ध का अर्थ (Meaning of New Public Management)

8-3-3-नवीन लोक प्रबंधन विशेषताएँ (Features of New Public Management)

8-3-4-नवीन लोक प्रबंधन के उद्देश्य (Objectives of New Public Management)

8-3-5-नवलोक प्रबन्ध की प्रमुख मान्यताएँ (Main Assertions of New Public Management)

8-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

8-4-3-नवीन लोक प्रबंधन का प्रभाव (Impact of New Public Management)

8-4-2-आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of New Public Management):

8-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

8-6-सारांश (Summary)

8-7-सूचक शब्द (Key Words)

8-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

8-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

8-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

8-3- अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

i. **विद्यार्थियों को नवलोक प्रबंधन से अवगत करवाना ।**

ii. **विद्यार्थियों को लोक प्रशासन में प्रबंधन की अवधारणा से अवगत कराना ।**

iii. **विद्यार्थियों को लोक प्रशासन में प्रबंधन की अवधारणा की आवश्यकता व प्रभाव अवगत कराना ।**

8-1-परिचय (Introduction)

पूरे विश्व में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में लोक प्रशासन में मूलभूत परिवर्तन हुए हैं, सूचना तकनीक, संचार, संगणक व्यापार का उदारीकरण बैंकिंग तथा वित्तीय व्यवस्थाओं का अनियमितीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय निगमों या कम्पनियों के विकास आदि अनेकों कारकों ने वैश्वीकरण को बढ़ावा दिया है। इसके परिणामस्वरूप, पूरी दुनिया में वस्तुओं, सेवाओं, तकनीक प्रक्रियों तथा क्रियाओं या व्यवहारों के फैलाव में बढ़ोत्तरी हुई है। इसने नई सामाजिक अपेक्षाओं को जन्म दिया है और मूल्य प्रणालियों या व्यवस्थाओं को भी परिवर्तित कर रहा है, जो राज्य तथा शासनिक व्यस्थाओं के स्वरूप को बदल रहा है ।

वैश्वीकरण, लोक प्रशासनिक व्यवस्था को, जो राज्य की संरचना में अंतः स्थापित हैं, प्रभावित कर रहा है। वैश्विक संस्थाओं के द्वारा लाये गए दवाब भी बहुत अधिक है। इन संस्थानों द्वारा प्रदत्त सहायता, विकासशील देशों के लिए, विशेष रूप से, व्यापक प्रभाव या निहितार्थ हैं, क्योंकि इससे विकासशील देशों की (वित्तीय सैनिक या सेना संबंधी, राजनीतिक) निर्भरता पश्चिमी जगत पर बढ़ी है। ये परिवर्तन इन देशों के लोगों को भी विकल्पहीन बना देते हैं, अपनी नीतिगत वरीयताओं तथा प्राथमिकताओं को तय करने में असमर्थ बना देते हैं।

वैश्वीकरण राज्य को वैश्विक मानदंडों तथा व्यवहारों पर चलने की ओर धकेल रहा है। दूसरी तरफ अपने प्रशासन को कुशल तथा प्रभावी बनाने के लिए अमेरिका तथा ब्रिटेन में प्रयुक्त पर अनुमानित संरचना अनुकूलन कार्यक्रम (Structural Adjustment Programme) के

परिणाम स्वरूप एक नये प्रारूप (Paradigm) जिसे नवीन लोक प्रबंधन या एन. पी.एम. के नाम से जाना जाता है का उदय हुआ है।

8-2 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

8-3-1- नवीन लोक प्रबंधन का उदय (Rise of New Public Management)

राज्य सदेव ही शासन के केन्द्र में रहा है। परम्परागत रूप से, अनेकों राज्यों ने कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को अपनाया, जिसमें एक ऐसी राजनीतिक व्याख्या की, जिसमें जनसंरचना राज्य की अवधारणा को अपनाया, जिसमें एक ऐसी राजनीतिक व्याख्या की, जिसमें जनसंरचना के कल्याण का भारी मात्रा में उत्तरदायित्व था। 1980 तथा 1990 के दशकों में वैश्वीकरण के प्रसार या फैलाव तथा अनेकों क्षेत्रों में इसके प्रभाव के कारण राज्य की इस भूमिका में महत्वपूर्ण बदलाव आये। अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक शाक्तियों ने राज्य के चरित्र को बदल कर एक प्रतिस्पर्धी राज्य, जो स्थानीय राजनीतिक तथा प्रशासनिक संस्कृतियों की चिंता किए बिना अनियमितीकरण तथा निजीकरण के पक्षकर के रूप में परिवर्तित हो गया।

बाजार के द्वारा सरकार में विश्वास इस विचार पर टिका है, कि बाजार व्यवस्था स्वाभाविक रूप से सरकार की अपेक्षा के सहारे मानव की आवश्यकताओं तथा आकाक्षांओं को पूरा करने का अधिक अच्छा तरीका है। इस मत का प्रथम उद्देश्य था, अनेक प्रकार की मौद्रिक तथा वित्तीय नीतियों के साथ साथ अनियमितीकरण राज्य के आकार को घटाना तथा बाजार शाक्तियों को मुक्त करना। दूसरा उद्देश्य स्वंय सरकार के संचालन में बाजार अवधारणाओं एवं प्रोत्साहनों को आयात करना। तीसरा उद्देश्य था सार्वजनिक व्यय की वृद्धि तथा सामान्य आकार को कम करने के लिए कदम उठाना तथा सरकार द्वारा निष्पादित कार्यों में कटौती करने के लिए कदम उठाना। राज्य के बदलते स्वरूप के कारण नयी सरंचनाओं तथा विशेषताओं आगमन भी हुआ । 1980 -1990 के दशक में ब्रिटेन तथा अमरीका में बाजार

की पक्षधर तथा राज्य विरोधी-निजी अच्छा तथा सार्वजनिक दोषपूर्ण (Private Good and Public Bad) का दर्श प्रचलित या प्रबल होने लगा। इसने नवीन लोक प्रबंधन के रूप में एक नवीन केन्द्रीय कर्त्ता के उदय को देखा । न्यू राईट दर्शन, जेसे संस्थागत अर्थशास्त्र तथा लोक चयन दृष्टिकोण के नवीन लोक प्रबंधन के ऊपर प्रभाव स्पष्ट है। यदि परम्परागत रूप में देखें या कहें तो लोक प्रशासन का सदैव ही नागरिकों को संवदेनशीलता, प्रतिनिधत्व तथा समानता का आश्वासन देते हुए सार्वजनिक हित को बढ़ावा देने की जिम्मेदारी या कर्तव्य रहा है। परन्तु समय के साथ इसकी नौकरशाही के ऊपर आवश्यकता से अधिक निर्भरता पदसोपान नियम एवं विनियमों पर अत्याधिक निर्भरता ने इसकी सक्षमता तथा प्रभावशीलता पर प्रश्नचिंह लगा दिए। सोवियत संघ के विघटन के साथ बढ़ते हुए सार्वजनिक खर्चों तथा करों एवं नौकरशाही के कार्य करने के ढंग से असंतोष ने इस विचार को बलवान बना दिया कि राज्य का परम्परागत मॉडल उचित नीतियों के कार्यान्वयन तथा प्रभावी ढंग से सेवाएं पहुँचाने में असफल रहा है। इस प्रकार एक वैकल्पिक मॉडल की आवश्यकता अधिक अनुभव की गई। इसी मॉडल को जिसका बल प्रवधन प्रकृति के रूप में राज्य के स्थान पर बाजार पर आधारित विकास की राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर था, नवीन लोक प्रबंधन या एन. पी. एम. कहलाया।

8-1-2-नवलोक प्रबन्ध का अर्थ (Meaning of New Public Management)

एनपीएम निजी क्षेत्र के प्रबंधन द्वारा उपयोग की जाने वाली विभिन्न तकनीकों और प्रथाओं को अपनाने का प्रयास करता है। उदा. जीरो बेस्ड बजटिंग (ZBB), टोटल क्वालिटी मैनेजमेंट (TQM), ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट (HRM), नेटवर्किंग, ह्यूमन रिसोर्स अकाउंटिंग (HRA), सोशल अकाउंटिंग, ऑपरेशनल रिसर्च तकनीक (OR), मैनेजमेंट बाय ऑब्जेक्टिव (MBO) आदि। निजी क्षेत्र की प्रबंधकीय विधियों और तकनीकों को सार्वजनिक क्षेत्र में पेश किया) ।

लोक रूचि अभिगम जिस सुधरे हुऐ लोक प्रशासन की बात करता है, उसका सैद्धान्तिक स्वरूप है नवलोक प्रबन्ध । यह लोक प्रशासन का प्रबन्धोन्मुख चेहरा है जो 1990 के दशक के प्रारंभ में अस्तित्व में आया । इसमें प्रयुक्त लोक शब्द से स्पष्ट है कि नवलोक प्रबन्ध सरकारी प्रशासन से संबंधित अवधारणा है ।

इसमें ”नव” और ”प्रबन्ध” शब्द जुड़े है, जो इसे विशिष्टता प्रदान करते हैं । यह विशिष्टता ही इसे परम्परागत लोक प्रशासन से पृथक करती है । प्रशासन के स्थान पर ”प्रबन्ध” का प्रयोग सरकारी कार्यों को पेशेवरता, व्यवसायिकता आदि का स्वरूप देता है, जबकि नव या नया प्रशासन उस नवीन दिशा का घोतक है जो वस्तुत: नवीन सामाजिक मांगो, नवीन प्रौद्योगिकी परिवर्तनों और विशेषकर नवीन आर्थिक आवश्यकताओं के कारण सरकारी प्रशासन को ग्रहण करता है । इसकी विशेषताओं के आधार पर ग्रेब्रिएल ने उद्‌यमी शासन या व्यवसायी शासन बार्जले ने उत्तर नौकरशाही प्रतिमान, पोल्लीत ने प्रबन्धवाद आदि संज्ञाएं दी । लेकिन सामान्य और सर्वमान्य नाम नवलोक प्रबंधवाद है ।

नवीन प्रवृत्तियों यथा वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण आदि के अनुरूप राज्य की भूमिका बदल रही है और इसलिये उसके प्रशासन के स्वरूप और कार्य दोनों को पुनर्निधारित करने की जरूरत है। यह नया सरकारी प्रशासन कैसा हो-यह स्पष्ट करता है ”नव लोक प्रबन्ध” ।

”नवलोक प्रबन्ध” वस्तुत: सम्पूर्ण परिदृश्य में हो रहे परिवर्तनों के अनुकूल एक और नये लोक प्रशासन की सैद्धान्तिक अवधारणा है । इस लिहाज से नवलोक प्रशासन के बाद ”नव लोक प्रबन्ध” लोक प्रशासन में दूसरा सुधारवादी आन्दोलन है ।

चूंकि नवलोक प्रबन्ध दृष्टिकोण राज्य और प्रशासन को एकीकृत मानता है और प्रशासन को राजनीति का ही एक अन्तर्भूत तत्व, अत: इन वांछित परिवर्तनों को राज्य और प्रशासन के संयुक्त परिप्रेक्ष्य में ही विश्लेषित किया गया है । और स्पष्ट करें तो नवलोक प्रबन्ध का

जौर सम्पूर्ण राज्य या सरकार में बजारोन्मुख परिवर्तन से हैं । यह राज्य (सरकार) और प्रशासन को पृथक-पृथक न तो मानता है, और न ही देखता है । यही कारण है कि नवलोक प्रबन्ध को नये किस्म का लोक प्रशासन मानते हुए भी "व्यवसायी सरकार" जैसी व्यापक संज्ञा दी गयी है । इसीलिये परिवर्तन का क्षेत्र नीति निर्माण से लेकर उसके क्रियान्वयन तक विस्तृत है । राज्य के स्थान पर बाजार को वह समाज और अर्थव्यवस्था के मुख्य चालक की भूमिका प्रदान करता है । वह राज्य की नीति निर्माता, सुविधा प्रदान सूचना-प्रदाता और विभिन्न गतिविधियों के समन्वयकर्ता का रोल देता है जो कम महत्वपूर्ण नहीं है अपितु तीव्र वैश्विक परिवर्तनों के इस दौर में अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

8-1-3-नवीन लोक प्रबंधन विशेषताएँ (Features of New Public Management)

नवीन लोक प्रबंधन परिप्रेक्ष्य की मुख्य विशेषताओं में निम्नलिखित शामिल हैं:

- उत्पादकता (Productivity): कम राजस्व से अधिक सेवाएँ प्राप्त करना ।
- बाज़ारीकरण (Markestisation): परम्परागत नौकरशाही संरचनाओं, क्रियाविधियों और प्रक्रियाओं को बाज़ार रणनीति से बदलना।
- सेवा प्रधान (Service Orientation): ग्राहकों की आवश्यकताओं को प्राथमिकता के रूप में लेना
- विकेन्द्रीकरण (Decentralisation): निम्न स्तरों की सेवा वितरण के उत्तरदायित्व हस्तांतरित करना ।
- नीति- प्रशासन द्विविभाजन (Policy Administration Dichotomy): नीति और निष्पादन के बीच अंतर करना ।
- नीति निर्माण कुशलता की सहायता के लिए प्रबंधकीय कुशलताओं पर बल ।
- विशाल सार्वजनिक संगठनों को ऐसी पृथक आत्मनिर्भर इकाइयों में विभाजित करना जिनके अपने जिनके अपने लक्ष्य, योजनाएँ और अपेक्षित स्वायतत्ता है।

- सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा निजी क्षेत्र की प्रबंधकीय पद्धतियाँ अपनाना ।
- सार्वजनिक संगठनों के लिए मापे जाने योग्य स्पष्ट निष्पादन मानक निर्धारित करना ।
- पूर्व निर्धारित उत्पादन उपायों द्वारा सार्वजनिक संगठन के कार्य निष्पादन का नियंत्रण |
- निजी स्वामित्व, संविदा और सार्वजनिक सेवा व्यवस्था में प्रतिस्पर्धा के लिए वरीयता ।
- सार्वजनिक क्षेत्र संगठनों में और सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन ।
- केन्द्र में रणनीतिक क्षमताओं का सुदृढ़ीकरण ।
- ग्राहक की आवश्यकताओं के प्रति सेवाओं को अधिक प्रतिक्रियाशील बनाना और धन की उपयोगिता सुनिश्चित करना ।
- माल और सेवाओं के प्रत्यक्ष प्रदाता के बदले सरकार की परिचालन भूमिका ।
- बेहतर सेवा वितरण को सुकर बनाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग ।

8-1-4-नवीन लोक प्रबंधन के उद्देश्य (Objectives of New Public Management)

नवलोक प्रबन्ध या व्यवसायी सरकार के तीन मुख्य उद्देश्य हैं,

i. इफिसिएन्सी (Efficiency) अर्थात कार्यकुशलता पर बल

ii. इकानामी (Economy) अर्थात मितव्ययिता पर बल । नवलोक प्रबन्ध फिजूलखर्ची पर रोक लगाता है और प्रत्येक योजना या कार्य को लागत-लाभ सन्दर्भ में विश्लेषित करता है ।

iii. इफेक्टिवनेस (Effectiveness) अर्थात प्रभावकारिता । यह कार्योन्मुख लक्ष्योन्मुख व्यवस्था है । इसमें परिणामों का मूल्यांकन लक्ष्य प्राप्ति के आधार पर किया जाता है ।

iv. निष्पादन मूल्यांकन, प्रबन्धकीय स्वायत्तता, लागत-कटौती, जवाबदयता, नवाचार, बोनस, लक्ष्य प्राप्ति, प्रतिग्राह्यता, प्रतिबद्धता प्रतिस्पर्धी-स्तर आदि ।

8-1-5-नवलोक प्रबन्ध की प्रमुख मान्यताएँ (Main Assertions of New Public Management) नवलोक प्रबंध की प्रमुख मान्यताएँ हैं:

i. नीति या मूल्य के स्थान पर" प्रबन्ध" पर जोर अर्थात क्या होना चाहिये या क्या प्राप्त करना है से अधिक महत्वपूर्ण "कैसे करना" है । इस हेतु प्रबन्धकों को अधिक स्वायत्तता और संसाधन प्रदान करना जरूरी ।

ii. सरकार अब नागरिकों को उपभोक्ता मानकर चले । इससे उसकी भूमिका में दो परिवर्तन होंगे- प्रथम, नागरिकों की रूचि के अनुरूप सेवाओं के विकल्प रखे जाये तथा द्वितीय प्रदत्त सेवा का पूरा मूल्य वसूला जाये ।

iii. बाजार को प्रतिस्पर्धात्मक बनाये । इस हेतु, सेवा या वस्तु के प्रदानकर्त्ताओं के मध्य स्वास्थ्य प्रतियोगिता का संचालन सरकार को सुनिश्चित करना है । सरकार कतिपय आवश्यक राज्य सेवाओं के लिये टेण्डर बुलाकर भी ऐसी प्रतियोगिता को जन्म देती । उदाहरण के लिये बोट (BOT- Built, Operate and Transfer) ।

iv. कार्य निष्पादन की निरन्तर समीक्षा पर बल । इसके आधार पर ही कार्मिकों को मान्यता, वेतन, पदोन्नति आदि प्रदान किये जायें । इससे समय सीमा में काम पूरा करने की प्रवृत्ति को बल मिलेगा ।

v. मितव्ययिता को हर स्तर पर सुनिश्चित करना । इस हेतु नकदी प्रणाली के स्थान पर प्रोद्भवन प्रणाली अपनाना ।

vi. नौकरशाही के स्थान पर समुदाय को सशक्त बनाना, ताकि समस्याओं का हल वे स्वयं शीघ्र कर सकें ।

vii. अधिकारों के केन्द्रीयकरण के स्थान पर सरकार में निचले स्तरों तक उनका विकेन्द्रीयकरण करना । इससे अधीनस्थों की क्षमता का पूरा उपयोग संभव होगा और सहभागी प्रबन्ध के लाभ मिलेगे ।

viii. अत्याधुनिक संचार प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल का हर क्षेत्र में बढ़ावा देना ।

ix. कौन सी सेवाएं राज्य देगा और कौन सी सेवाएं बाजार देगा इस बारे में सरकार की व्यवस्था खुली, पारदर्शी और निष्पक्ष हो ।

x. सरकारी निर्णयों में तार्किकता नहीं चल सकती क्योंकि उसे बहुत से दबावों के मध्य लेना पड़ता है ।

8-4- **पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)**

8-4-3-नवीन लोक प्रबंधन का प्रभाव (**Impact of New Public Management) -**नवीन लोक प्रबंधन परिप्रेक्ष्य का 1980 के दशक के मध्य तक पश्चिमी लोकतांत्रिक देशों की प्रशासनिक प्रणालियों पर मुख्य प्रभाव था। 1970 के दशक के तेल संकट से उत्पन्न हुए आर्थिक मंदी, सार्वजनिक क्षेत्रों में कटौती, सार्वजनिक व्यय नियंत्रण, उत्पादकता, दक्षता और अर्थव्यवस्था पर बल से सुधारों को गति मिली। पहलों के कार्यों को नई एजेंसियों के निर्माण, पुनर्संरचना, निजीकरण, संविदा आदि के रूप में प्रारंभ किया गया। कुछ मुख्य समस्याओं को हल करने के लिए जो प्रयास किए गए, उनमें उत्पादकता, बाज़ारीकरण, सेवा, विकेन्द्रीकरण और कार्य निष्पादन के लिए उत्तरदायित्व (Accountability for Performance) शामिल हैं। यूनाइटेड किंगडम में लोक प्रशासन प्रणालियों में 1979 में मुख्य परिवर्तन हुए जिसमें थैचर सरकार ने प्रमुख सुधार आरंभ किए। सरकार को उपायों को वापस लेना पड़ा जैसे मुक्त बाजार तथा सीमित सरकार नियंत्रण पुनः लागू हुए। सार्वजनिक क्षेत्र में अर्थव्यवस्था लाने की दृष्टि से बचत करने के लिए खास नीतियों, कार्यकलापों और कार्यों की जाँच करने के लिए विभागों के कार्य के विभिन्न पहलुओं की समीक्षाएँ लगातार की गईं। मंत्रिमंडल कार्यालय में सार्वजनिक सेवा के लिए एक कार्यालय बनाया गया, उसे सरकार के पुनर्गठन का निरीक्षण करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। पूर्व विकल्प समीक्षा' (Prior Options Review) नाम से

ज्ञात क्रियाविधि अपनाने के लिए भिन्न-भिन्न मंत्रालयों के विभिन्न कार्यकलापों की जाँच की गई। इसने सरकार के कार्यों का विश्लेषण करने का प्रयास किया, क्या किया जा रहा कार्य " आवश्यक था या इसे समाप्त किया जा सकता है या निजीकरण या विकेन्द्रीकृत किया जा सकता है। इस प्रयास ने महत्वपूर्ण परिणाम दिए । ब्रिटेन में केन्द्रीय स्तर पर 1982 में लागू किए गए वित्तीय हस्तान्तरण मुख्य पहल रही है। वित्तीय प्रबंधन पहल (Financial Management Initiative- FMI) के अधीन उन्नत वित्तीय प्रत्यायोजन के उपाय सुस्पष्ट उद्देश्य पर ध्यान केन्द्रित करते हुए वित्तीय नियंत्रण. उनकी तुलना में कार्य निष्पादन का मूल्यांकन और उन्हें प्राप्त करने में अंतर्निहित लागतों के मूल्यांकन पर बल दिया गया था । नवीन लोक प्रबंधन का आधारभूत सिद्धांत एक ही एजेंसी के बदले कार्य निष्पादन करने वाले बहुएजेंसियों में विकेन्द्रीकृत करना था। कार्यों के विशिष्ट सेट के निर्वहन के लिए "अगले उपाय' या कार्यकारी एजेंसियाँ बनाई गई। इनमें संबंधित मंत्रालय के उत्तरदायी सिविल कर्मचारी और कार्यपालक शामिल थे। प्रत्येक एजेंसी को करार के रूप में उद्देश्य और उत्तरदायित्व निर्धारित करने थे। मुख्य वित्तीय, सेवा और गुणवत्ता लक्ष्य कार्य योजना में निर्दिष्ट किए जाने थे। नवीन लोक प्रबंधन सार्वजनिक सेवाओं के प्रयोक्ताओं को स्पष्ट स्थान और प्रस्थिति देने का प्रयास करता है। जॉन मेजर की सरकार ने 1991 में नागरिकों के चार्टर के माध्यम से बाज़ार को राज्य के अधिक समीप लाने का प्रयास किया। नागरिक चार्टर कार्यक्रम ने सेवा मानकों का स्पष्ट सेट बनाने, प्रकाशित करने और उसके लिए कार्य करने पर जोर दिया। चार्टर निर्दिष्ट करता है:

- व्यक्तियों और अन्य संगठनों द्वारा प्रयुक्त सेवाओं के लिए कार्य निष्पादन के स्पष्ट मानक ।
- सेवाओं और उनकी लागत के बारे में सही सही सूचना
- विनम्र (Courteous) और उपयोगी सेवा

- क्रियाविधि से राहत की पहुँच (Access)

नागरिक चार्टर के आधारभूत सिद्धांत हैं: खुलापन, सूचना, पारदर्शिता, सुलभता (Accessibility) और सुधार। नागरिक चार्टर की स्थापना मंत्रिमंडल कार्यालय में की गई और कई चार्टर तैयार किए गए। यूनाइटेड किंगडम में 1992 के दौरान कई सेवाओं, जैसे स्ट्रीट लाइट, कचरा उठाना आदि को ठेके पर दिया जाना शुरु किया गया था। धीरे-धीरे कुछ अन्य क्षेत्रों, जैसे स्वास्थ्य और सामाजिक देखभाल सेवाओं में भी इसका विस्तार किया गया। सार्वजनिक स्वामित्व के उद्यमों का निजीकरण गैस, विद्युत्, जल आपूर्ति आदि क्षेत्रों में प्रारंभ किया गया। निजी उद्यमों के कार्यों, सेवा मानकों के निर्धारण, निजीकृत उपयोगी सेवाओं की कीमतों को मानीटर करने के लिए नियामक संगठन भी स्थापित किए गए हैं। परिवहन परियोजनाओं, सड़कों, अस्पतालों, संग्रहालयों आदि सहित नई सार्वजनिक सुविधाओं के वित्त पोषण में सरकारी-निजी भागीदारी भी आरंभ की गई थी। संयुक्त राज्य अमेरिका में डेविड ओस्बार्न (David Osborne) और टेड गेब्लेर (Ted Gaebler) (1992) द्वारा प्रतिपादित उद्यमकर्त्ता सरकार की अवधारणा ने नौकरशाही सरकार को उद्यमकर्त्ता सरकार में रूपांतरित करने के लिए एक विस्तृत प्रस्ताव तैयार किया जो बाज़ारोन्मुखी तरीके में नागरिकों की आवश्यकता के लिए उत्तरदायी है। बहुत से लोकतांत्रिक देशों, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका के नागरिकों में यह आम धारणा रही है कि लोक प्रशासन अक्षम और अपव्ययी है और संयुक्त राज्य अमेरिका में 1993 में संचालित सार्वजनिक राय मतदान द्वारा यह व्यक्त किया गया था। इससे अमेरिकी सरकार की संरचना की कार्य प्रणाली की आलोचनात्मक जाँच करना आवश्यक हुआ।

संयुक्त राज्य अमेरिका में 1993 में ओस्बॉर्न और गेब्लेर के नौकरशाही उद्यमकर्त्ता सरकार के विचारों के प्रभाव के अधीन तत्कालीन उपराष्ट्रपति अलगोरे ने राष्ट्रीय निष्पादन समीक्षा (National Performance Review - NPR) कार्यक्रम आरंभ किया था। इस रिपोर्ट का

शीर्षक थाः फ्रोम रेड टेप रिजल्ट्स' : क्रिएटिंग ए गवर्नमेंट दैट वर्क्स बैटर और कास्ट्स लेस"। इसका मुख्य उद्देश्य संघीय संगठनों की संस्कृति रूपांतरित करना रहा है, इसके लिए उन्हें कार्य निष्पादन आधारित और ग्राहकोन्मुखी बनाना था और सरकार का ऐसा नया प्ररूप निर्धारित करना था जो सस्ता और दक्षता से कार्य करे। उसने कुछ उपायों के समर्थन की पहचान की जिनमें अन्य के साथ-साथ, पहले ग्राहकों को रखना, सेवा संगठन, प्रतिस्पर्धा बनाना, परिणाम प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों का सशक्तीकरण और निर्णय करने की शक्ति का विकेन्द्रीकरण । राष्ट्रीय निष्पादन समीक्षा ने उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने में कुछ उपायों को प्रोत्साहित किया।

लालफीताशाही कतरन (Cutting Red Tape): लक्ष्य अनावश्यक लाल फीताशाही को कम करना और इसे प्राप्त करने के लिए कुछ उपाय सुझाए गए थे। उनमें शामिल हैं:

- बजट निर्माण की प्रक्रिया को सरल और कारगर बनाना
- लालफीताशाही कतरन (Cutting Red Tape): प्रभावकारी नियुक्ति, पदोन्नति, पुरस्कार, त्यागपत्र नीतियों को प्रोत्साहित करने के लिए कार्मिक नीति का विकेन्द्रीकरण और
- अनावश्यक नियमों का उन्मूलन ।

ग्राहकों को पहले रखना (Putting Customers First): इसने सार्वजनिक सेवाओं के प्रयोक्ता के रूप में नागरिकों को महत्व दिया और निम्नलिखित सुझाव दिए गए:

- अपनी समस्याओं को उठाने के लिए ग्राहकों को अवसर देना;
- सरकारी एकाधिकार समाप्त करना; और
- समस्याओं को हल करने के लिए बाजार रचना तंत्र का प्रयोग करना ।

परिणाम प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों का सशक्तीकरण (Empowering Employees to Get Results): इसका लक्ष्य उच्च गुणवत्ता परिणाम लेने में कर्मचारियों को निम्नलिखित द्वारा प्रोत्साहित करना है:

- कार्यकरण के विकेन्द्रीकृत तरीके
- परिणामों के लिए उत्तरदायित्व पर बल;
- शिक्षा तथा प्रशिक्षण और
- बल परिवेश में सुधार।

पिछले निर्णयों पर लौटना (Cutting Back to Basics): इसका अभिप्राय निम्नलिखित के माध्यम से सरकार के कुछ कार्यकलाप में लौटना है:

- सरकारी संस्थाओं की प्रभावकारिता में निवेश करना:
- लागत बचाने के लिए कार्यक्रमों का निरूपण;
- अनावश्यक कार्यों और क्रियाकलापों को समाप्त करना।
- सरकार की पुनर्विचार की पहल ने ऐसी सरकार बनाने का प्रयास किया जो बेहतर कार्य करे, लागत कम करे तथा बेहतर परिणाम प्राप्त करे।

पश्चिमी देशों, बहुत से राज्यों तथा स्थानीय सरकारों ने इन उपायों को अपनाया। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में ओरेगाँव (Oregon) ने स्वच्छ, निर्धारित स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, सार्वजनिक सुरक्षा आदि सुधारने के लिए स्पष्ट निर्धारित लक्ष्य स्थापित करने के लिए बेंचमार्क कार्यक्रम (Benchmark Programme) आरंभ किए। इससे परिणाम या प्रगति प्राप्ति पर नागरिकों को आश्वस्त करने में सरकारी एजेंसियाँ और सेवा संस्थाएँ समर्थ हो सकीं। अनुसंधान अध्ययन से ज्ञात होता है कि सरकार के व्यय में उल्लेखनीय बचत और

बहुत पदों तथा फील्ड अधिकारियों की संख्या में कटौती हुई है। राष्ट्रपति के प्रबंधन एजेण्डा में जार्ज बुश के अधीन सुधार जारी रहे। एजेण्डा का ध्यान मानव पूँजी, प्रतिस्पर्धात्मक आउट सोर्सिंग, उन्नत वित्तीय निष्पादन, विस्तारित इलैक्ट्रानिक सरकारी बजट तथा निष्पादन एकीकरण पर केन्द्रित रहा।ऑस्ट्रेलिया की सरकार में नवीन लोक प्रबंधन उपायों के अंगीकरण के उद्देश्य राज्य के कार्मिकों की संख्या घटाना और सेवाओं की व्यवस्था में बाजार की प्रक्रिया का प्रयोग करना था। कुछ कार्य की आउटसोर्सिंग की गई। स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं का आंशिक उपयोक्ता भुगतान आरंभ किया गया। सरकारी व्यापारिक उद्यमों का निजीकरण भी आरंभ किया गया। सभी सरकारी विभागों और उद्यमों में सेवा चार्टर लागू किए गए। निष्पादन आधारित वेतन प्रणाली और विकेन्द्रीकरण आदि के माध्यम प्रणाली को अधिक दक्ष, लचीला, प्रतिक्रियाशील, निष्पादनमुखी उत्तरदायी बनाने के लिए सार्वजनिक सेवा सुधार प्रारंभ किए गए। न्यूजीलैंड में उत्तरदायित्व, निष्पादनमुखी और ग्राहक सेवा सुनिश्चित करने के लिए सरकारी वाणिज्यिक उद्यमों का निगमीकरण सरकार और सिविल कर्मियों के बीच संविदात्मक संबंध प्रारंभ किए गए थे। वरिष्ठ अधिकारी सेवा (Senior Executive Service - SES) बनाई गई, इसमें सरकारी विभागों के मुख्य कार्यपालक और वरिष्ठ अधिकारियों का नया समूह शामिल था। उन्हें पाँच वर्ष की नवीकरणीय संविदा पर नियुक्त किया गया था। निगमीकरण के सामाजिक परिणामों की जाँच करने के लिए विशेषज्ञ सामाजिक प्रभाव इकाई (Social Impact Unit -SIU) स्थापित की गई। सामाजिक प्रभाव इकाई को ऐसी क्रियाविधि की पहचान का उत्तरदायित्व सौंपा गया जिससे केन्द्रीय सरकार संक्रमण के दौरान क्षेत्रों, समुदायों और नियोक्ता संगठन उन नीति क्षेत्रों से रचनात्मक ढंग से कार्य कर सके जहाँ सरकार सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के वैकल्पिक उपायों पर विचार करना आवश्यक समझे, जिन मुद्दों को सरकार गैर-वाणिज्यिक उद्देश्यों के रूप में समझती है, उन्हें संविदात्मक आधार पर फंड (निधि) दिया जाता है। स्थानीय सरकारी निकायों द्वारा बाहरी एजेंसियों को सेवाएँ संविदा पर देना भी पुनः आरंभ किया गया; उदाहरण के लिए, यद्यपि शिक्षा और स्वास्थ्य

सेवाओं को सरकारी निधि से वित्त पोषित किया जाता है फिर भी इन सेवाओं को संविदा पर दिया गया है। स्थानीय रूप से किए गए समझौते के अनुसार लक्ष्यों और आवश्यकताओं के रूप में व्यापक मार्गदर्शी सिद्धांतों का समावेश कर स्कूल के प्रबंधन के मामले में मंत्री और न्यासी मंडल (Boards of Trustees) के बीच चार्टर सूत्रबद्ध किए जाते हैं। न्यूजीलैंड में सुधारों का उद्देश्य क्रोड सार्वजनिक सेवा (Core Public Service) का आकार कम करना, राज्य स्वामित्व के उद्योगों का नया रूप स्थापित करना, नीति और सेवा वितरण कार्यों को पृथक करना, सार्वजनिक सेवा संगठनों के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन करना है।विकासशील देशों, जैसे भारत ने भी दाता एजेंसियों, जैसे विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा फंड (International Monetary Fund) द्वारा लगाई गई सहायता शर्तों के भाग के रूप में प्रबंधकीय सुधारों को लागू किया। उन्होंने सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के लिए कम बजट सहायता, विनिवेश, निगमीकरण और कुछ अन्य कार्यक्रमों को शामिल किया गया।

भारत में लोक प्रबंधन के नवीन आयाम -

- लोक कल्याणकारी व्यय को घटाया गया है।
- लोक उद्यमों का विनिवेश, निजीकरण एवं उनमें समझौता ज्ञापन, नवरत्न, महारत्न जैसी श्रेणियां प्रदान करने की प्रविधियां अपनाई गई है।
- विकेंद्रीकरण एवं निजी निकायों के द्वारा ठेका प्रथा से कार्य करवाना।
- राइट टू इनफार्मेशन जैसे प्रावधानों से जनता की भागीदारी एवं पारदर्शिता को प्रोत्साहन देना।
- ई-गवर्नेंस को लागू करने वाली गतिविधियों को रेलवे, स्वास्थ्य, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में लागू करना।
- सरकारी संगठनों का निगमीकरण करना।
- PPP, BOT आदि तकनीकों के माध्यम से सरकारी कार्यों को करवाना।

- नागरिक अधिकार पत्रों की घोषणा करना।
- प्रशासनिक सुधार के लिए आयोगों का गठन करना एवं प्रशासन में सुधार के लिए उनकी अनुशंसाओं को लागू करना।
- सुशासन से संबंधित अवधारणाओं को लागू करना।
- कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व को लागू करने हेतु नियम एवं विनियम बनाना।
- समावेशी विकास, धारणीय विकास की अवधारणाओं को लागू करना।
- स्मार्ट सिटी व स्मार्ट विलेज की अवधारणा को लागू किया गया है।

8-4-2-आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of New Public Management):
नवलोक प्रबन्ध की विचारधारा का विकास प्रारंभ में धीरे-धीरे हुआ, लेकिन अब एक अनिवार्यता के रूप में यह सभी सरकारों की आवश्यकता बन गयी है । निःसन्देह नवलोक प्रबन्ध आन्दोलन ने वैश्विक आर्थिक परिवर्तनों के अनुकूल सरकार और प्रशासन के नये स्वरूप को निर्धारित किया है और इसके अनेक सकारात्मक परिणाम भी सामने आये है । सरकार और नौकरशाही में अब कार्यकुशलता, मितव्ययिता, पारदर्शिता आदि को सुनिश्चित करने हेतु राष्ट्रों में अनेक ढांचागत और प्रक्रियागत परिवर्तन किये गये हैं । लेकिन बाजार की गूंज में गरीब, बेसहारा लोक उपेक्षित न रह जाएं, इस हेतु सरकारों को अधिक सतर्क और क्रियाशील रहने की मांग भी उठ रही है । इसका दूसरा पहलू चिंतनीय है । मोहित भट्टाचार्य के शब्दों में "नव लोक प्रबंध की अवधारणा मात्र केन्द्रीय मुद्दों से जुड़ी है और सतह की बातों की उपेक्षा करती है । इस कारण यह सन्देह पैदा होता है कि क्या सरकार मात्र “निजी” और "शक्तिशाली" हाथों का खिलौना बनकर रह जाएगी ।" विद्वान नव लोक प्रबंधन के निम्न प्रकार से आलोचना करते है-

- यह सिद्धांत समान रुप से विकसित और विकासशील देशो में लागू नहीं किया जा सकता है। यह विरोधाभासी प्रतीत होता है तथा सशक्तिकरण नकारता है।

- क्या बाजार सशक्तिकरण को बल देता है ना कि नागरिक सशक्तिकरण की बात करता है। यह किसी राज्य व्यवस्था के अंतर्गत नागरिकों को उपभोक्ता के रूप में देखता है जिससे प्रजातांत्रिक मूल्यों का हास होता है।
- यह अत्यधिक बाजारीकरण तथा निजीकरण पर बल देता है।
- नवीन लोक प्रबंध सरकार को बाजार का सही उपागम मानता है तथा व्यक्तिगत या निजी प्रशासन के मूल्यों तथा तकनीकों की प्रशंसा करता है जबकि लोक प्रशासन कभी भी निजी प्रशासन को अपना उपागम नहीं बना सकता है।आधुनिक सरकार विधि के शासन का अनुकरण करती हैं ना कि बाजार संयंत्र का।
- व्यवहारिक दृष्टिकोण से यह भी सत्य प्रतीत होता है कि अत्यधिक निजीकरण से संपत्ति के कुछ व्यक्तियों के हाथों में संकेंद्रण खतरा हमेशा बना रहता है।ऐसी व्यवस्था जहां कुछ है व्यक्तियों के हाथों में होती है वहां नौकरशाही।
- और सरकार दोनों अमीर या साधन संपन्न हाथों की कठपुतली बन जाते हैं तथा शोषण परक वातावरण उत्पन्न होता है।
- नवीन लोक प्रबंध ने केवल आर्थिक उद्देश्य परक व्याख्या पर बल दिया है तथा सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पहलू की अनदेखी की है।एक अच्छा प्रशासन वह होता है जो मानव की प्रत्येक गतिविधियो में सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश करता है।

8-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

I. **नवलोक प्रबन्ध या व्यवसायी सरकार के तीन मुख्य उद्देश्य कौनसे हैं** ।

II. (National Performance Review - NPR) कार्यक्रम का आरंभ कब किया गया।

III. (Structural Adjustment Programme) किन देशो में किया गया ।

8-6-सारांश (Summary)

सामान्य शब्दो में कहा जा सकता है कि नव लोक प्रबंधन का सिद्धान्त वैश्विकरण,उदारीकरण तथा निजीकरण के दौर में विल्सन और वेबर के सिद्धांतों को लोक प्रशासन के लिए असंगत करार दे रहा था। इस नए सिद्धान्त में सरकार व नौकरशाही की भूमिका में बदलाव की बात की गयी। लोक प्रशासन में नव लोक प्रबंधन का जन्म 1990 के दसक में हुआ। क्रिस्टफर हुड ने इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले किआ। इसे पोलिट के द्वारा 'प्रबंधवाद' कहा गया। सामान्यतः नव लोक प्रबंध समाज एवं अर्थव्यवस्था में राज्य की भूमिका को कम करना चाहता है तथा एक उद्यमशील सरकार की स्थापना करना चाहता है।सामान्य रूप से सरकार के तीन लक्ष्य होने चाहिए-कुशलता (Efficiency),अर्थव्यवस्था (Economy),प्रभावशीलता (Effectiveness)नव लोक प्रबंधन की विशेषताएं प्रबंधको के व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के स्थान पर परिणाम आधारित व्यवस्था पर बल दिया गया,यह शास्त्रीय नौकरशाही प्रवृति की जगह संगठनों,कार्मिक एवं रोजगरपरक सेवा शर्तों को अत्यधिक लचीला बनाता है,संगठनों एवं कार्मिक उद्देश्य को सफलता एवं प्रदर्शित मानको की कसौटी पर परखने पर बल दिया,सरकारी गतिविधियों को बाज़ार व्यवहारों का सामना करना चाहिए,सरकार के आकार को निजीकरण के माध्यम से छोटा करना चाहिए है तथा नीति के बजाय प्रबंधन पर बल तथा कार्यकुशलता का मूल्यांकन तथा सक्षमता पर ध्यान केंद्रित रखना,सार्वजानिक नौकरशाही को ऐसे अभिकरणों के रूप में समूहबद्ध करना जो "पैसा दो,प्राप्त करो" के आधार पर कार्य करे,प्रतियोगिता को बढ़ावा देने के लिए अर्ध बाजार व्यवस्था या ठेके/अनुबंध का प्रयोग,प्रबंधन की एक शैली को अपनाना जो उत्पादन लक्ष्यो सीमित अवधि अनुबंधों,धन संबंधी नवाचारों तथा प्रबंधन की स्वतंत्रता पर बल देती हो,लागत में कटौती,नव लोक प्रबंधन के केंद्रीय तत्व आदि है

8-7-सूचक शब्द (Key Words)

(i) **प्रबन्धन-** व्यवसाय एवं संगठन के सन्दर्भ में **प्रबन्धन** (Management) का अर्थ है - उपलब्ध संसाधनों का दक्षतापूर्वक तथा प्रभावपूर्ण तरीके से उपयोग करते हुए लोगों के कार्यों में समन्वय करना ताकि लक्ष्यों की प्राप्ति सुनिश्चित की जा सके। प्रबन्धन के अन्तर्गत आयोजन (planning), संगठन-निर्माण (organizing), स्टाफिंग (staffing), नेतृत्व करना (leading या directing), तथा संगठन अथवा पहल का नियंत्रण करना आदि आते हैं।

(ii) **नौकरशाही-**किसी बड़ी संस्था या सरकार के परिचालन के लिये निर्धारित की गयी संरचनाओं एवं नियमों को समग्र रूप से अफसरशाही, नौकरशाही या ब्यूरोक्रैसी (bureaucracy) कहते हैं।

(iii) **बाज़ारीकरण-**बाज़ार को बढ़ावा देने का कार्य,बाज़ारवाद की दृष्टि के अनुरूप ही व्यवस्था का संयोजन और संचालन ,व्यक्ति को उपभोक्ता मात्र के रूप में अनुकूलित करने की क्रिया ।

8-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

I. **नव लोक प्रबंधन का अर्थ व विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।**

II. **नव लोक प्रबंधन के उदय के कारणों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।**

III. **नवलोक प्रबंधन के मुख्या आधारों को स्पष्ट कीजिये ।**

IV. **नवलोक प्रबंध के प्रभावों की व्याख्या कीजिए।**

8-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

I. उत्पादकता (Productivity),बाज़ारीकरण (Markestisation),सेवा प्रधान (Service Orientation)

II. संयुक्त राज्य अमेरिका में 1993 में

III. अमेरिका तथा ब्रिटेन में

8-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशासन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा, डॉ हरी चंद्र शर्मा, त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशासन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशासन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) लोक के प्रशासन सिद्धांत विष्णु भगवान, विद्याभूषण एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited

Subject: Basics of Public Administration	
Course Code: PA102	Author: Dr. Parveen Sharma
Lesson No.: 9	Edited By: Dr. Shakuntla Devi
सार्वजनिक नीति: अवधारणा, प्रासंगिकता और दृष्टिकोण, सूत्रीकरण, कार्यान्वयन और मूल्यांकन (भारत के लिए विशेष संदर्भ) **Public Policy: Concept, relevance and Approaches, Formulation, Implementation and Evaluation (Special reference to India)**	

अध्याय की संरचना--

9-1 अधिगम के उद्देश्य (Learning Objectives)

9-2-परिचय (Introduction)

9-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

9-3-1 लोकनीति का अर्थ (Meaning of Public Policy)

9-3-2 लोक नीति की परिभाषाएं (Definitions of Public Policy)

9-3-3-लोक नीति की विशेषताएं(Characteristics of public policy)

9-3-4- लोकनीति के प्रकार(Typs of Public Policy)

9-3-5-लोकनीति की प्रकृति अथवा सिद्धांत (Nature or principles of public policy)

9-3-6-लोक नीति का महत्व (Significance of public policy)

9-4- **पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)**

3-4-3-सार्वजनिक नीति की अवस्थाएँ (Stages of public policy)

9-4-2-भारत में सार्वजनिक नीति (Public Policy in India)

9-4-2-3-भारत में नीति निर्धारण के अभिकरण (Agency for Policy Assessment in India)

9-4-2-2-भारत में लोक-नीति का विकास (Development of Public Policy in India)

9-4-2-3-भारत में नीति निर्धारण के को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Influencing Policy Making in India)

9-4-2-4-लोक नीति निर्माण प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने के लिए सुझाव (Suggestions for strengthening the public policy making process)

9-4-2-5-व्यवस्थित लोक-नीति की आवश्यकता (Need for systematic public policy)

9-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

9-6-सारांश (Summary)

9-7-सूचक शब्द (Key Words)

9-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

9-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answer to check your progress)

9-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

9-3-अधिगम के उद्देशय (Learning Objectives)

i. विद्यार्थियों को सार्वजनिक नीति की अवधारणा से अवगत करवाना।

ii. विद्याथियों को भारत में सार्वजानिक निति की अवधारणा ज्ञान करवाना।

iii. विद्याथियों को सार्वजानिक निति की आवश्यकता ,प्रासंगिकता से अवगत करवाना।

iv. विद्यार्थियों को लोकनीति के महत्व का ज्ञान करवाना।

9-2-परिचय (Introduction)

किसी भी देश में सरकार का स्वरूप चाहे जो भी हो राजतंत्र, कुलीनतंत्र, तानाशाही, लोकतंत्र, जनता की समस्याओं के निदान के लिए नीतियां अवश्य बनानी पड़ती है। नीति निर्माण की प्रक्रिया शासन की प्रम्मुख क्रियाओं में से एक है। नीतियां ऐसा प्रामाणिक मार्गदर्शक हैं जो प्रबन्धकों को योजना बनाने, कानूनी आवश्यकताओं के अनुकूल कार्य करने तथा वाछित उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता देती हैं। नीतियां प्रशासक को अपने क्रियाकलापों को निष्पादित करने के लिए एक निश्चित ढांचे के भीतर बनाये रखने में सहायता देती हैं। नीतियां उद्देश्यों को निश्चित अर्थ प्रदान करती हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि नीतियाँ वह है जो सरकार वास्तव में करती है, बजाय इसके कि सरकारें क्या करना चाहती हैं।

9-3 अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

9-3-1 लोकनीति का अर्थ (Public Policy)

लोकनीति का अर्थ- लोक प्रशासन का उद्भव राज्य द्वारा जनता के हितों की पूर्ति के लिए तथा लोक कल्याण व सेवा की दृष्टि से हुआ है न कि किसी व्यक्तिगत हितों की पूर्ति के लिए अर्थात इसमें 'लोक' शब्द से अभिप्राय सार्वजनिक या संपूर्ण जनता के हितों से संबंधित से है न की व्यक्तिगत हित से।

'नीति' शब्द से अभिप्राय उन कार्यक्रमों, गतिविधियों व योजनाओं की रूपरेखा से है जो किसी निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बनाई जाती हैं। अतः लोकनीति का तात्पर्य है सरकार द्वारा बनाई गई नीति। दूसरे शब्दों में जनता की विविध मांगों एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए सरकार को जो नीतियां बनानी पडती है उन्हें ही लोक नीतियां कहते है।
लोकनीति वह नीति है जिसके अनुसार राज्य के प्रशासनिक कार्यपालक अपना कार्य करते हैं। लोक प्रशासन, लोकनीति को लागू करने और उसकी पूर्ति के लिये लागू की गयी गतिविधियों का योग है।

लोकनीति नीति सामान्यतया अर्थव्यवस्था, पर्यावरण, शिक्षा, तकनीकी एवं सामाजिक नीतियों जैसे सामान्य शीर्षकों में वर्गीकृत की जाती है।

सार्वजनिक नीति की पहुँच व्यापक है, अत्यावश्यक से नगण्य तक। सार्वजनिक नीतियाँ आज प्रतिरक्षा, पर्यावरण सरंक्षण, चिकित्सकीय देखभाल एवं स्वास्थ्य, शिक्षा, गृह निर्माण, कराधान, महँगाई, विज्ञान और तकनीकी इत्यादि मूलभूत क्षेत्रों से संबंधित है।

इसका संबंध चाहे आन्तरिक घरेलू पक्षों से हो या बाह्य विदेशी मामले से। घरेलू क्षेत्र में, सार्वजनिक नीतियां सूक्ष्म स्तर के किसी विशिष्ट गाँव पर ध्यान केन्द्रित कर सकती है या किसी विशिष्ट खण्ड या समुदाय से संबंधित हो सकती है।

- सार्वजनिक नीति विदेशी मामले, शिक्षा, प्रतिरक्षा, कृषि, गृह निर्माण, शहरी विकास, सिंचाई आदि से जुड़ी हो सकती है। सार्वजनिक नीतियों का विस्तार अत्यन्त नगण्य पक्ष से लेकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्ष तक हो सकता है। लोक नीति सरकार के सामूहिक कार्यों का परिणाम होती है, अर्थात् यह सामूहिक रूप से जनप्रतिनिधियों (मन्त्रीगण और सांसद) एवं प्रशासनिक अधिकारियों के समन्वित प्रयासों का परिणाम होती है।

- लोक नीतियां सरकारी निकायों एवं सरकारी अधिकारियों द्वारा विकसित की जाती हैं, यद्यपि गैर सरकारी लोग और अभिकरण भी नीति निर्माण प्रक्रिया पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाल सकते हैं या उसे प्रभावित कर सकते हैं।
- लोक नीति स्वरूप में सकारात्मक या नकारात्मक दोनों हो सकती है। सकारात्मक रूप में इसमें किसी प्रश्न या समस्या के सम्बन्ध में किसी प्रकार की सरकारी कार्यवाही शामिल हो सकती है और नकारात्मक रूप में जहां सरकारी कार्यवाही की अपेक्षा की जाती है वहां कोई कार्यवाही न करने वाला सरकारी अधिकारियों का निर्णय शामिल हो सकता है।
- लोक नीति अपने सकारात्मक रूप में नियमों पर आधारित होती है और इसलिए यह प्राधिकारिक होती है। इसके पीछे कानूनी स्वीकृति होती है और इसलिए नागरिकों पर बाध्यकारी होती है।
- लोक नीति वह है जो सरकार वास्तव में करती है, बजाय इसके कि सरकारें क्या करना चाहती हैं।
- लोक नीति, लोक हित की पूर्ति के लिए सरकार के कार्यों का योग है।

9-3-2-लोक नीति की परिभाषा (Meaning of Public Policy)

- **थामस, आर. डाई (Thomas R. Dye**) - "लोक नीति वह है जिसके अंतर्गत या तो सरकार कुछ करती है या कुछ नहीं करना चाहती हैं।
- **राबर्ट आइस्टोन के अनुसार**, "सरकारी इकाई का अपने आस-पास की चीजों से सम्बन्ध लोकनीति कहलाती है।"
- **रिचर्ड रोज के शब्दों में,** "लोकनीति एक निर्णय नहीं है, बल्कि क्रिया की एक प्रक्रिया अथवा प्रतिरूप है।"

- **कार्ल जे. फ्रेडरिक के विचार में**, “लोकनीति निश्चित वातावरण के अन्तगत एक व्यक्ति, समूह अथवा सरकार की क्रियाविधि की प्रस्तावित प्रक्रिया है, जिसमें अवसर या बाधाएं आती हैं। जिन्हें नीति एवं उद्देश्य की पूर्ति अथवा लक्ष्य की प्रक्रिया के प्रयत्न के प्रयुक्त करती है अथवा दूर करती है।
- **टैरी के अनुसार,** “लोक नीति उस कार्यवाही की शाब्दिक, लिखित या विदित बुनियादी मार्गदर्शक है, जिसे प्रबन्धक अपनाता है तथा जिसका अनुगमन करता है।”
- **डिमाक कहते हैं**, “नीतियाँ सजगता से निर्धारित आचरण के वे नियम हैं जो प्रशासकीय निर्णयों को मार्ग दिखाते हैं।” नीति एक ओर तो लक्ष्य या उद्देश्य से और दसरी ओर परिचालन के लिए उठाए गए
- **कोचरान और मेलोन (Milone)** के अनुसार, 'लोक नीति', "लोक सरोकार के विषयों से निपटने के लिए सरकार द्वारा निर्धारित (निर्मित) निर्णयों और क्रियाओं का अध्ययन हैं
- **गॉय पीटर्स (Guy Peters)** के मतानुसार 'लोक नीति सरकार की गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण है, चाहे उन्हें सीधे या अभिकर्ताओं के माध्यम से क्रिया या कार्य द्वारा कार्यान्वित किया जाए, क्योंकि इसका नागरिकों के जीवन पर प्रभाव पड़ता है।
- **बर्कलैंड (Birkland)** ने किसी भी स्तर पर "सरकार लोगों की समस्याओं के बारे में क्या करने का इरादा रखती है, इस संबंध में उसके कथन को नीति के रूप में परिभाषित किया है।
- **'डेविड ईस्टन (David Easton)** ने लोक नीति को "समूचे समाज के लिए मूल्यों को आधिकारिक तौर पर आवंटन के रूप में परिभाषित किया है। राजनैतिक प्रणाली में लोकनीतियाँ स्थायी, प्रमुख अधिशासी, विधायकों, जजों प्रशासकों, पार्शदों, सम्राटों इत्यादि जैसे व्यक्तियों द्वारा निर्मित की जाती हैं, जिन्हें इस्टन ने प्राधिकारियों की संज्ञा दी है।
- **जे. डेवी (J. Dewy)** ने एक बार उल्लेख किया था कि लोक नीति लोगों और उनकी समस्याओं पर केंद्रित होती है।

9-3-3-लोक नीति की विशेषताएं(Characteristics of public policy)

लोक नीति निर्माण की निम्नांकित विशेषताएं हैं:

- सरकार नीतियों के माध्यम से अपनी इच्छा को व्यावहारिक रूप देती है। नीतियों के माध्यम से हमें शासन व्यवस्था की पहचान होती है। यदि कोई सरकार उदारवादी नीतियों का निर्माण करेगी तो हम कहेंगे यह उदारवादी सरकार या उदारवादी शासन व्यवस्था है। ठीक इसी प्रकार जो सरकार समाजवादी नीतियों का निर्माण करेगी उसे हम कहेंगे कि वो समाजवादी सरकार है।
- लोक नीति एक गतिशील प्रक्रिया है जो आवश्यकतानुसार परिवर्तित होती रहती है। जैसी आवश्यकता होती है यह अपना स्वरूप बदल लेती है।
- लोक नीति लोकहित पर आधारित होती है। इसलिए सदैव लोकहित को ध्यान में रखकर बनायी जाती है। लोक नीति का उद्देश्य ही लोक कल्याण है।
- लोक नीति भविष्य उन्मुख होती है। लोक नीति वर्तमान की अपेक्षा भविष्य पर अधिक केन्द्रित होती है तथा भविष्य से जुड़े उद्देश्य को पूर्ण करती है। लोक नीति दिशा निर्देश रेखांकित करती है।
- लोक नीति दिशा- निर्देश देती है ताकि समस्त प्रशासन इन निर्देशों का पालन कर लोक कल्याण के उद्देश्य को पूरा करे।
- लोक नीति विभिन्न संगठनों सरकारी एवं गैर सरकारी के सहयोग का परिणाम है। लोक नीति निर्माण में केवल सरकारी ही नहीं बल्कि गैर सरकारी संगठन भी भागीदार होते हैं
- लोक नीति परिणामोन्मुख होती है। लोक नीति सदैव इस तरह की बनायी जाती है जो परिणाम

9-3-4-लोकनीति के प्रकार (Typs of Public Policy)

लोक नीतियां विभिन्न प्रकार की होती हैं। मुख्यतः इनके प्रकारों का भेद अलग अलग मुद्दों पर आधारित है।

i. **तात्विक अथवा सारगत नीतियां-** तात्विक नीतियों का विकास समाज की आवश्यकतानुसार होता है। इन नीतियों का सूत्रीकरण संविधान के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए सामाजिक, आर्थिक कठिनाइयों को एवं समाज की नैतिक मांग को ध्यान में रखते होता है। ये नीतियां किसी वर्ग विशेष से सम्बन्धित न होकर पूरे समाज के हुए विकास से सम्बन्धित होती हैं। शिक्षा का प्रबन्ध एवं रोजगार के अवसर, आर्थिक स्थिरीकरण, विधि और व्यवस्था बनाये रखना आदि इसी का प्रमाण है।

ii. **नियन्त्रक नीतियां-** तात्विक नीतियों का सम्बन्ध व्यापार, व्यवसाय, सुरक्षा उपाय, जनोपयोगी आदि के नियन्त्रण से है। इस प्रकार का नियन्त्रण सरकार की ओर से काम करने वाली स्वतंत्र संस्थायें करती हैं। भारत में जीवन बीमा निगम, भारतीय रिजर्व बैंक, हिन्दुस्तान इस्पात, राज्य विद्युत परिषद, राज्य यातायात निगम, राज्य वित्तीय निगम आदि संस्था नियन्त्रक क्रियाओं में जुटी हुई हैं। इन सेवाओं से सम्बन्धित सरकार द्वारा बनायी गई नीतियां वह संस्थाएं हैं जो यह सेवाएं प्रदान करती हैं, नियंत्रक नीतियां कहलाती हैं।

iii. **वितरक नीतियां-**वितरक नीतियां सम्पूर्ण समाज के लिए न होकर केवल समाज के विशिष्ट वर्गों के लिए होती है। ये माल के अनुदान के क्षेत्र में लोक कल्याण अथवा स्वास्थ्य सेवाओं आदि के क्षेत्र में हो सकती है। जैसे- प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, खाद्य सहायता, बालवाड़ी पोशाहार, इन्दिरा महिला योजना, टीका शिविर आदि।

iv. **पुन: वितरक नीतियां-** इनका सम्बन्ध नीतियों की पुनः व्यवस्था से है जो मूल सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन लाने से सम्बन्धित होती है। कुछ कल्याण सेवाओं एवं सार्वजनिक

माल का वितरण समाज के विशिष्ट वर्गों से बेमेल होता है। अतः ऐसी सेवाओं एवं माल को पुनः वितरक नीतियों द्वारा सीमित किया जाता है।

v. **पूंजीकरण नीतियाँ-** पूंजीकरण नीति के अन्तर्गत राज्यों एवं स्थानीय सरकारों को यूनियन सरकार द्वारा आर्थिक सहायता प्राप्त होती है और यदि आवश्यकता हो तो यह सहायता अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों को भी प्रदान की जा सकती है।

9-3-5-लोकनीति की प्रकृति अथवा सिद्धांत (Nature or principles of public policy)

- एक नीति सामान्य या विशिष्ट, व्यापक या संकीर्ण, सहज या जटिल, सार्वजनिक या निजी, लिखित या अलिखित, स्पष्ट या धुंधली, संक्षिप्त या विस्तृत और गुणवत्ता सम्पन्न या संख्या सम्पन्न हो सकती है।
- एक लोकनीति अपने स्वरूप में सकारात्मक भी हो सकती हैं और नकारात्मक। अपने सकारात्मक स्वरूप में किसी खास समस्या से निपटने के लिए सरकार की किसी गुप्त कार्यवाही से जुड़ी रह सकती है, जिसके तहत उन विषयों पर कार्यवाही नहीं की जाती जिन पर सरकारी आदेश की जरूरत होती है।और नकारात्मक रूप में जहां सरकारी कार्यवाही की अपेक्षा की जाती है वहां कोई कार्यवाही न करने वाला सरकारी अधिकारियों का निर्णय शामिल हो सकता है।
- लोकनीति की एक विधिसम्मत गुणवत्ता होती है, जिसे नागरिक एक कानून के रूप में स्वीकार करते हैं। उदाहरणस्वरूप करों का अदा करना जरूरी है, नहीं तो व्यक्ति को जुर्माना देना पड़ सकता है या जेल जाना पड़ सकता है। लोक नीतियों की यह विधिसम्मत गुणवत्ता उन्हें निजी संगठनों से भिन्नता प्रदान करती है ।

9-3-6-लोक नीति का महत्व (Significance of public policy)

लोक नीति को किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है लोक नीति के महत्व को निम्नलिखित बंधुओं द्वारा समझा जा सकता है:-

- थामस, आर. डाई (Thomas R Dey) लोक नीति के अध्ययन से हमें इसके सृजन, विकास तथा परिणाम के विषय में जानकारी मिलती है जिससे हमारी राजनीति व्यवस्था व समाज के विषय में समझ विकसित होती है।
- लोक नीति का राजनीतिक तौर पर बहुत महत्व होता है किसी राज्य के लक्ष्य प्राप्ति के लिए लोक नीति का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।
- लोकनीति प्राथमिक तौर पर जनता तथा उनके समस्याओं से संबंधित होता है तथा लोक नीति के माध्यम से इन समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया जाता है।
- लोक नीति का उद्देश्य ऐसी नीतियों का निर्माण करना है जिससे समाज में लोगो के जीवन स्तर में वृद्धि व विकास हो।
- देश के विकास में लोक नीति की भूमिका; किसी देश के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए सुनियोजित लोक नीति का होना बहुत महत्वपूर्ण है।

9-4- पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further main Body of the Text)

9-4-3-सार्वजनिक नीति की अवस्थाएँ (Stages of public policy)

(1) नीति निरूपण- सार्वजनिक नीति प्रक्रिया में पहली अवस्था नीति-निरूपण है। सार्वजनिक नीति क्रियाकलापों का प्रस्तावित अनुक्रम है जो सार्वजनिक मांगों एवं समस्याओं पर विचार करता है।

(2) नीति व्याख्या- नीति-निरूपण का कार्य पूरा होने के साथ ही नीति में तकनीकी शब्द व वाक्यांश सम्मिलित हो जाते हैं। उन पदों व वाक्यांशों की व्याख्या बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। उनके अन्यथा गलत अर्थ लगाने पर नीति त्याज्य हो सकती है। अतः सरकारी कर्ता-धर्ताओं के लिए नीति की व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है।

(3) नीति शिक्षा- सार्वजनिक नीति की अगली अवस्था नीति-शिक्षा है। सरकार, जनसंचार के विभिन्न माध्यमों से, अपने द्वारा बनायी नीति के बारे में जनसामान्य को अवगत कराने का प्रयास करती है। लोगों को नीति के बारे में शिक्षित करना बहुत जरूरी है क्योंकि लोग इसकी पालना व आदर तभी करेंगे जब वे इसे समझ लेंगे।

(4) नीति क्रियान्वयन- नीति के निरूपण व व्याख्या करने के पश्चात् व जनसाधारण को इसके बारे में शिक्षित करने के पश्चात्, अगली अवस्था नीति को क्रियान्वित करने की होती है। यह भी एक कठिन अवस्था है क्योंकि जब तक नीतियों का उपयुक्त एवं सकरात्मक क्रियान्वयन नहीं होगा, नीतियों के निरूपण पर समरू व्यय करने का कोई लाभ नहीं होगा। क्रियान्वयन कार्य केन्द्रीय, राज्य व स्थानीय स्तर पर कई प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा किया जाता है।

(5) नीति नियन्त्रण- नीति प्रक्रिया की अंतिम अवस्था विभिन्न कर्ताओं व अभिकरणों के द्वारा निरूपित एवं क्रियान्वित की गई सावर्जनिक नीतियों पर नियंत्रण की होती है। सार्वजनिक नीतियों पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करना सरकार का कत्तर्व्य है ताकि वे उद्देश्य, जिनके लिए नीतियां बनाई गई थी, प्राप्त हो सकें और उनसे जनसाधारण पर्याप्त लाभान्वित हो सके।

सार्वजनिक नीतियों पर पूर्ण नियंत्रण रखने के लिए उचित एवं उपयुक्त प्रशासनिक तथा न्यायिक कार्यों की आवश्यकता होती है।

9-4-2-भारत में सार्वजनिक नीति

- भारत की पहली औपचारिक नीति वन नीति थी जो वर्ष 1894 में बनी थी।
- 1922 में लोक नीति का अध्ययन शुरु हुआ।

- प्रिंसिपल ऑफ मैनेजमेंट 1954 टेरी की कृति है। “**द पॉलिसी साइंस”** डेनियल लर्नर लासवेल की रचना है।

9-4-2-3-भारत में नीति निर्धारण के अभिकरण (Agency for Policy Assessment in India)

1 संविधान

2 संसद

3 मंत्रिमंडल

4 संघीय अभिकरण

- नीति आयोग
- राष्ट्रीय विकास परिषद्
- वित आयोग
- अन्तर्राज्य परिषद्
- क्षेत्रीय परिषदे

5 न्यायपालिका

6 दबाव समूह

7 प्रेस

8 परामर्श समितियां

9 राजनीतिक दल

9-4-2-2-भारत में लोक-नीति का विकास

भारत में लोक-नीति के अनुभव मोटे तौर पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

- ढांचागत हस्तक्षेप
- तकनीकी हस्तक्षेप, तथा
- गरीबी उन्मूलन हस्तक्षेप

ढांचागत हस्तक्षेप-स्वतंत्रता प्राप्ति के समय, जनता से, एक साफ-सुथरा व न्यायसंगत समाज कायम करने का, वायदा किया गया था। इस भावना को, हमारे संविधान में स्थापित, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में, स्थान दिया गया। चूंकि ध्येयों को वर्तमान सामाजिक-आर्थिक ढांचे के जरिये हासिल नहीं किया जा सकता, स्वयं इस ढांचे में ही परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। ढांचे में परिवर्तन, जैसा कि दलीलें पेश की जाती हैं, लोक नीतिगत हस्तक्षेप के माध्यम से संभव हो सकता है। भूमि, संपत्ति तथा दौलत के अन्य स्वरूपों में परिवर्तन से संबंधित नीतियों को, ढांचागत नीतियों की श्रेणी में रखा जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के काल में, एक महत्वपूर्ण ढांचागत हस्तक्षेप, भूमि सुधार की नीति रही है। इस नीति ने निश्चित रूप से, स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान आकार ग्रहण किया था, किन्तु स्वतंत्रता के बाद ही इसे, नियोजित सामाजिक-आर्थिक विकास के एक हिस्से के तौर पर, प्रभावी बनाया गया। भूमि सुधार के तहत बिचौलिया काश्तकारियों का उन्मूलन, पट्टा अधिकार, भूमि जातों की हदबन्दी का निर्धारण, फालतू भूमि का वितरण - भूमि जोतों को समेकित करना, संस्थागत ऋण तथा विपणन का विकास, कृषि संबंधी 1 करारोपण में सुधार, आधुनिक निवेशों की पूर्ति, इत्यादि शामिल है। इन उपायों को विभिन्न कानूनों के माध्यम से छोटे तथा सीमांत किसानों, बटाईदारों तथा भूमिहीन मजदूरों की मदद करने की दृष्टि से लागू किया गया।

यदि हम भूमि सुधार की नीति की परीक्षा करें, तो यह पायेंगे कि नीतियों पर अमल, जोकि ढांचे को स्पर्श करता है, भारी समस्याओं से लदा हुआ है। कोई भी नीति, जो कि ढांचे में परिवर्तन लाने का उद्देश्य रखती है, जैसे कि भूमि सुधार, एक समग्र कानून, व्यवस्थित क्रियान्वयन तथा निगरानी, नौकरशाही की प्रतिबद्धता तथा जनता की भागीदारी की मांग करती है। भूमि सुधारों पर विस्तृत अनुसंधान यह संकेत देते हैं कि इनमें से अनेक शर्तों की मौजूदगी का अभाव रहा है। भूमि सुधार की नीति के समर्थन में जनता को लामबंद करने के बहुत थोड़े से प्रयत्न ही किए गए हैं। राजनैतिक इच्छा के अभाव में कानूनों में भी कई चोर दरवाजे मौजूद रहे हैं। न्यायपालिका द्वारा मामलों की सुनवाई शीघ्रता के आधार पर नहीं की गई है। ऐसे कई मामलें हैं जो दशकों से न्यायालयों में लटके पड़े हैं। नौकरशाही ने भूमि सुधारों को लागू करने में रुचि नहीं दिखाई है, दरअसल, वह इनके लागू किए जाने तथा निगरानी रखने में करीब-करीब एक बाधक चट्टान ही बन गई है। नौकरशाही द्वारा अपने निजी लाभों तथा यथास्थिति कायम रखने में ही रुचि दिखाई गई है। ऊपर से, वे लोग जिन्हें इन उपायों से लाभान्वित होना था, सुधारों से संबद्ध कानूनों को अमल में लाने में भागीदारी नहीं कर पाये। इस प्रकार का अनुभव, लोक-नीति के अध्ययन के महत्व को रेखांकित करता है। इससे साफ जाहिर होता है कि लोक-नीतियाँ निर्धारित कर देने मात्र से, उदाहरणार्थ, भूमि सुधार नीति, कुछ भी हल होने वाला नहीं है, क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन के स्तर पर समस्याएं उठ खड़ी होती हैं, इन पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए और इनका गंभीर अध्ययन किया जाना चाहिए।

तकनीकी हस्तक्षेप-लोक नीतिगत हस्तक्षेप का दूसरा आयाम, तकनीकी हस्तक्षेप के रूप में, देखा जा सकता है। भारत जैसे विकासशील देशों में, तकनीकी हस्तक्षेप के उदाहरण, हरित क्रांति अथवा उद्योगों के आधुनिकीकरण के रूप में, देखे जा सकते हैं। तकनीकी हस्तक्षेप की आवश्यकता तब पैदा होती है, जब ढांचागत हस्तक्षेप की नीतियों से वांछित परिणाम प्राप्त

नहीं होते। हरित क्रांति की नीति ने कृषि क्षेत्र में कुल मिलाकर उत्पादन बढ़ाने में मदद की। इसने पर्याप्त जल आपूर्ति, श्रेष्ठ खाद का प्रयोग, खर-पतवार तथा नाशक कीटों पर प्रभावी नियंत्रण, आदि, के जरिये, खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि का मार्ग प्रशस्त किया । कृषि संबंधी पैदावार में चमत्कारिक बढ़ोत्तरी के बावजूद, कुल मिलाकर हरित क्रांति के नतीजे वाकई बहुत सकारात्मक नहीं रहे हैं, इसने क्षेत्रीय असंतुलन तथा वर्गों के बीच आय की असमानता की खाई को और अधिक चौड़ा कर दिया है। इसके फलस्वरूप काफी तनाव पैदा हुए हैं। हालांकि हरित क्रांति ने कृषि अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था से जोड़ा है, क्योंकि तकनीक का बड़ा हिस्सा पश्चिम से आया था, इसके नकारात्मक प्रभाव को नजरंदाज नहीं किया जा सकता। इसने अमीर तथा गरीब के बीच के फासले को बढ़ाया है। अतः यह आवश्यक है कि राज्य ऐसी नीतियां निर्धारित करे जो उच्चतर संतुलित विकास की दिशा में ले जाये। गंभीर असंतुलनों को, जोकि कभी-कभी तनाव तथा विनाश की दिशा में ले जाते हैं, दुरूस्त किया जाना चाहिए। यह परीक्षा करनी होगी कि वे कौन से उपाय हैं, जो इस प्रकार की नीतियों को सफल बनाने के लिए आवश्यक हैं। ये रुझान शासन तथा समाज के रूपान्तरण में, लोक-नीति के अध्ययन के महत्वपूर्ण स्थान को भी प्रदर्शित करते हैं।

गरीबी उन्मूलन हस्तक्षेप -हालांकि, स्वतंत्रता के समय से हमारी सभी पंचवर्षीय योजनाओं में, गरीबी तथा असमानता के उन्मूलन की जरूरत पर बल दिया जाता रहा है, किन्तु चौथी पंचवर्षीय योजना ही है, जिसमें गरीबी उन्मूलन पर वास्तव में स्पष्टवादी ढंग से ध्यान केन्द्रित किया था। इसी अवधि से, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के एक युग की शुरुआत हुई और इस तरह के कार्यक्रमों की एक के बाद एक बाकायदा पूरी की पूरी श्रृंखला लागू की गई। ढांचागत तथा तकनीकी हस्तक्षेप की विफलता ने, राज्य को उन आधारों पर कार्यक्रम लागू करने पर विवश कर दिया, जो गरीबी की समस्या पर सीधी चोट करते हों। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं व बच्चों के

विकास, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, आदि जैसे अनेकों कार्यक्रम विद्यमान हैं। ये सभी कार्यक्रम, गरीबी की रेखा से नीचे जीवन गुजारने वाले परिवारों की, अतिरिक्त आय व परिसंपत्तियों के निर्माण, रोजगार की व्यवस्था ऋण तथा आर्थिक सहायता द्वारा, सहायता करने के उद्देश्य से बनाए गए हैं। एक पर्याप्त तथा एकीकृत दृष्टिकोण के अभाव में, गरीबी-विरोधी कार्यक्रम, गरीबी के सवाल पर कोई उल्लेखनीय उपलब्धि हासिल नहीं कर पाये हैं। लाभार्थियों का क्षेत्र पर्याप्त नहीं है, लाभार्थियों को ऋण आदि प्राप्त करने में भी कठिनाइयाँ होती हैं। आमतौर पर, कार्यक्रम के लिए आवश्यक जिले में उपलब्ध अधिरचना संबंधी सुविधाओं का पता लगाने के लिए, कोई प्रारंभिक सर्वेक्षण नहीं किया जाता। लाभार्थियों को जारी कार्यक्रम के विषय में जानकारी नहीं होती। कार्यक्रम के क्रियान्वयन पर निगरानी रखने की पीछे लगे रहने की प्रक्रिया काफी कमजोर है।कार्यक्रम के क्रियान्वयन के विभिन्न स्तरों पर भ्रष्टाचार का बोलबाला है, लागत तथा समय का निर्धारित सीमा से आगे निकल जाना, कार्यक्रम की सफलता में बाधा खड़ी कर देता है। कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में मौजूद चोर-दरवाजे को हटाने के लिए, चाहे वे ढांचागत परिवर्तनों, तकनीकी अथवा सामाजिक परिवर्तनों किसी से भी संबंध रखते हों, नीति-प्रक्रिया का एक व्यवस्थित विश्लेषण बहुत जरूरी है। ढांचागत परिवर्तनों, तकनीकी विकास, सामाजिक व आर्थिक सुधारों के विषय में इसकी नीतियों की दृष्टि से, भारत का अनुभव संतोषजनक होने से काफी परे है। लोक-नीति का अनुभव यह इंगित करता है कि समूचे नीति चक्र में बदलाव लाने के लिए, काफी कुछ किया जाना जरूरी है। नीति-प्रक्रिया के प्रत्येक चरण पर स्पष्टतौर पर ध्यान दिया जाना होगा, प्रत्येक कमजोरी को पहचान कर उसे दूर करना होगा, निगरानी करने वाले निकायों को पुनः सक्रिया करने, जनता की भागीदारी को बढ़ाने, भ्रष्ट आचरण पर रोक लगाने, राजनैतिक इच्छा को सुदृढ़ करने तथा आवश्यक स्रोतों में वृद्धि, करने के लिए प्रयास करने होंगे।

ऐसी नीति जो मौजूदा व्यवस्था को भंग करती हो, न केवल किसी समस्या का हल नहीं कर सकती, बल्कि कई अन्य प्रकार की समस्याएं पैदा कर देती है, उदाहरण के रूप में, आरक्षण नीति को लिया जा सकता है। अनेक अन्य नीतियों के विपरीत, यह ऐसी नीति है, जिसकी जड़े स्वयं भारतीय संविधान में ही मौजूद है। संविधान निर्माताओं ने सोचा था कि आरक्षण गैर लाभान्वित तबकों के सदस्यों को, लोक सेवा तथा राजनैतिक सत्ता के ओहदों में प्रवेश करने की सुविधाएं उपलब्ध करा सकेगा। यद्यपि, राजनैतिक आरक्षण तथा नागरिक सेवा में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन जातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था को आमतौर पर, स्वीकार कर लिया गया है, किन्तु अन्य पिछड़ी जातियों (ओ.बी.सी.) के लिए आरक्षण विवादास्पद बन गया है। मंडल आयोग की सिफारिशों ने सामाजिक उपद्रव को बढ़ा देने वाले एक बड़े विवाद को भड़काति है। इस मामले पर गंभीर बहसें छिड़ गई। मामले को बार-बार न्याय पालिका में सुनाई के लिए लाया गया। न्यायपालिका अभी तक विवाद की परीक्षा कर रही है। इस तरह, कुछ नीतियां सामाजिक तनाव पैदा कर सकती हैं, विसंगतियां निर्धारण के स्तर, क्रियान्वयन के स्तर, मूल्यांकन के स्तर अथवा परिवीक्षण के स्तर पर भी हो सकती हैं। इस बारे में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए, कि किन पहलुओं/मुद्दों को नीतिगत ऐजेण्डा में पहुंचना चाहिए। नीतियों को लागू करते समय, होने वाले राजनैतिक सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनों का भी सावधानी पूर्वक अध्ययन किया जाना चाहिए। इसके लिए लोक-नीति के व्यवस्थित अध्ययन की जरूरत पड़ती है।

9-4-2-3-भारत में नीति निर्धारण के को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Influencing Policy Making in India)

सार्वजनिक नीतियाँ वे दृष्टिकोण होती हैं जिनके माध्यम से सरकार कुछ निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति करती है। यह सरकार द्वारा प्राप्त किए जाने वाले अंतिम लक्ष्य और इसे प्राप्त करने हेतु आवश्यक उपायों को निर्धारित करती हैं। विशेष रूप से सार्वजनिक नीतियाँ विधिक

संरचना के अनुरूप कुछ लक्ष्यों और उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सरकारी निर्णय और परिणामी कार्य होती हैं। **भारत में सार्वजनिक नीति निर्माण को बाधित करने वाले मुद्दे निम्नलिखित हैं:**

- **विचार और कार्रवाई में व्यापक समन्वय का अभाव:** उदाहरण के लिए, भारत में परिवहन क्षेत्रक का प्रबंधन पांच विभागों/मंत्रालयों द्वारा किया जाता है जबकि अमेरिका और ब्रिटेन में यह केवल एक विभाग का एक कार्य है।
- **नीति निर्माण और कार्यान्वयन के मध्य अत्यधिक अतिव्यापन:** कार्यान्वयन शक्तियों का मंत्रालयों के उच्च स्तर पर अत्यधिक संकेन्द्रण है। अत: जो लोग नीति निर्माण करते हैं उन्हीं के द्वारा इनका कार्यान्वयन भी किया जाता है, इसलिए कई बार नई नीति के रूप में यथास्थिति या बहुत कम परिवर्तनों को ही प्रस्तावित किया जाता है।
- **गैर-सरकारी इनपुट और सूचित विचार-विमर्श का अभाव:** कई क्षेत्रकों में सर्वोत्तम विशेषज्ञता सरकारी क्षेत्र के बाहर विद्यमान होती है। तथापि सरकार की नीतिगत प्रक्रियाओं और संरचनाओं के लिए बाहरी इनपुट प्राप्त करने का कोई व्यवस्थित साधन मौजूद नहीं है।
- **साक्ष्य आधारित अनुसंधान का अभाव:** अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी नीतिगत लक्ष्यों को निर्धारित करने के लिए विस्तृत क्षेत्र आधारित अनुसंधान करने हेतु सीमित संसाधन उपलब्ध हैं।
- **राजनीतिक रूप से प्रेरित नीतियां:** अनेक बार चुनावी आवश्यकताएं या अपेक्षाएं किसी नीति के लक्ष्यों और उद्देश्यों पर हावी होती हैं।
- **व्यवस्थित विश्लेषण का अभाव:** नीतिगत निर्णय प्रायः लागत, लाभ, आवश्यक आदान-प्रदानों और परिणामों के पर्याप्त विश्लेषण के बिना ही कर लिए जाते हैं।

9-4-2-4-लोक नीति निर्माण प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने के लिए सुझाव (Suggestions for strengthening the public policy making process)

- **समन्वय स्थापित करना (Reduction in fragmentation):** मौजूदा क्षेत्रकों में से एक से अधिक क्षेत्रकों का दायित्व प्रदान करने के साथ अपेक्षाकृत कम सचिवों की नियुक्ति करना। इसके परिणामस्वरूप नीति निर्माण के साथ-साथ कार्यान्वयन में अधिक समन्वय और एकीकरण सुनिश्चित हो सकेगा।
- **कार्यान्वयन से पृथक नीति निर्माण** ताकि कार्यान्वयनकर्ताओं की प्राथमिकताएं और हित लोक हित को प्रभावित न कर सकें।
- **सरकार के बाहर के क्षेत्रक से एकीकरण और ज्ञान प्राप्ति को प्रोत्साहित करना:** इस प्रकार की संरचनाओं के निर्माण की आवश्यकता है जो नीति-निर्माताओं के लिए गैर-सरकारी इनपुट और विषय वस्तु से संबंधित विशेषज्ञता की उपलब्धता सुनिश्चित कर सकें।
- **अंतर-क्षेत्रकीय प्रभाव का आकलन करना:** नीति-निर्माण प्रक्रियाओं और संरचनाओं के अंतर्गत अंतर-क्षेत्रकीय प्रभावों के बारे में सूचना एकत्र करना, आवश्यक आदान-प्रदानों का विश्लेषण तथा विभिन्न क्षेत्रकों पर प्रभावों के संबंध में समुचित विचार के पश्चात् उपलब्ध विकल्पों में से पूर्णतः सूचित विकल्प चयन को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, सरकार द्वारा सिविल सोसाइटी समूहों और जागरुक नागरिकों को नीति निर्माण और फीडबैक प्रक्रिया में शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही समय-समय पर निगरानी और मूल्यांकन करने वाली प्रक्रिया की स्थापना भी की जानी चाहिए।

9-4-2-5-व्यवस्थित लोक-नीति की आवश्यकता (Need for systematic public policy)

लोक-नीति प्रक्रिया की प्रकृति इतनी जटिल है कि एक व्यवस्थित लोक-नीति अध्ययन की आवश्यकता पड़ती रहती है। विकास-गतिविधियों में राज्य की बढ़ी हुई भूमिका, लोक-नीति के अध्ययन पर भी, बढ़े हुए रूप में, ध्यान केन्द्रित करने की जरूरत पेश करती है। अधिकांश विकसित तथा साथ ही साथ विकासशील देश, समय-समय पर, नीति के निर्धारण, क्रियान्वयन, परिवीक्षण तथा मूल्यांकन पर अनुसंधान कराते रहे हैं। लोक-नीति के निर्माण

को बदलते वातावरण, विज्ञान व तकनीक में प्रगति, तथा नये विकास रुझानों के साथ मिलाकर चलने पर जोर दिया गया है।लोक-नीति के अध्ययन का महत्व इसलिए भी है कि नीति निर्धारण के तंत्र में नये ज्ञान को शीघ्रता व सावधानी से मिला देने के लिए, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिति का विश्लेषण करना जरूरी है। इसमें उन परिवर्तनों को इंगित किया जाना चाहिए जोकि व्यावहारिक व जरूरी हों, और यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाये जाने चाहिए कि जब भी परिवर्तन लाना संभव अथवा आवश्यक हो, उन्हें लाया जाये। चूंकि लोक-नीति निर्धारण, मुख्यतः सरकारी संगठनों के प्रमुख दिशा-निर्देशों अथवा भविष्य के लिए निर्देशित कार्यों, का निर्णय करता है और औपचारिक रूप से वह हासिल करने का उद्देश्य रखता है जो कि जनहित में हो और श्रेष्ठतम संभव तरीकों से प्राप्त किया गया हो, अतः लोक-नीति के अध्ययन में सरकारी गतिविधियों के व्यवस्थित विश्लेषण की आवश्यकता होती है।

हालांकि लोक-नीति के अध्ययन क्षेत्र में, काफी सारा काम किया जा चुका है और किया जा रहा है, फिर भी अनुसंधान की वर्तमान स्थिति विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त है। हालांकि समस्याएं विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न हैं, किन्तु लोक-नीति के अध्ययन की वर्तमान स्थिति में कुछ समान चोर-दरवाजे को इंगित किया जा सकता है। नीतिगत अध्ययन पर उपलब्ध लेखों में किसी व्यवस्थित प्रयोगसिद्ध विश्लेषण का अभाव है, यही वजह है कि वे व्याख्यात्मक सामान्यीकरण के लिए कोई विश्वसनीय आधार प्रदान करने में सफल नहीं हुए हैं। नैतिक व्यवहार विज्ञान के सम्मुख उपस्थित एक प्रमुख कार्य-भार, नीति-निर्माण एवं काल्पनिक विचारों से जोड़कर, लाक-नाति निमाण क एक समग्र, व्यवस्थित तथा विश्वसनीय सिद्धान्त का सृजन करना है। इन दिनों गौण निर्णयों तथा अप्रधान नीतियों पर काफी कुछ कार्य किया जा रहा है किन्तु समग्र सैद्धान्तिक रूपरेखा के अभाव में इसमें से अधिकांश काम नुकसान उठा रहा है। लोक- नीति की बृहत् प्रणाली पर बहुत थोड़ा कार्य हुआ है।

लोक-नीति निर्माण के अध्ययन की वर्तमान स्थिति में अनेक कमियां मौजूद हैं, जिन्हें निम्न अनुसार सूत्रबद्ध किया जा सकता है:-

I. लोक-नीति निर्माण के मूल अवयवों के आधार पर काफी कुछ प्रयोगसिद्ध अनुसंधान तथा सैद्धान्तीकरण किया गया है, उदाहरणार्थ, व्यक्तिगत था छोटे समूह द्वारा निर्णय लिया जाना। सांगठनिक निर्णय प्रक्रिया पर भी कुछ कार्य किया गया है किन्तु अभी तक कुछ सामान्यीकृत निष्कर्ष ही प्राप्त हुए हैं। अधिकांश प्रयोगसिद्ध कार्य, विषय विशेष के अध्ययन के रूप में किया गया है। इस प्रकार, लोक-नीति अध्ययन की वर्तमान स्थिति में, स्थापित सामान्यीकृत निष्कर्षों का गंभीर अभाव है।

II. अधिकांश अध्ययन विनिबंधात्मक हैं, और ऐसी सैद्धान्तिक रूपरेखा का प्रयोग करते हैं जोकि नीति-निर्धारण के 'निर्णय लेने' वाले पहलू को उपस्थित नहीं करती। निर्णय करने की अवधारणाओं के संदर्भ में ऐतिहासिक सामग्री के विश्लेषण एवं पुनः विश्लेषण पर, प्रायः कुछ भी नहीं किया गया है, क्योंकि निर्णय लेने तथा नीति निर्धारण के दोनों सिद्धान्त तथा इतिहास का अध्ययन निर्णय लेने की तरफ उन्मुख विश्लेषण रूपरेखा को इतिहास के अध्ययन पर लागू करने के प्रयासों से, काफी बड़े पैमाने पर लाभान्वित हो सकता है।

III. कुछ नीति-निर्धारकों के लक्षणों तथा नीति निर्धारक. इकाइयों के व्यवहार पैटनों के अध्ययन समेत, लोक-नीति निर्धारण के विशिष्ट पक्षों के कुछ अध्ययन उपलब्ध हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर, लोक नीति-निर्धारण पर किए गए अधिकांश अध्ययनों में एक सैद्धान्तिक रूपरेखा का अभाव है और वे निर्णय लेने के सिद्धान्त पर वर्तमान कार्य से उल्लेखनीय ढंग से संबद्ध नहीं है। लोक-नीति के व्यवस्थित प्रयोगसिद्ध अध्ययन के लिए संभावित परिकल्पनीय रूपरेखा विकसित की गई है, किन्तु पुनः केवल कुछ अपवादों को

छोड़कर, ये परिकल्पनीय रूपरेखाएं वास्तविक नीति निर्माण के अध्ययन पर व्यवस्थित ढंग से लाग नहीं हुई है।

IV. लोक-नीति के अध्ययन से संबंधित अधिकांश सामग्री, आज भी जीवनियों, यादगारों, पत्रकारों की व्याख्याओं आदि में ही प्रकाशित मिलती है। दुर्भाग्यवश इस सामग्री की, नैतिक व्यवहार विज्ञान के विद्यार्थियों द्वारा प्रायः उपेक्षा की जाती है।

V. लोक-नीति निर्माण पर लगभग सभी प्रयोगसिद्ध अध्ययन, सुधारों की तरफ उन्मुख होने को स्पष्टतौर पर नकारते हैं, क्योंकि वे 'मल्यों से स्वतंत्रता' की अभिलाषा रखते हैं। इसके अलावा, उपलब्ध अध्ययनों में से अधिकांश आधुनिक देशों से संबंधित हैं। उनमें से मात्र थोड़े से ही विकासशील देशों में नीति निर्माण पर केन्द्रित हैं अथवा लोक-नीति अध्ययन के लिए सीधे तौर पर उपयोगी सामग्री को सम्मिलित किए हुए हैं।

VI. उच्च-स्तरीय लोक नीति निर्माण प्रक्रियाओं पर बहुत थोड़े से अध्ययन किए गए हैं। उच्चतर सरकारी निकायों में निर्णय प्रक्रिया गोपनीयता के घेरे में रहती है और अनुसंधान के मकसद से इसमें किसी तरह का प्रवेश वर्जित रहता है। इन गंभीर नीति निर्धारण गतिविधियों का सबसे महत्वपूर्ण सूचना स्रोत, अन्दरूनी लोगों द्वारा लिखी - पुस्तकें तथा कभी-कभार होने वाली सार्वजनिक सुनवाइयां ही हैं।

VII. लोक-नीति निर्माण समेत जटिल घटनाओं का अध्ययन करने के लिए अनुकूल अनुसंधान उपाय, बहुत कम विकसित हैं। आज सर्वाधिक जटिल प्रणालियां अधिकांशतः नैतिक व्यवहार व्यवहार विज्ञान का मुख्य धारा के बाहर रहत हुए हा प्रबंध विज्ञान, कार्यक्रमं अनुसंधान तथा प्रणाली विश्लेषण के नये अन्तक्षेत्रों द्वारा विकसित हुई हैं। यहां तक कि, लोक-नीति निर्माण का एक निर्णय प्रक्रिया के रूप में एकीकृत विवेचन, जिसे जो कुछ थोड़े बहुत आंकड़े उपलब्ध हैं उन पर आधारित किया जा सके, अभी शुरू किया जाना है।

उपरोक्त उल्लिखित समस्याएं किसी एक देश विशेष की अथवा कुछ देशों की ही अनोखी समस्याएं नहीं हैं। सभी जगह परिस्थिति यही है। भारत में भी यह दुखद स्थिति जारी है।

इस तरह, हम कह सकते हैं कि मौजूदा समस्याओं को देखते हुए लोक-नीति के अध्ययन को काफी लम्बा रास्ता तय करना है। यह देखना होगा कि 'सामान्यीकरण तुलनात्मक विश्लेषण तथा सैद्धान्तीकरण को प्राप्त करने पर और अधिक बल दिया जाये। लोक-नीति प्रक्रिया के गहन अध्ययन के लिए अधिकाधिक अनुसंधान संगठनों की स्थापना करनी होगी। यह निश्चय करना बहुत जरूरी है कि नवीन ज्ञान के समर्थ लाभों को उचित इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है और उन वज्रपातों को, जोकि उनके दुरुपयोग से पैदा हो सकते हैं, कैसे रोका जा सकता है। इसके लिए बेहतर नीति निर्धारण की जरूरत है जोकि पुनः बेहतर लोक-नीति अध्ययनों की जरूरत की मांग करता है।सबसे अधिक आवश्यकता इन बातों की है कि एक व्यवस्थित पुनर्निवेश की शिक्षा, नीति निर्माण प्रणाली के मूलत् लक्षणों के विषय में बृहत् नीति बनाना, नीतिगत रणनीतियों का सुस्पष्ट निर्णय, कार्यकारी ध्येयों का विस्तार, विकल्पों की खोज तथा लोक-नीति निर्माण के मूल्यांकन तथा पुननिर्धारण हेतु विशेष इकाइयां आदि मौजूद हों। यह सब तभी संभव है, यदि लोक-नीति प्रक्रिया पर संपूर्ण रूप में समुचित अनुसंधान शुरू किया जाये और इसके परिणामों को आगामी नीति प्रक्रिया में जोड़ लिया जाये।

3-5-स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

i. भारत की पहली औपचारिक नीति वन नीति किस वर्ष बनी थी।
ii. आरक्षण से संबंधित उस आयोग का नाम क्या था जिसके लागू होने पर भारत में उसका विरोध हुआ।
iii. “सरकारी इकाई का अपने आस-पास की चीजों से सम्बन्ध लोकनीति कहलाती है।” यह परिभाषा किसने दी
iv. नीति निर्माण संघीय अभिकरण कौनसे हैं

3-6-सारांश (Summary)

लोकनीति (Public Policy) का अर्थ- लोकनीति में लोक का अर्थ सरकार सें है। अतः लोकनीति का तात्पर्य है सरकार द्‌वारा बनाई गई नीति। दूसरे शब्दों में जनता की विविध मांगों एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए सरकार को जो नीतियां बनानी पडती है उन्हें ही लोकनीति कहते है। सार्वजनिक नीति की पहुँच व्यापक है, अत्यावश्यक से नगण्य तक। सार्वजनिक नीतियाँ आज प्रतिरक्षा, पर्यावरण सरंक्षण, चिकित्सकीय देखभाल एवं स्वास्थ्य, शिक्षा, गृह निर्माण, कराधान, महँगाई, विज्ञान और तकनीकी इत्यादि मूलभूत क्षेत्रों से संबंधित है। सार्वजनिक नीतियां सूक्ष्म स्तर से वृहत स्तर तक अनेक पक्षों के साथ व्यवहार करती है। इसका संबंध चाहे आन्तरिक घरेलू पक्षों से हो या बाह्य विदेशी मामले से। घरेलू क्षेत्र में, सार्वजनिक नीतियां सूक्ष्म स्तर के किसी विशिष्ट गाँव पर ध्यान केन्द्रित कर सकती है या किसी विशिष्ट खण्ड या समुदाय से संबंधित हो सकती है। इसी तरह सार्वजनिक नीतियाँ स्थानीय, राज्य या राष्ट्रीय सरकार से संबंधित हो सकती है। सार्वजनिक नीति विदेशी मामले, शिक्षा, प्रतिरक्षा, कृषि, गृह निर्माण, शहरी विकास, सिंचाई आदि से जुड़ी हो सकती है। सार्वजनिक नीतियों का विस्तार अत्यन्त नगण्य पक्ष से लेकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्ष तक हो सकता है। इसमें किसी राष्ट्रीय नेता की स्मृति में राष्ट्रीय अवकाश घोषित करने और इसके तहत सैकड़ों करोड़ रूपये की मजदूरी देना भी सम्मिलित है। यह अनेक रूपों में अभिव्यक्त होती है यथा कानून अध्यादेश न्यायालय के निर्णय कार्यकारी आदेश आदि **लोकनीति (Public Policy)** सकारात्मक होती है क्योंकि यह सरकार की चिंताओं और विशिष्ट समस्याओं के प्रति उनकी गतिविधि को स्पष्ट करती है। **लोकनीति (Public Policy)** के पीछे कानून की शक्ति से मान्यता होती है। नकारात्मक रूप में **लोकनीति** को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है कि यह किसी मुद्दे पर सरकारी अधिकारियों द्‌वारा कोई कदम नहीं उठाने के रूप में भी अभिव्यक्त हो सकती है। लोक नीति की प्रकृति सरकारी व निजी दोनो है। लोक नीति में लोक का अर्थ है सरकारी।

9-7-सूचक शब्द (Key Words)

i. **लोकनीति-** लोकनीति अथवा 'सार्वजनिक नीति' (Public policy) वह नीति है जिसके अनुसार राज्य के प्रशासनिक कार्यपालक अपना कार्य करते हैं

ii. **नीति**-उचित समय और उचित स्थान पर उचित कार्य करने की कला को नीति (Policy) कहते हैं।

iii. **सार्वजनिक-**वह सेवा या कार्य, जो देश के सब लोगों के लिए है और मुख्य रूप से सरकार द्वारा आयोजित किया जाता है। इसमें स्कूल, अस्पताल, टेलीफोन सेवाएं आदि शामिल हैं।

iv. **सैद्धांतिक** -किसी चीज़ या वास्तविक घटनाओं के व्यावहारिक उपयोग के बजाय विचारों या सिद्धांतों पर आधारित हैं।

v. **संकेंद्रण**-केंद्र की ओर ले जाना ,संपूर्ण शक्ति या ध्यान को किसी एक ही बात या विषय पर लाकर लगाना।

9-8-स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

i. सार्वजनिक नीति की अवधारणा की व्याख्या कीजिए ।

ii. भारत में सार्वजानिक निति अवधारणा के विकास का वर्णन कीजिए।

iii. सार्वजानिक निति की आवश्यकता ,प्रासंगिकता की व्याख्या कीजिए।

iv. लोकनीति के महत्व को समझाइए व वर्तमान लोक नीति के दोषो को कैसे दूर कर सकते है।

v. व्यवस्थित लोक-नीति की आवश्यकता की व्याख्या कीजिए।

9-9-उतर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

i. वर्ष 1894 में बनी थी

ii. राबर्ट आइस्टोन

iii. मंडल आयोग

iv. नीति आयोग ,ष्ट्रीय विकास परिषद् ,वित आयोग ,अन्तर्राज्य परिषद् ,क्षेत्रीय परिषदे

9-10. संदर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तके (References/Suggested Readings)

(i) डॉ.बी.एल. फाड़िया, भारत में लोक प्रशाशन साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(ii) डॉ. प्रभु दत्त शर्मा, डॉ हरी चंद्र शर्मा, त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ,लोक प्रशाशन सिद्धांत एवं व्यवहार कॉलेज बुक डिपो नई दिल्ली

(iii) डॉ. के. के. पुरी, भारतीय प्रशाशन भारत प्रकाशन, जालन्धर

(iv) डॉ.बी.एल.फाड़िया, भारतीय प्रशाशन, साहित्य भवन पब्लिकेशन.

(v) विष्णु भगवान, विद्याभूषण लोक के प्रशाशन सिद्धांत एस चाँद एंड कंपनी नई दिल्ली

(vi) Rumki Basu. Public Administration, sterling publishers private limited